दी जाये राज-पण्डित! ब्राह्मणों को भरपूर दान देकर विदा कर ... राज-मन्त्री! अतिथियों को कोई कष्ट न होने पाये सखे चन्द्रवरदाई!"

आज्ञा देकर दिल्ली नरेश महल में गये और महामन्त्री किमास ने पुन विधिवत् यज्ञ सम्पन्न कराया। यज्ञ की समाप्ति पर ब्राह्मणों को राजकोष से धन दिया गया, विद्वानों की प्रशस्तियाँ गाई गई तथा समस्त राज्याधिकारियों और प्रमुख नागरिकों का एक विशिष्ट ब्रह्म-भोज हुआ। यज्ञ, दान और भोज के बाद सबकी यथावत व्यवस्था में जब छुट्टी पाकर राज-सेवक अपने अपने स्थान पर चले गये तो माहिलराज को साथ लेकर किमास अपने गरिमाशाली सुसज्जित कक्ष में आये।

आज यह कक्ष चाहे खण्डहर हो पर उस समय वहाँ हर समय पूर्णिमा की चाँदनी खिली रहती थी। जरी के गलीचे, रेशम के आवरण, शीशों की दीवारें, सोने के स्तवक, हीरे और मोती की झालरें, और भी न जाने क्या क्या इस कमरे को दमका रहे थे, और दमक जाते थे इनकी कौंध से मिट्टी के वे मनुष्य भी जो मनुष्य से राजा कहलाने लगते हैं।

जगमगाते हुए शीशमहल में जब माहिलराज को बैठाकर महामन्त्री अपने आसन पर बैठ गये तो उन्होंने शान्ति से कहा— "आपके आगमन से दिल्ली धन्य हो जाती है। कहिये और कहाँ कहाँ होते हुए आ रहे हैं?"

माहिल— अपनी नगरी से जब निकल पडते हैं तो फिर आश्रम आश्रम घूमते ही फिरते हैं। एक बार जब निकल पडे तो फिर कहीं वर्षों बाद घर पहुँच पाते हैं।

किमास— आपको तो वरदान है कि आज यहाँ और कल वहाँ

घूमते रहना! ईश्वर ने आपको महर्षि नारद का साक्षात् अवतार बना कर भेजा है। जान पडता है महोबे से सीधे दिल्ली चले आ रहे हैं।

माहिल— नही महामन्त्री! महोबे से कन्नौज, और कन्नौज से माण्डो होता हुआ दिल्ली आ रहा हूँ।

किमास— तो महोबे के हाल-चाल तो आपने बता दिये, अब यह भी बता दीजिये कि कन्नौज और गढ माण्डो के क्या हाल है?

माहिल— माण्डो राज्य लज्जा से पृथ्वी मे आँखे गडाये मरा पडा है।

किमास— लज्जा, मृत्यु! क्यो, क्या हुआ उसको?

माहिल— जब से महोबे से माण्डो नरेश करियाराय की हार हुई है तब से वह लज्जा से मरा जा रहा है।

किमास— पर युद्ध के बाद तो माण्डो और महोबे मे सन्धि हो गई थी, करियाराय की कन्या का विवाह महोबे के सामन्त ऊदलसिंह से हो गया था न!

माहिल— यह न कह कर यह कहिये महामन्त्री! कि महोबे वाले माण्डवगढ की लडकी को जबरदस्ती उठा कर ले गये थे! महोबे वालो ने अपनी वीरता और तलवार के जोर से रक्त की वह धार बहाई कि जो सम्भवत रावण ने जब ऋषियो का वध किया था तब भी नही बही थी। आल्हा और ऊदल ने अपने भाइयो और सामन्तो सहित माण्डो पर चढाई कर के जो रक्तपात किया वह इतिहास मे सबसे बडे पाप के नाम से पुकारा जायेगा। लूट-मार का जो नगा नाच करियाराय के राज्य मे हुआ है वह देख कर तो भूखे गिद्ध, चील और कौवे भी नाक सिकोड लेते हैं। आश्चर्य तो यह है कि शक्ति-सम्पन्न बडे बडे राजा यह सब खुली आँखो देखते रहे है, किसी की इतनी सामर्थ्य न हुई कि इस अत्याचार को अपनी तेज तलवार से रोक दे!

किमास— आज किसी ने रक्तपात नही रोका तो क्या हुआ, उस दिन किसका आँसू गिरा था जब राजा परमाल के वीर सामन्त आल्हा और ऊदल के धर्मवीर और कर्मवीर पिता यशराज तथा बच्छराज पर रात मे आक्रमण कर उनके सर काट कर अपने दुर्ग की चोटी पर लटकाये थे ।

माहिलराज— माण्डवगढ और महोबे का तो पुराना वैर चला आ रहा है, यह आग बुझने वाली नही है, पर इस समय तो माण्डो के दीपक बुझ ही गये। किसी के बुझे दीपक कौन जलाता है!

किमास— किसी की आग मे कौन कूदता है माहिलराज! जो जैसी करता है वैसी ही भरता है। जब महोबे पर करियाराय ने चढाई की थी क्या तब उसने सोचा था कि परिणाम मे एक दिन तेरी भी यही दुर्दशा होगी जो तू महोबे की कर रहा है! महोबे की लूट, महोबे का हत्याकाण्ड, महोबे का क्रन्दन चाहे इतिहास के पृष्ठो से मिट गया हो पर महोबे की उन विधवाओ की आँखो में अभी तक जीवित है जिनके सर काट काट कर करियाराय ने अपने किले के दरवाज़ो पर टाँगे थे। तब इन आल्हा और ऊदल को माँ एक स्तन से दूध पिलाती थी और दूसरे से चिपटा कर इनके पिता को याद करके रोती थी! महोबे के सामन्त यशराज और बच्छराज एक दिन इसी करियाराय के हाथो बध किये गये थे।

बहुमूल्य रत्न, बेजोड अश्व, 'नौलखे हार' जैसे अमूल्य हीरक हार, और पस्तावत हाथी जैसे बेजोड हाथी लूटते समय करियाराय ने यह नही सोचा था कि इसका फल भी किसी दिन भोगना पडेगा।

माहिल— वह तो फल भोग चुका, अब दिल्ली फल भोगने के लिये प्रस्तुत हो जाये! महोबे वालो का बढता हुआ बल इस देश मे न जाने क्या क्या करेगा!

दीवारे गिर गई। एक को दूसरे से लडवाना इस नारद के लिये खेल है। इधर दिल्ली की दशा गर्वान्ध रावण जैसी है, जो अपनी उन्नति की चोटी पर आँख मीच कर नृत्य करना चाहता है। यदि पैर फिसल गया तो वही चोटी जिसको तुंवर वश पैरो से दवाये खडा है अपने नाती के पतन पर खिलखिला कर हँसेगी।

दिन प्रति दिन के वढते हुए झगडे देश को दुर्वल वनाते जा रहे है, और उधर अरवो के भारतवर्ष पर आक्रमण ने हमे वहुत पहले से चुनौती दे रखी है। सोने के भूखे यवन इस पवित्र देश को घूर घूर कर देख रहे है। अव से चार सौ वर्ष पूर्व इमामुद्दीन मुहम्मद विन कासिम अरव से सिन्ध तक अपना झण्डा गाड गया, और इन अरवो ने अपनी शक्ति की नृशसता से कितने ही वौद्ध हिन्दुओ को वलात् मुसलमान वना डाला! जवरदस्ती वढती हुई मुस्लिम सस्कृति तुर्क वादशाहत के नाम से हमारी ओर और आगे वढी। ये लुटेरे रावी तक आ पहुँचे है, भारत का पश्चिमोत्तर भाग आज विदेशियो के अधिकार मे है। इन लुटेरो का नगा नाच सोमनाथ जैसे कितने ही खण्डित मन्दिरो की मिट्टी मे आज भी चित्रित है। कही फिर से कोई महमूद गजनवी हमारे ही पापो से उदय न हो जाये।

यह देश अपनी आत्महत्या करना चाहता है, अपने हाथो से अपना गला घोटने के लिये इसने अपने पजे चौडे कर लिये है।"

किमास आप ही आप कुछ और भी सोचते पर सामन्त चामुण्डराय के प्रवेश ने महामन्त्री के चिन्तन को वही रोक दिया। सैनिक अभिवादन के साथ पधारते हुए सामन्त चामुण्डराय ने कहा— 'जान पडता है महामन्त्री किसी गहरी चिन्ता मे डूबे हुए थे, मैंने आकर सम्भवत उनके चिन्तन मे वाधा डाली!'

किमास— नही सेनाध्यक्ष! चिन्ता अवश्य थी, पर साथ ही

तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा भी कर रहा था। इस समय यदि मैं और भी कुछ सोचता तो ईश्वर की कृपा से मुझे वह भी अवश्य मिल जाता।

चामुण्ड— सेवक को मान देने के लिये ही महामन्त्री ऐसा कह रहे है। आज्ञा कीजिये दास को क्यो स्मरण कर रहे थे ?

किमास— इससे पहले हम सामन्त से जानना चाहते है कि विश्राम के समय मे उन्होने यहाँ आने का कष्ट किस लिये किया ?

चामुण्ड— आराम का समय राजाओ के लिये होता है महामन्त्री ! मै तो राज्य का एक सिपाही हूँ, जिसे तलवारो की झनकार और घोडे की पीठ कभी सोने नही देती। रात दिन युद्ध-क्षेत्र मे जागते रहना ही चामुण्डराय के भाग्य मे लिखा है। आजकल तो चिन्ता के कारण अवसर मिलने पर भी नीद नही आती।

किमास— चिन्ता और महापराक्रमी चामुण्डराय को ! जो अपनी तलवार से विधि का विधान भी बदल सकता है उसके मुँह से हम आज हारे शब्द क्यो सुन रहे है ?

चामुण्ड— समय की गति देखकर चिन्ता हो गई है। न जाने बाँयी आँख क्यो फडकने लगी ! मुझे भविष्य धुधला दिखाई दे रहा है महामन्त्री !

किमास— यह हृदय की दुर्बलता है वीर सामन्त ! भविष्य मनुष्य के हाथ मे रहता है, वह उसे जैसा चाहे बना दे।

चामुण्ड— सोचता मैं भी यही हूँ, किन्तु जब देखा कि हिन्दू सस्कृति पर बलात् इस्लाम के अत्याचार हुए और हम कुछ न कर सके तो हिम्मत टूट गई। जब देखा कि मन्दिरो को तोडते हुए विधर्मी रावी तक आगये और हम अपने घर मे शान्ति के साँस लेते रहे तो स्वयम् पर सन्देह हो उठा। जब देखता हूँ कि तलवारे बात बात मे आपस मे ही टकरा जाती है तो भविष्य को अन्धकारमय कह कर खिन्न हो उठता हूँ।

किमास— हमें गर्व है कि हमारे सामन्त अपने देश की बड़ी चिन्ता रखते हैं। मैं भी यही सब सोच रहा था जो तुम मुझसे कहने आये हो। जो हो चुका वह तो हो चुका, अब सोचना तो यह है कि भविष्य हमारे वश में रहे। विधर्मियों का एक भी पग हमारी भूमि पर न आने पाये।

चामुण्ड— विधर्मियों का पैर अब आगे तब बढ़ेगा जब चामुण्डराय इस दुनिया में न होगा। विधर्मी मेरे शव पर पैर रख कर ही मेरे देश में घुस सकते हैं।

किमास— धन्य हो सामन्त! तुम्हारे होते हुए किसकी शक्ति है कि जो हमारे देश की मिट्टी तक छू सके। हाँ, तो सेना की इस समय क्या दशा है?

चामुण्ड— सेना की दशा बहुत अच्छी है महामन्त्री! बार बार के युद्धों में खपने के बाद भी इस समय हमारे पास तीन लाख लड़ाके वीर सिपाही हैं।

किमास— आपस के झगड़ों में लड़ लड़ कर सात लाख में से तीन लाख सेना रह गई! सच है, घर की लड़ाई से कौन नहीं मिटा! महाभारत यदि न हुआ होता तो आज हम सारे संसार में दिग्विजयी राजा होते। तो यह सेना अजमेर और दिल्ली की मिलाकर है न सेनाध्यक्ष!

चामुण्ड— हाँ महामन्त्री!

किमास— अपनी सीमाओं की सुरक्षा की क्या स्थिति है?

चामुण्ड— सीमा पर हमारे वीर सेनानायकों के संरक्षण में सेना लगी हुई है।

किमास— और हमारे गुप्तचर?

चामुण्ड— वे भी जहाँ तहाँ काम कर रहे हैं।

किमास— हमे अपने सामन्तो पर विश्वास है, पर गुप्तचर विभाग की ओर से संतोष नही। हमे हर सूचना तब मिलती है जब शत्रु विजयी हो जाता है। हम तब जागते हैं जब पडोसी का घर जला कर आग हमारे घर मे घुस आती है।

चामुण्ड— दु ख तो यही है कि पडोसी का घर जलता रहता है और हम तमाशा समझ कर देखते रहते हैं। तभी तो विधर्मी रक्तपात का नगा नाच करते हुए रावी तक आ पहुँचे।

किमास— और इधर महाराज को न जाने क्या हो गया है कि राज-काज की ओर पहले जैसा ध्यान ही नही देते।

चामुण्ड— महल की चारदीवारी ने न जाने उन पर क्या जादू कर रखा है।

इतने मे सामने से सेविका ने प्रवेश करते हुए कहा— 'महामन्त्री को परम विदुषी देवीजी ने तुरन्त बुलाया है।'

कह कर सेविका चली गई। महामन्त्री किमास ने गमनात्मक दृष्टि से सामन्त चामुण्डराय की ओर देखा। सामन्त यह कहते हुए चले गये कि 'फिर दर्शन करूँगा।'

और महामन्त्री ने महल मे जाने के लिये पग बढाया। पर जैसे ही वे कुछ आगे बढे वैसे ही उन्होने राजमहल के वातायन से झाँकती हुई एक दिव्य सुन्दरी को अपनी ओर देखते हुए देखा। महामन्त्री को अपनी ओर देखते ही वह देवागनाओ को भी लज्जित करने वाली देवी मुस्कराई तथा आँखो से महामन्त्री को अपनी ओर बुलाने का सकेत करने लगी।

महामन्त्री की आँखे उस रूपवती की ओर थी और पैर महल की ओर बढे जा रहे थे।

२

राजदुर्ग के रम्य रगमहल मे महारानी चन्द्रागदा को अस्त व्यस्त दशा मे देख दिल्लीपति पृथ्वीराज ने प्यार से कहा— चाँदनी पर अँधेरी क्यो छा रही है ?

चन्द्रागदा ने दिल्लीपति पतिदेव के चरण पकड मुँह की ओर देखते हुए उत्तर दिया— चाद पर जब काली बदलियो की बिजली दमक उठती है तो चाँदनी तमावृत हो जाती है स्वामी !

पृथ्वीराज— पहेली क्यो बूझा रही हो राजरानी ! या हमारी रानी कविता तो नही करने लगी !

चन्द्रागदा— नही राजाधिराज ! जिस पर परिवार का उत्तर-दायित्व होता है उसे कविता कहा सूझ सकती है ! कविता यदि करती तो राजमहल मे न रह कर गगा किनारे किसी झोपडी मे दीपक के सहारे जल जल कर ज्योति देती । भला मै राजरानी होकर सन्यासिनी क्यो बनने लगी हूँ !

पृथ्वीराज— तो इस प्रकार महारानी हमें उपालम्भ दे रही है !

चन्द्रागदा— मैं भला ताना देकर आपको नाराज क्यो करूँ ! उपालम्भ देना तो उनको शोभा देता है जिनके इंगित पर महाराज अपना सब कुछ न्यौछावर कर डालते हैं। मेरा ताना तो प्राणनाथ के वक्ष मे तलवार की तरह चुभता जायेगा। क्या चन्द्रागदा कभी ऐसा भयकर पाप कर सकती है !

पृथ्वीराज— बोली पर बोली न मारो राजरानी ! स्पष्ट कहो हम तुम्हारे लिये क्या करे ?

चन्द्रागदा— आप मेरे लिये कुछ करेंगे तो तब जब करनाटक की वह अप्सरा आपको कुछ करने देगी। जाने दो इन बातो को, मेरी चिन्ता छोडो ! इस समय तो मैंने आपको इसलिये कष्ट दिया है कि राजकुमारी बेला के ब्याह के लिये क्या सोचा ? वह पढ लिख कर सयानी हो गई है। वयस्क बालिका माता-पिता की गोद में खेलती हुई नागिन की तरह होती है जिसका भूल मे भी कोई दाँत यदि छू गया तो पीढियो तक के माथो पर वह काला कलंक लग जायेगा जो हजार मृत्यु से भी कही बडा होता है।

पृथ्वीराज— तो इसके लिये इतनी चिन्ता ! महारानी मूर्च्छित हो गई !

चन्द्रागदा— चिन्ता मूर्च्छा और चिता दोनों मे बडी होती है महाराज ! जवान बेटी की चिन्ता मनुष्य को चिता से कम नही जलाती।

पृथ्वीराज— क्या बताऊँ चन्द्रागदे ! एक चिन्ता हो तो, हजार चिन्ता सर पर सवार रहती है। राज-कार्यों से अवकाश ही नही मिलता। घोडे की पीठ से पैर हटता नहीं कि नयी ललकार सुनाई देने लगती है। एक युद्ध समाप्त नहीं होता, दूसरा सामने आ जाता है।

चन्द्रागदा— शत्रुता यदि मित्रता मे बदल दी जाये तो कितना अच्छा हो स्वामी! जो देश शान्ति चाहता है उससे शत्रुता मिटा देनी चाहिये!

पृथ्वीराज— चाहता मैं भी यही हूँ पर सफलता नही मिलती। जब कोई तलवार निकाल कर सामने आ जाता है तो चौहान का हाथ भी तलवार की मूठ पर चला ही जाता है। बहुत बार चाहा कि सारे भारतीय हिन्दू राजाओ का एक ऐसा सघ बना लिया जाये जिससे आपस की शत्रुता मिट जाये और विदेशी शत्रु कांपता रहे, किन्तु न जाने क्यो अन्य राजा दिल्ली के वैभव से जलते है।

चन्द्रागदा— मनुष्य जो चाहे और वह न हो, यह कभी नही हो सकता। हम सोचते है पर करते नही। हमारे अधूरे निर्णय का ही फल यह होता है जो आप कह रहे है। मनुष्य हिसा के सामने यदि थोडा भी नम्र हो जाये तो हिंसा स्वयम् झुक जाती है। दूसरे को झुकाने के लिये मनुष्य को स्वयम् झुकना पडता है। चलो छोडो राजनीति की यह चर्चा इस समय! हाँ, तो बताइये कि बेला के ब्याह के लिये क्या सोचा?

पृथ्वीराज— सोच रहा हूँ कोई कडी शर्त लगाकर सब राजाओ के पास नारियल भेज दूँ, जो शर्त पूरी कर देगा उसी राजकुमार से राजकुमारी का विवाह कर दिया जायेगा।

चन्द्रागदा— नही नाथ! विवाह के लिये शर्त लगा कर हमारे देश की बहुत सी शक्ति व्यर्थ ही व्यय हो जाती है। विवाह पीछे होता है, पहले तलवारे बजने लगती है। बहुत बार हाथ मे कगन पीछे बंधता है, पहले कितनी ही चूडियाँ फूट लेती है। विवाह के लिये रक्तपात का नृत्य अब बन्द कर दो! रजपूती की गरिमा इसमे नही कि अपने ही सम्बन्धियो के सर काट काट कर परीक्षा ली जाये। वीरता की परीक्षा

ही लेनी है तो सब एक होकर विधर्मी सत्ता के विरुद्ध युद्ध घोषित कर के लो! बहुत से अवसर आये और आयेंगे जब तलवारो की चमचमाहट और वीरो के वक्ष तन सकते है। टूटे हुए मन्दिरो को फिर से ऊँचा उठाने के लिये अपनी तलवारो को सुरक्षित रखो! देश मे घुसे हुए शत्रुओ को निकालने के लिये अपनी तलवारें जितनी भी तेज कर सकते हो करो! पर माथो की रोली पोछ कर दुलहनो के चाँद से मस्तको पर लहू न छिडको! सुहागिनो की माँग मे रक्त का सिन्दूर भरना रजपूती के नाम पर गौरव नही, कलक है। अपनी तलवार से अपना ही गला काटना वीर-कर्म नही होता राजाधिराज! इतिहास के पन्नो पर हमारी मूर्खता के आँसू बिखरे पडे हैं। धूल-धूसरित दुर्गों की मिट्टी से चिताओ का चीत्कार फूट रहा है। विवाह के समय मातम का गीत बहुत गाया जा चुका, अब यह वीभत्स प्रथा समाप्त होनी चाहिये।

पृथ्वीराज— लेकिन इससे दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान के माथे पर कलक लग जायेगा। ससार यह समझेगा कि पृथ्वीराज डर गया। तुम्हारी भावना को घमण्डी राजा कायरता कह कर पुकारेंगे। यह कभी नही हो सकता कि दिल्ली की सेना को हराये बिना कोई राजकुमारी बेला का डोला ले जाये। बेला का ब्याह उसी राजकुमार से होगा जो दिल्ली की अजेय सेना को पराजित करेगा।

चन्द्रागदा— यह क्या कह रहे हो दिल्ली नरेश! भारत के किस राजा में शक्ति है जो आपकी तलवार के सामने तलवार उठाने का साहस करे! दिल्ली की अजेय सेना के समक्ष अड कर कौन मृत्यु के मुँह मे जाना चाह सकता है!

पृथ्वीराज— जो मृत्यु से डरता है हम राजकुमारी का हाथ उसको नही पकडा सकते। हमने जो कह दिया है वही होगा। बेला के विवाह

के लिये यह शर्त घोषित की जाती है कि जो दिल्ली की अजेय सेना को हरा सके वही राजकुमारी बेला से विवाह करेगा।

चन्द्रागदा— तो इसका अर्थ यह हुआ कि विवाह के बहाने हम एक नये युद्ध को निमन्त्रण दे रहे हैं। गर्वीले राजपूत राजाओ मे से कोई न कोई आपकी इस चुनौती को स्वीकार कर ही लेगा और फिर तलवारो की वह झनकार सुनाई देगी जिसमे किसी दुलहन का वैधव्य ताल दे रहा होगा। जान पडता है या तो आप बेटी को विवाह से पहले विधवा बनाना चाहते हैं या उसे आजन्म कुंवारी रखेंगे!

पृथ्वीराज— चाहे राजकुमारी कुंवारी रहे, चाहे दिल्ली की ईंट से ईंट बज जाये, पर चौहान की आन नही गिर सकती। मैं चाहे भले ही मिट जाऊँ पर रजपूती को आँच नही आने दूंगा। और तुम इतनी क्यो डर रही हो वीर रानी! यह तो वीरो के लिये शुभावसर होता है, परीक्षा मे जो पूरा नही उतर सकता वह परिणाम का सुख कैसे भोग सकता है! तलवारो की खनखनाहट जब तक कानो मे नही पहुँचती तब तक राजपूत के कान नही खुलते। दो दो हाथ होते रहे तो जिन्दगी बनी रहती है। विवाह के अवसर पर परीक्षा का अर्थ वीरता की श्रीवृद्धि है।

चन्द्रागदा— आप इसे वीरता की श्रीवृद्धि कह कर सन्तोष मानिये किन्तु मेरी परिभाषा मे तो यह अज्ञानता का गहरा अन्धकार है, जो हम पर मृत्यु बन कर छाने की प्रतीक्षा मे सुनहरी स्वप्न दिखा रहा है।

पृथ्वीराज— हर बात के दो अर्थ होते हैं। हर मनुष्य अपनी भावना के अनुसार अभीष्ट अर्थ लगा लेता है।

चन्द्रागदा— ससार मे उत्तर भी हर बात का है, पर वह यथार्थ है या नही यह समय के गर्भ मे ही छिपा रहता है। आपके सामने मेरी

ही लेनी है तो सब एक होकर विधर्मी सत्ता के विरुद्ध युद्ध घोषित कर के लो! बहुत से अवसर आये और आयेंगे जब तलवारो की चमचमाहट और वीरो के वक्ष तन सकते हैं। टूटे हुए मन्दिरो को फिर से ऊँचा उठाने के लिये अपनी तलवारो को सुरक्षित रखो! देश मे घुसे हुए शत्रुओ को निकालने के लिये अपनी तलवारें जितनी भी तेज कर सकते हो करो! पर माथो की रोली पोछ कर दुलहनो के चांद से मस्तको पर लहू न छिडको! सुहागिनो की माँग मे रक्त का सिन्दूर भरना रजपूती के नाम पर गौरव नही, कलक है। अपनी तलवार से अपना ही गला काटना वीर-कर्म नही होता राजाधिराज! इतिहास के पन्नो पर हमारी मूर्खता के आँसू बिखरे पडे है। धूल-धूसरित दुर्गो की मिट्टी मे चिताओ का चीत्कार फूट रहा है। विवाह के समय मातम का गीत बहुत गाया जा चुका, अब यह वीभत्स प्रथा समाप्त होनी चाहिये।

पृथ्वीराज—लेकिन इससे दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान के माथे पर कलक लग जायेगा। ससार यह समझेगा कि पृथ्वीराज डर गया। तुम्हारी भावना को घमण्डी राजा कायरता कह कर पुकारेगे। यह कभी नही हो सकता कि दिल्ली की सेना को हराये बिना कोई राजकुमारी बेला का डोला ले जाये। बेला का व्याह उसी राजकुमार से होगा जो दिल्ली की अजेय सेना को पराजित करेगा।

चन्द्रागदा—यह क्या कह रहे हो दिल्ली नरेश! भारत के किस राजा मे शक्ति है जो आपकी तलवार के सामने तलवार उठाने का साहस करे! दिल्ली की अजेय सेना के समक्ष अड कर कौन मृत्यु के मुँह मे जाना चाह सकता है!

पृथ्वीराज—जो मृत्यु से डरता है हम राजकुमारी का हाथ उसको नही पकडा सकते। हमने जो कह दिया है वही होगा। बेला के विवाह

के लिये यह शर्त घोषित की जाती है कि जो दिल्ली की अजेय सेना को हरा सके वही राजकुमारी वेला से विवाह करेगा।

चन्द्रागदा— तो इसका अर्थ यह हुआ कि विवाह के बहाने हम एक नये युद्ध को निमन्त्रण दे रहे हैं। गर्वीले राजपूत राजाओ मे से कोई न कोई आपकी इस चुनौती को स्वीकार कर ही लेगा और फिर तलवारो की वह झनकार सुनाई देगी जिसमे किसी दुलहन का वैधव्य ताल दे रहा होगा। जान पडता है या तो आप वेटी को विवाह से पहले विधवा बनाना चाहते हैं या उसे आजन्म कुंवारी रखेंगे !

पृथ्वीराज— चाहे राजकुमारी कुंवारी रहे, चाहे दिल्ली की ईंट से ईंट वज जाये, पर चौहान की आन नही गिर सकती। मैं चाहे भले ही मिट जाऊँ पर रजपूती को आँच नही आने दूंगा। और तुम इतनी क्यो डर रही हो वीर रानी ! यह तो वीरो के लिये शुभावसर होता है, परीक्षा मे जो पूरा नही उतर सकता वह परिणाम का सुख कैसे भोग सकता है ! तलवारो की खनखनाहट जब तक कानो में नही पहुँचती तब तक राजपूत के कान नही खुलते। दो दो हाथ होते रहे तो जिन्दगी बनी रहती है। विवाह के अवसर पर परीक्षा का अर्थ वीरता की श्रीवृद्धि है।

चन्द्रागदा— आप इसे वीरता की श्रीवृद्धि कह कर सन्तोष मानिये किन्तु मेरी परिभाषा मे तो यह अज्ञानता का गहरा अन्धकार है, जो हम पर मृत्यु बन कर छाने की प्रतीक्षा मे सुनहरी स्वप्न दिखा रहा है।

पृथ्वीराज— हर बात के दो अर्थ होते हैं। हर मनुष्य अपनी भावना के अनुसार अभीष्ट अर्थ लगा लेता है।

चन्द्रागदा— ससार मे उत्तर भी हर बात का है, पर वह यथार्थ है या नही यह समय के गर्भ मे ही छिपा रहता है। आपके सामने मेरी

बुद्धि है तो बहुत छोटी, पर इतना अवश्य निवेदन करती हूँ कि अपनी इस घोर घोषणा पर एक बार पुन विचार करने की कृपा करें!

पृथ्वीराज— चौहान के मुँह से जो शब्द निकल गया वह पत्थर की लकीर है। बेला का विवाह उसी मे होगा जो दिल्ली की अजेय सेना को पराजित कर देगा। अच्छा रानी, हम थकान उतारने के लिये कुछ मनोरजन चाहते हैं!

चन्द्रागदा-- राजा पर बडा भार होता है, सचमुच आप बहुत श्रम करते हैं। कुछ विश्राम कर लीजिये, मुझे चरण चापने का अवसर मिल जायेगा।

पृथ्वीराज— तुम बहुत चतुर हो चन्द्रागदा! लेकिन इस समय हम करनाटकी के महल मे जाना चाहते हैं। हमारी इच्छा उसका नृत्य और सगीत सुनने की हो रही है। पता नही उसमे कैसा प्रणय, नृत्य और सगीत है कि अपने एक ही स्पन्दन से हमारी सारी थकान उतार देती है।

चन्द्रागदा— मद का यही गुण होता है महाराज! कुछ क्षणो के के लिये मनुष्य उसमे दुखो को भूल जाता है किन्तु अगले ही क्षणो में जब उसका मदालस उतरता है तो थकान पहले से शतगुणी हो जाती है।

पृथ्वीराज— मैं न तो दार्शनिक हूँ और न तर्क-शास्त्री जो तुम्हारे तर्को को तोड सकूँ। चौहान तो मनुष्य है जिसका धर्म शक्ति और सुख में जीवन बिताना है।

चन्द्रागदा— नही मानते तो जाओ, पर यह कहे बिना नही चूकूंगी कि जिसे आप अमृत समझ रहे है वह विष है।

चौहान उत्तर में मुस्कराते हुए घमण्ड से बोले— जो विष नही पी सकता, अमृत मे उसकी मृत्यु हो जाती है। दुनिया मे सभी स्वाद लेने चाहियें।

कहते हुए चौहान चल पडे और उमगो भरे उस रगमहल मे आये जिसमे सोलह शृगार किये करनाटकी प्रियतम की प्रतीक्षा मे आँखे लगाये अगडाइयाँ ले रही थी।

प्रियतम को प्रवेश करते देखते ही उसने बडी बडी आँखो को उनकी ओर बढाते हुए कहा— आज कहाँ रीझ गये थे जो इतनी देर लगा दी? प्रतीक्षा करते करते हमारी आँखे दुखने लगी।

पृथ्वीराज— प्रतीक्षा के बाद जो प्रणय मिलता है, वह तो मुक्ति से भी सुखद होता है प्रिये! प्रतीक्षा से तुम्हारी मदभरी आँखो मे उत्सुकता की जो मदिरा लहरा रही है उसने तो मुझे मद्यप बना दिया है।

करनाटकी— बिना पिये ही झूमने लगे!

पृथ्वीराज— अपनी आँखो को तो कुछ नही कहती और हमें शराब का दोष लगा रही हो! तुम्हे देख कर तो जड भी झूम उठते है देवागने! फिर हम तो चातक ठहरे। न जाने तुमने कौनसा इन्द्रजाल फैलाया है कि हम तो ऐसे फँसे है जो लाख यत्न करने पर भी नही निकल सकते।

करनाटकी— हर पुरुष कुछ दिन नयी स्त्री से प्राय इसी तरह की बाते करता है।

पृथ्वीराज— मुझे तो हर पुरुष का अनुभव नही, सम्भवत तुम ऐसी सर्वव्यापक हो जो सबके हृदय को पढ लेती हो! पर मै यहाँ स्त्री पुरुष के स्वभाव पर शास्त्रार्थ करने नही आया। मै तो रूप का रस पीने आया हूँ। नृत्य की झनकार सुनने के लिये मेरे कान कामी की तरह आतुर हो रहे है। आंखे तुम्हे पुतलियो पर बिठा कर पलक बन्द कर सोना चाहती हैं। अधर अधरामृत पान के प्यासे है। वक्ष तुम्हारे आलिंगन के लिये मचल रहा है। भुजाए तुम्हे लपेट लेना चाहती है। आओ, और बढती हुई बेल की तरह मुझसे चिपटती चली जाओ!

करनाटकी आँखो को और भी नशीली कर चौहान को छू कर फूलो की शैया पर जा लेटी, मानो फूलो की गोद मे मेघो के पंख फैला चाँद उतर आया हो।

चौहान की रग रग मे बिजली के स्पन्दन होने लगे। उनके रोम रोम मे तूफान जाग उठा। प्रणय की आँधी उनकी आँखो मे गिरते हुए मेघो की तरह दौड उठी। अग अग मे रोमाच इस प्रकार फूट पडा जिस प्रकार वर्षा से शून्य फुहार युक्त हो जाता है। न जाने रूप और यौवन मे क्या होता है जिसकी ओर योगी भी खिचे चले जाते हैं। पृथ्वीराज चुम्बक की तरफ लोहे जैसे खिचे चले गये।

अग्नि और घृत की सन्धि से प्रणय मुहूर्त सुरभित हो उठा। ऐसी प्यास मचली और ऐसा अमृत बरसा कि न तो पीने वाले थके और न बरसने वाले हारे। प्यास प्यास ही बनी रही और तृप्ति की बरसात बारहमासी वर्षा के रूप मे बूंद बूंद बरसती ही रही।

नृत्य, सगीत और प्रणय की मदिरा भरी सन्धि से भीगे हुए चौहान झूमते हुए कहने लगे— प्रणय मे जो रस है वह क्या ब्रह्मानन्द में हो सकता है! अधरो मे जो अमृत है वह सम्भवत देवता समुद्र मन्थन मे भी न पा सके होगे करनाटकी! तुम्हारे साथ रहने मे जो सुख मिलता है राज्य के सिहासन पर बैठकर वह सुख नही मिलता। मेरा विचार है, वह सुखी है जो प्रेम का राजा है और वह दुखी है जो राजा होकर भी किसी रूपवती के हृदय का राजा नही बन सका।

करनाटकी— जो राजा होता है उसका हर सुख पर अधिकार स्वयम् ही हो जाता है। धन से मनुष्य जो चाहे प्राप्त कर सकता है, निर्धन को तो प्रेम करने का अधिकार ही नही होता।

पृथ्वीराज— हम समझे, शायद करनाटकी स्वयम् को निर्धन समझ कर हमे ताना दे रही है, किन्तु हमने तुम्हे क्रय नही किया अपितु

उसे पुरस्कार दिया है जो तुम जैसा राज्य से भी बढ कर अमूल्य सौन्दर्य हमे दे गया।

करनाटकी— धनवान क्रय करता है और निर्धन बेचता है। बहुत बार मनुष्य को अपना ही रक्त बेच कर अपनी भूख मिटानी पडती है।

पृथ्वीराज— इस सरस अवसर पर यह उदासी का प्रकरण क्यो छेड रही हो सतरगिनी! अब तुम राजरानी हो, तुम हमारे हाथो नही बिकी, हम तुम्हारे हाथो बिक गये।

करनाटकी— प्रणय के क्षण मे जो भाषा होती है वह शाश्वत नही होती राजाधिराज! कही कल ही आप मुझे दुत्कार तो नही देगे?

पृथ्वीराज— ऐसी कल्पना क्यो कर रही हो करनाटकी! क्या चाँदनी कभी चाँद से पृथक् हो सकती है!

करनाटकी— कौन जानता है दूसरे क्षण क्या हो! राम जब सीता को त्याग सकते है तो फिर मैं तो वेश्या-पुत्री ठहरी जिसके श्वाँस श्वाँस मे सस्कारो का विष मिला हुआ है, जिसके रक्त मे जन्म जन्मान्तरो का पाप घुला चला आ रहा है।

पृथ्वीराज— आश्चर्य है कि कुन्दन को पीतल का भ्रम क्यो हो रहा है!

करनाटकी— मैं समझती हूँ प्रणय मे दिल्लीपति पीतल को सोना समझ रहे है, कल जब वे मेरे घृणित रूप की कल्पना करेगे तो आज का फूल कल के शूल मे बदल जायेगा।

पृथ्वीराज— हम फूलो के साथ काटो से भी निर्वाह करना जानते है। हमे तुमसे कभी घृणा नही हो सकती। प्रथम तो इस सोने मे कोई खोट है ही नही और यदि खोदने से खोट निकल भी आया तो हम उसे भी इसी प्रकार गले से लगायेगे जिस प्रकार शिव ने गरल को गले लगाया था।

पहली हार

पृथ्वीराज का प्रणय देखकर करनाटकी की आँखे छलछला आई। भीगे हुए हृदय से दिल्लीपति का हाथ दबाते हुए उसने कहा— 'आपने धूलि को चन्दन बना दिया!'

करनाटकी को भुजाओ मे समेटते हुए चौहान ने आखो और अधरो से मौन उत्तर दिया और फिर प्यार की नीद मे सो गये।

"प्यार का स्वप्न कितना मधुर होता है और कितना अस्थायी भी! कहा नही जा सकता कि मनुष्य के लिए प्रेम का स्थायी केन्द्र कहाँ है। प्यार के क्षणो मे प्रणयिनी से जो विश्वास का सम्वाद चलता है क्या उसका अस्तित्व उषा की ओस जैसा ही नही होता? कितनी जल्दी टूट जाता है प्रेम का सुनहरी तार! कही प्यार वेश्यावृत्ति का दूसरा नाम ही तो नही!"

मीठी नीद मे चौहान यह दार्शनिक तर्क कर ही रहे थे कि द्वार के बाहर सेविका ने कहा— महाराज से महामन्त्री किमास मिलने के लिये पधारे है।

करनाटकी उठ कर द्वार पर आई और दरवाजा खोलते हुए उत्सुकता से कहा— कहिये महामन्त्री! ऐसी क्या आपत्ति आ पडी जो आपको यहाँ तक आने का कष्ट करना पडा?

किमास— इस कष्ट का कारण आप ही है, क्योकि उधर राज्य के चारो ओर आग धधकना चाहती है और इधर आपने महाराज को बन्दी बना रखा है।

करनाटकी— भला मै क्या शक्ति रखती हूँ जो महाराज को बन्दी बना लेती! बन्दी बनाने का बल तो राज्य की हथकड़ियो मे होता है।

किमास— लोहे की हथकड़ियो मे भयकर हथकड़ियाँ कामिनो की कलाइयो की होती है। इस समय छोडो यह तर्क और महाराज से मेरी भेंट कराने की कृपा कीजिये!

करनाटकी— महाराज सो रहे हैं, जगाने से स्वास्थ्य को हानि होगी।

किमास— किन्तु न जगाने से उनके जीवन को हानि हो सकती है उनका राज्य आपत्ति में पड सकता है।

करनाटकी— राज्य सँभालने के लिये आप जैसे बुद्धिमान मन्त्री जो हैं। आप तो चौबीस घंटे उलझनो से फँसे ही रहते हैं, महाराज को तो विश्राम कर लेने दीजिये!

किमास— एक वेश्या पुत्री इससे अधिक और सोच ही क्या सकती है! उसे केवल अपने सुख और धन से मोह होता है।

सुन कर करनाटकी मुस्कराई और बहुत ही मृदुल होकर बोली— एक ही भूमि पर कीकर का पेड भी पैदा होता है और रसाल का वृक्ष भी फलता है। आप मुझे घृणा से देख सकते हैं लेकिन मैं आपको श्रद्धा से देखती हूँ महामन्त्री!

करनाटकी ने कुछ ऐसे ढंग से देखा और इस प्रकार कहा कि किमास पानी पानी हो गये। उन्होने मुस्कराते हुए कहा— तुम में तो सौन्दर्य के साथ साथ गुणो का कोष भी है। मुझसे भूल हुई, महाराज से बहुत आवश्यक कार्य है।

करनाटकी— मैं उन्हे जगाने की धृष्टता नही कर सकती, वे थोडी देर मे स्वयम् ही जाग उठेंगे। इतने आप इस बराबर वाले कमरे मे बैठने की कृपा करें!

किमास— अच्छा, तो मैं बैठता हूँ। यदि कोई हानि न हो तो आप भी कुछ समय के लिये बातें करने के लिये बैठे।

करनाटकी— भला मैं आप से क्या बातें कर सकती हूँ! फिर भी यदि आपकी आज्ञा है तो मैं बैठी हूँ। कहिये, क्या सेवा करूँ आपकी?

किमास— नारी का शुद्ध रूप क्या है ?

करनाटकी— मनुष्य की पराजय ।

किमास— यह गुण है या अवगुण ?

करनाटकी— जय पाना अवगुण तो नही होता ।

किमास— पुरुष क्यो नारी की ओर लपकता है ?

करनाटकी— यह प्रकृति का धर्म है महामन्त्री !

किमास— लेकिन मनुष्य का धर्म तो कुछ और ही कहा जाता है।

करनाटकी— कथन और क्रिया मे बहुत अन्तर होता है। अच्छा, अब मुझे जाने दीजिये ! कही महाराज जाग गये तो कुछ विपरीत न हो जाये ।

किमास— तो फिर अब कब ?

करनाटकी ने मुस्कराते हुए कहा— आप महाराज से मिल लीजिये ! आप उनसे ही तो मिलने आये थे ।

किमास— हाँ, आया तो उनसे ही मिलने था पर तुमसे मिल कर भी कुछ हित ही हुआ। मै समझता था रूप के स्वर्ण कलश मे विष भरा हुआ है पर अब ऐसा जान पडता है कि मै अमृत के प्याले को विष का प्याला समझ रहा था करनाटकी ! तुम मे जीवन है, तुम चाहो तो अपनी चमक से लोहे को कचन बना सकती हो। तुम अपनी एक ही झलक मे अधेरे को उजाले मे बदल देती हो। रूप और गुणो की दिव्य सुन्दरी ! आओ, और अपनी सुगन्ध से राजनीति के इस कर्कश जीवन को सुगन्धित कर दो !

करनाटकी— इतने उतावले न बनो चतुर मन्त्री ! आप तो करनाटकी से घृणा करते थे न, इतनी शीघ्र अपने आदर्शो को भूल गये ?

किमास— आज मैं समझा कि आदर्श और जीवन मे कितना बडा अन्तर होता है। न जाने आदर्शो के किस कोने से यथार्थ की मदिरा बरस कर मनुष्य को खो देती है। तुमने मुझे खो दिया है करनाटकी! उस क्षण जब वातायन से झाँक कर तुमने अपनी चांदनी मेरे सूखे जीवन पर डाली थी तो मेरे पैर लडखडा उठे थे और आज मैं विवश हो गया हूँ।

करनाटकी— इसका परिणाम कितना भीषण हो सकता है महामन्त्री!

किमास— प्रणय परिणाम को नही सोचता। यौवन के इन्द्रजाल मे राजनीति का खिलाडी उलझ चुका है। अब मुझे उस स्वर्ग से वचित न करो जो मेरी आखो के सामने है।

कहते हुए किमास ने करनाटकी की अगुली पकड ली और फिर पहुँचा पकडने के लिये हाथ बढाया।

करनाटकी मन ही मन मे अपनी पूर्व इच्छा की पूर्ति पाकर अगडाई लेती हुई चमकी। भुजाओ का बन्धन कसना ही चाहता था कि बराबर के कक्ष से महाराज पृथ्वीराज की आवाज़ आई—'करनाटकी!'

चौक कर भुजाओ के बन्धन छूट गये। किमास चमत्कृत हो उठे, किन्तु करनाटकी ने स्वर को बढाते हुए कहा— मैंने आपसे कहा न महाराज सो रहे हैं, मैं उन्हे जगा नही सकती। आखिर आपकी हठ से वह जाग ही गये। आप जाइये, मैं उन्हे भेजती हूँ।

३

शयनागार में महाराज पृथ्वीराज का माथा सहलाते हुए करनाटकी ने कहा— मैं नहीं चाहती थी कि आप कच्ची नींद में उठें, पर लाचारी ने आप को उठा ही दिया। महामन्त्री किमास आये थे। उन्होंने कहा, महाराज से आवश्यक काम है, उन्हें जगा दीजिये। मैंने कहा, थोड़ी देर में जब वह उठेंगे तो आप का सन्देश कह दूंगी। इतने में आप उठ ही गये।

पृथ्वीराज— महामन्त्री कभी अकारण कष्ट नहीं करते। अवश्य ही कोई विशेष बात है। हम अपने निजी कक्ष में जा रहे हैं। प्रतिहारी द्वारा महामन्त्री को उधर ही बुलवा भेजो।

प्रतिहारी महामन्त्री को बुलाने चली गई और पृथ्वीराज अपने निजी कक्ष में आ विराजे। कुछ ही पलों बाद किमास भी वहाँ आगये। दिल्लीपति को राजसी अभिवादन करते हुए महामन्त्री ने कहा— आप को विश्राम के समय कष्ट देकर मैंने अनुचित तो किया है पर क्या करूँ स्थिति ही ऐसी आ पड़ी कि आपको जगाये बिना मुझे सन्तोष नहीं हुआ।

पृथ्वीराज— क्या बात है बुद्धिमान मन्त्री! इतने चिन्तित क्यों दिखाई दे रहे हो? अपराधी की तरह तुम्हारे स्वर में कम्पन क्यों है?

किमास— मुझे डर है कि कहीं हरी भरी दिल्ली रक्तस्नान न करने लगे।

पृथ्वीराज— रक्त में नहाना तो वीरों का धर्म है। यदि ऐसा अवसर आये तो उसकी चिन्ता क्या है!

किमास— चिन्ता इस बात की है कि कहीं खून पानी बन कर न बह जाये।

पृथ्वीराज— कारण?

किमास— दिल्ली में माहिल का प्रवेश। न जाने कहाँ कहाँ के पापों का उदय दिल्ली में हो गया!

पृथ्वीराज— क्या बिगाड़ेगा, पुण्य में मिलकर पाप भी पुण्य बन जायेगा।

किमास— नहीं महाराज! पुण्य के संसर्ग से पापी में परिवर्तन आये या न आये पर पापों के संसर्ग से पुण्यवान पापी अवश्य बन जाता है। माहिल हमारे देश के लिये अभिशाप बन कर आया है। भारत भूमि के लिये यह मीठा विष बहुत ही भयंकर है।

पृथ्वीराज— तो फिर इसका उपाय?

किमास— उपाय यही कि विष को विष से उतार दो।

पृथ्वीराज— तुम्हारे कहने का क्या अर्थ है नीतिकुशल!

किमास—अर्थ यही कि माहिल को विष देकर मरवा दिया जाये जिससे सारे जल को गन्दा करने वाली मछली सदा के लिये मर जाये।

पृथ्वीराज— यह क्या कह रहे हो परम गुणी! यह कैसे हो

सकता है! माहिल दिल्ली राज्य के अतिथि हैं। अतिथि की हत्या से बड़ा पाप न कोई है, न होगा। पृथ्वीराज के राज्य मे अतिथि बन कर यदि कोई उसका सर भी लेने आयेगा तो चौहान हँसते हँसते उसे अपना सर भी दे देगा।

किमास— रजपूती के आदर्शों को इतने बड़े राज्य का हत्यारा क्यो बनाते हो महाराज! माहिल को यदि नही मारा गया तो भारत के सारे राजा आपस मे कट कट कर मर जायेंगे।

पृथ्वीराज— चाहे सूर्य पश्चिम से क्यो न निकलने लगे किन्तु राजपूतों की आन पर धब्बा नही लग सकता। माहिल को यदि कुछ भी हुआ तो उसका सारा उत्तरदायित्व तुम पर होगा महामन्त्री!

किमास मौन हो गये। कुछ देर तक भूमि की ओर देखने के बाद उन्होंने अपनी आँखे ऊपर उठाईं और उदास मुद्रा मे बोले— कल दीपावली के शुभ त्यौहार के उपलक्ष मे दुर्ग का राजकीय उत्सव तो पूर्व वर्षों की भाँति ही सम्पन्न होगा न?

पृथ्वीराज— उससे भी और धूम धाम से। राणा समरसिंह पधार रहे हैं। उनके स्वागत मे दिवाली दुगने चाव से मनाई जाये। राज्य की ओर से सभी राजाओं को लक्ष्मीपूजन के इस शुभावसर पर बहुमूल्य भेंटें भेजी जायें। क्यो व्यर्थ ही चिन्ता करते हो किमास! जब तक तुम्हारे मस्तिष्क मे ऊहा और हाथ मे तलवार है, जब तक चौहान के हाथों मे अर्जुन के गाण्डीव की तरह सधा हुआ धनुष बाण है, जब तक चामुण्ड राय का पराक्रम दिल्ली राज्य मे है, तब तक आनन्द के गीत गाओ, हँसो और इतने हँसो कि जलने वाले जल कर राख हो जायें।

किमास— बिना अवसर की हँसी अच्छी नही होती महाराज!

जब दावानल की तरह सुलगती हुई आग राज्यलक्ष्मी भस्म करने को दौडी चली आ रही हो तब त्यौहार मे भी हँसी नही आती।

पृथ्वीराज— न जाने क्यो महामन्त्री इतने घबरा रहे है! अच्छा, हम तुम्हारी इच्छानुसार माहिल को उसकी इच्छा के विरुद्ध कर देंगे।

किमास— इस से तो साँप चोट खाया हुआ हो जायेगा। साँप को मार डालने मे ही हित है दिल्लीपति!

पृथ्वीराज— यदि यह चाहते हो तो अतिथि का वध करने से पहले पृथ्वीराज का वध कर दो!

किमास— यह तो किमास की मृत्यु के बाद ही हो सकता है। खैर छोडिये, लेकिन माहिलराज को किसी न किसी प्रकार दिल्ली मे ही रोके रखिये! हमारी दशा इस समय साँप छछून्दर जैसी है। इधर कुआँ है और उधर खाई।

पृथ्वीराज— न कोई कुआं है और न कही खाई। जाओ और सुख मे इतने बडे राज्य की लक्ष्मी का आनन्द लो! दीपावली उत्सव इतनी धूमधाम से मनाया जाये जिसके सामने स्वर्ग की दीवाली भी फीकी दिखाई देने लगे।

किमास— जैसी आज्ञा महाराज की।

कह कर अभिवादन करते हुए महामन्त्री किमास सोचते हुए चल दिये और पृथ्वीराज फिर आकर वही मदिरा पीने लगे जिसे पीते पीते अभी किमास से मिलने गये थे।

किमास अपने कक्ष मे कुछ देर तो विचारो मे डूबे रहे और फिर राजकीय स्तर पर दीपोत्सव की तैयारी मे लग गये।

दूसरे दिन दीपोत्सव से दिल्ली जगमगा उठी। हर गली, हर सडक और हर घर मे आज नयी बहार थी। मानो इन्द्रपुरी को लज्जित करने के लिये इन्द्रप्रस्थ मे भरी जवानी ने नया शृंगार किया

हो। षोड्शी दुलहन की तरह दिल्ली ने आज बढ़िया से बढ़िया परिधान पहने, सुन्दर से सुन्दर शृंगार किये।

दीपमालिका की अद्भुत सज्जा के मध्य राज्य की ओर से दिल्ली के महरौली दुर्ग में दिव्य समारोह शुरू हुआ। बड़े बड़े बाँके वीर लम्बी लम्बी तलवारें लटकाये मूँछें पैनाते हुए दीपाधिवेशन में पधारे। नागरिक लोग अपनी निराली छटा से राजसभा में चमकने लगे। दुर्ग का दीपोत्सव देखने के लिये नारियाँ शृंगारों से शोभित हो अपने अपने घरों की छतों पर निर्निमेष हो गईं। सभासद, सामन्त और मन्त्रीगण अपने अपने सिंहासनों पर विराज गये।

जब दीपोत्सव में सभी अतिथि-वृन्द अपने अपने आसनों पर आनन्द और गर्व से बैठ गये तब राणा समरसिंह और महामन्त्री के साथ दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान राजकीय घोषणा और जयकारों के बीच दीपोत्सव में जगमगाते हुए मणि-मण्डित रत्न-सिंहासन पर उस प्रकार आ विराजे जिस प्रकार तारा मंडल में प्रभाकर सुशोभित होते हैं। और आस पास राणा समरसिंह तथा महामन्त्री कैमास अपने प्रकाश से महाराज को दमकाने लगे।

दिल्ली के उस दिव्य वैभव को माहिल राज ने ईर्ष्या से देखा और कुटिलता से हर्ष प्रकट करने लगा। चामुण्ड राय ने अपनी गर्वीली आँखें चारों ओर उस प्रकार घुमायीं जिस प्रकार कोई स्वस्थ शृंगार कर शीशे में अपना मुँह हर ओर से देखता है।

लौकिक सृष्टि में अलौकिक छटा छा गई। आज के खण्डहर और कल के वैभवशाली दिल्ली दुर्ग में कलाओं का प्रदर्शन होने लगा। नृत्य, संगीत, गायन और प्रकार प्रकार के प्रदर्शनों से दर्शक-गण झूम उठे।

उत्सव की अलौकिक छटा निहारते हुए दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान ने गर्व से कहा— दिवाली के दीपों की तरह हमारे राज्य के

दीपक हर तूफान मे जलते रहेगे। किसी बवण्डर की शक्ति नही जो हमारे दीपको को बुझा दे।

सुनकर माहिल धीरे से मुस्कराये और आवेश मे बोले— दिल्ली राज्य के दीपक सवेरे के तारो की तरह जल रहे है। धूप ने तनिक सा पग बढाया कि तारो का अस्तित्व मिट जायेगा।

सुनते ही पृथ्वीराज की आँखें उबल उठी। उन्होने ज्वालामुखी की तरह फूटते हुए कहा— हमने यज्ञ के समय अतिथि समझ कर तुम्हे क्षमा कर दिया था लेकिन अब हम सहन नही कर सकते। तुम अतिथि हो, इसलिये तुम्हारा वध तो हम नही करते लेकिन अपने राज्य से निकल जाने की हम तुम्हे आज्ञा देते है। यदि कल प्रात तक तुमने दिल्ली की सीमा नही छोडी तो तुम्हारा सर काट दिया जायेगा।

माहिल को क्रोध तो बहुत आया पर वह विष की घूट की तरह चौहान के सारे कटु शब्द पी गया और अत्यधिक विनम्र होकर बोला— 'दिल्लीपति यदि चाहे तो मै अपना सर अपने हाथ से काट कर समर्पण कर सकता हूँ। आपकी आज्ञानुसार मै दिल्ली छोड कर जा रहा हूँ। अब तभी आऊँगा जब दिल्ली आपके इन शब्दो को याद कर के रो रही होगी।'

उत्सव की जगमगाहट चिनगारियो मे बदल गयी, जैसे दिवाली के दीपो मे से शोले निकल पडे हो। राज्योत्सव मे खिले हुए सुमन अगारो की तरह तमतमा उठे। किन्तु आग को पीते हुए माहिल उत्सव से चल दिये। अपने अश्व पर सवार हो उन्होने कन्नौज की राह पकडी। राह मे वह दिल्ली विनाश के षड्यन्त्र सोचते चले जा रहे थे। 'घमण्डी, इतना अहकार है तुझे अपने राज्य पर! तो अब देख दिल्ली की ईंट से ईंट बजेगी। दिल्ली की शिला धूलि मे लोटती हुई दिखाई देगी। भारतवर्ष में वही जीवित रह सकता है जो माहिल

की पूजा करे। माहिल तुम बड़े बड़े राजाओं का एक संघ कभी भी नहीं बनने देगा। यदि ऐसा हुआ तो माहिल फिर किस पर राज्य करेगा। माहिल का राज्य तभी जम सकता है जब ये गर्वीले राजा आपस में लड़ लड़ कर मरते रहें। माहिल की महिमा इसी में है कि मिलतों को मिलने न दे। फूस में चिनगारी तो लग चुकी है, अब आग धधकाने की आवश्यकता है। अब कन्नौज चलकर जयचन्द को भड़काता हूँ।'

मन ही मन में विनाश के संकल्प बनाते हुए माहिल दिल्ली से कन्नौज आकर रुके और गिरगिट की तरह रंग बदलते हुए जयचन्द के राजमहल के निकट पहुँच गये। कन्नौज नरेश जयचन्द को जब यह सूचना मिली कि माहिलराज आये हैं तो वे दौड़े हुए द्वार पर उनके स्वागत को आये। जयचन्द को देखते ही माहिल ने बड़ी नीति से नम्र नमस्कार किया। उत्तर में जयचन्द उनके गले में हाथ डाल अपने कमरे में ले आये।

आदर और प्रेम से माहिल को अपने बराबर में बैठाते हुए कन्नौज-नरेश ने कहा—बहुत दिनों बाद कृपा की माहिलराज! इतने दिनों तक हमें क्या भूले रहे?

माहिल—भूला नहीं रहा महाराज! बल्कि आपके ही हित के लिये भ्रमण करता रहा। अभी अभी सीधा दिल्ली से चला आ रहा हूँ।

जयचन्द—दिल्ली से आ रहे हो? कहिये, हमारे भाई दिल्लीपति चौहान पृथ्वीराज आनन्द तो हैं?

माहिल—आनन्द क्या, घी के दीपक जल रहे हैं महाराज! चौहान के बराबर आज भारतवर्ष में कौन है! उसकी तलवार, उसके वैभव और उसकी उन्नति को चुनौती देने वाला संसार में क्या कोई रहा है! उसकी दृष्टि में ये सारे राजा भुनगे हैं, भुनगे!

जयचन्द—यह तो बड़े हर्ष का समाचार है। हमें पृथ्वीराज

चौहान की वीरता पर बड़ा गर्व है। उसकी ज्योति से हमारी कीर्ति जगमगा रही है।

माहिल— और कल ही जब कन्नौज और महोबे के दीपक बुझेंगे तब आपको अपने इन शब्दो पर पश्चात्ताप होगा। चौहान का बढ़ता हुआ घमण्ड कन्नौज और महोबे को घूर घूर कर देख रहा है। उसकी आंखो मे सारे भारत का आधिपत्य नाच रहा है। वह तलवार के बल से अपना स्वप्न पूरा करना चाहता है। अभी समय है कन्नौजपति! सँभल सकते हो तो सँभलो!

जयचन्द— ये कैसी बाते कर रहे हो माहिलराज! चौहान अपने भाइयो का अनिष्ट कभी नही सोच सकता।

माहिल— अनिष्ट सोच नही सकता, सोच लिया। तुम्हारे ही घर मे चौहान जो डाका डालना चाहता है वह खोलते हुए मेरी वाणी झिझकती है।

जयचन्द— जो कुछ कहना हो स्पष्ट कहो माहिल! हम पहेलियाँ नही सुनना चाहते।

माहिल— पहेलियाँ नही सुनना चाहते तो सुनो! सुना है कन्नौज-पति की पुत्री संयोगिता दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान को वरना चाहती है।

सुनते ही जयचन्द की आंखे लाल हो गई। क्रोध से उबलते हुए उन्होंने कहा— यदि किसी दूसरे ने ये शब्द कहे होते तो मैं उसकी जिह्वा काट लेता। राजकुमारी के प्रति ऐसी अनर्गल बात मुँह से निकालने का परिणाम जानते हो माहिलराज!

माहिल— जानता हूँ महाराज! माहिल के [illegible] मे [illegible] दिया जायेगा, यही न! लेकिन आप कान खोल कर सुन ले

रहा हूँ वह सप्रमाण है। राजकुमारी और पृथ्वीराज में जो प्रणय-पत्र चलते हैं वे महाराज की आँखो मे छिप सकते हैं पर माहिल की आँखो से नही। सयोगिता जब अजमेर अपनी मौसेरी बहिन के विवाह में गई थी, तभी से पृथ्वीराज और सयोगिता का प्रणय चल रहा है, स्वयवर के दिन परिणय भी हो जायेगा।

जयचन्द— क्या प्रमाण है तुम्हारे पास अपने कथन की पुष्टि में?

माहिल— वह पत्र जो आपकी पुत्री का प्रेषित किया हुआ दिल्ली जा रहा था। राह में मैंने पुरुष वेष में जाती हुई उसकी सहेली को पकड लिया और यह पत्र छीन लाया हूँ।

कहते हुए माहिल ने पत्र महाराज की ओर बढाया। पत्र लेकर पढते-पढते महाराज की आँखे आग उगलने लगी, काँपते हुए ओठो मे वे बोले— आज अपने ही हाथो से मै अपनी लडकी का सर काट डालूंगा।

माहिल— क्रोध और शीघ्रता मे साँप भी नही मरेगा और लाठी भी टूट जायेगी। शान्ति से काम लो महाराज! मेरे कहने पर चले तो दिल्ली पर महाराज जयचन्द का झण्डा फहराना दिखाई देगा। वस्तुत दिल्ली पर उतना ही अधिकार आपका है जितना चौहान का। दिल्ली पृथ्वीराज की नही, पृथ्वीराज दिल्ली मे दत्तक है। तनिक सावधानी से चलने पर दिल्ली भी मिल जायेगी और दुश्मन भी मौत के घाट उतार दिया जायेगा।

जयचन्द— यह कैसे हो सकता है माहिलराज!

माहिल— बडी सरलता से! सुना है पृथ्वीराज अपनी कन्या बेला के लिये वर की खोज में है। इस शुभ अवसर को हाथ मे न जाने

दीजिये। मोहवे के राजा परिमर्दिदेव के पुत्र ब्रह्मा से दिल्ली की राजकुमारी का विवाह रचवाने की विधि बन जाने से सारी बात बन सकती है।

जयचन्द— वह कैसे माहिल राज!

माहिल— पृथ्वीराज चौहान ने घोषणा की है कि राजकुमारी बेला का ब्याह उसी से होगा जो दिल्ली की अजेय सेना को पराजित कर देगा। दिल्ली की अजेय सेना का नाम सुनते ही बड़े बड़े वीरों के छक्के छूट जाते हैं। किसी प्रकार यदि मोहवे के वीर सामन्त आल्हा और ऊदल को आवेश आ जाये तो हमारे दोनों हाथों में लड्डू हो सकते हैं। अगर चौहान की अजेय सेना पराजित कर दी गई तो दिल्ली पर अधिकार करना बहुत सरल होगा, साथ ही चौहान की सारी शान मिट्टी में मिलकर बेला का ब्याह छोटी जाति के क्षत्रिय राजकुमार से हो जायेगा। प्रतिशोध लेने का यह एक सर्वोत्तम उपाय है।

जयचन्द— और अगर अजेय सेना पराजित न हो पाई तो?

माहिल— तब भी आपकी जय है। मोहवे के बांके वीरों से लड़ कर दिल्ली की शक्ति क्षीण हो जायेगी, और दुर्बल शत्रु जय करना सदा सरल होता है।

जयचन्द— तो यह तो हम सरलता से कर सकते हैं। मोहबा राज्य से हमारी पुरानी मित्रता है। हम कल ही किसी दूत को भेज कर मोहवे से बेला की मांग के लिये दिल्लीपति चौहान के पास चूड़ियाँ और सिन्दूर भिजवा देंगे।

माहिल ने मन ही मन में प्रसन्न होकर विनाश का सुनहरी स्वप्न देखा और फिर अपनी मूछें मरोड़ता हुआ कहने लगा— माहिल के होते हुए किस की शक्ति है जो कन्नौज की ओर कुदृष्टि डाल सके। जब तक

दिल्ली के दुर्ग पर कन्नौजपति जयचन्द का ध्वज नही फहरेगा तब तक माहिल को शान्ति नही मिल सकती।

जयचन्द— जब आप जैसे हितचिन्तक हमारी चिन्ता मे रत है तब किस की शक्ति है जो जयचन्द की मूछे नीची कर सके। अच्छा मित्रवर, आप बहुत थके प्रतीत होते है, अत विश्राम कीजिये। मै आप के बताये हुए मन्त्र को फूकता हूँ।

माहिल— विश्राम तो उसी दिन करूँगा जिस दिन आप को भारतवर्ष का दिग्विजयी राजा देख लूगा। लेकिन नई सुबह के लिये रात का विश्राम भी आवश्यक है, अत शयन करके कुछ ताजगी चाहता हूं।

जयचन्द 'हॉ हॉ' कहते हुए उठे और माहिलराज को उस सुगन्धित शयन कक्ष की ओर ले चले जहॉ इत्रो की सुगन्ध से जाते जाते ही नींद झूमने लगती है। विश्राम शैया पर माहिलराज स्वर्णिम स्वप्न देखते हुए सो गए और जयचन्द अपने महल की ओर चल पडे।

मन ही मन मे न जाने क्या क्या सोचते हुए जयचन्द अपनी रानी नागमती के पास आ गए। नागमती ने प्राणनाथ को पधारते देख प्रसन्नता की ज्योति से आरती की और गुलाब के फूल सी खिलती हुई बोली— "आज इतना विलम्ब कैसे हो गया नाथ!"

जयचन्द ने मुख-मुद्रा को कुछ गम्भीर बनाते हुए उत्तर मे कहा— "तुम जानती हो चन्द्रमा मे कलक क्यो है?"

नागमती— जान पडता है चन्द्रमा के पिता सिन्धु ने पुत्र को दृष्टि दोष से बचाने के लिये काला टीका लगा दिया है, अथवा देखने वालो की आँखो का दोष ही चन्द्रमा के सौन्दर्य पर कलक बन कर रह गया है।

जयचन्द— हमारी रानी बहुत चतुर है, वह काव्यमय उत्तर देना

खुद जानती है लेकिन हम यह कह रहे हैं कि कहीं हमारी पुत्री ही हमारे माथे पर कलंक न बन जाये।

नागमती— यह आप क्या कह रहे हैं स्वामी!

जयचन्द— दीपक तले अँधेरा होता है, हमें अपने घर का अँधेरा नहीं दीखता। बेटी के माँ-बाप की परिस्थिति वे नहीं जानते जो किसी की पुत्री को अनीति से चुरा लेते हैं और न ही यौवन के विषाक्त अमृत से उभरी हुई जवान बेटी ही यह देख पाती है कि माँ-बाप की आबरू का भी कोई मूल्य है। इज्जत जब चली जाती है तो लाख प्रशंसाओं से भी वापिस नहीं आती।

नागमती— सच कहते हैं स्वामी! लेकिन बात तो बताइये!

जयचन्द— जो बात हम तुम्हें बताने जा रहे हैं वह बताते हुए हमारी जिह्वा कटी जा रही है। जिस समय हमने यह बात सुनी उस समय हम पागल हो जाना चाहते थे।

नागमती— यह आप को क्या हो रहा है मेरे आराध्य! आप शीघ्र कहिये, कौनसी वह सांपिन सी बात है जो आपको डंक मारना चाहती है।

जयचन्द— वह बात यह है कि तुम्हारी लाडली संयोगिता का पृथ्वीराज से प्रणय चल रहा है, प्रणय के षड्यन्त्र रचे जा रहे हैं।

सुन कर नागमती कुछ क्षणों के लिये मौन हो गई और फिर बहुत गम्भीर होकर बोली— भावुकता में कई बार भूल हो जाती है। जो कुछ भी हुआ या होने जा रहा है उस पर संयम और धैर्य से विचार करना चाहिए, सहसा करने से पीछे पछताना पड़ता है।

जयचन्द— हमें क्रोध आ रहा है नागमती! क्योंकि हमारे कथन के सत्य की पुष्टि हो चुकी है।

नागमती—— मैं आपके कथन को असत्य कह कर आप की अवहेलना नही कर रही हूँ स्वामी! लेकिन क्रोध मे कुछ भी करना उचित नही। सयोगिता समझदार है, समझदार भी बहुत बार नासमझी कर बैठते है। मैं वस्तुस्थिति को समझ कर उसे समझाने की कोशिश करूगी।

जयचन्द—— भूले हुए को समझाया जाता है, समझदार समझता हुआ भी शुद्ध पथ पर चलना नही चाहता। सयोगिता ने समझ बूझ कर ही हमारी इच्छा के विरुद्ध आग मे खेलने का यत्न किया है। जी चाहता है कि तलवार से उसका सर काट डाले। लेकिन पिता ने पुत्री का सर क्यो काटा, इस घोर कलक के भय से तलवार की मूठ पर गया हुआ हाथ कांप जाता है। क्षत्रिय की मर्यादा और कलक के भय मे सघर्ष छिडा हुआ है, हम निर्णय नही कर पा रहे है कि क्या करे।

नागमती—— क्रोध और भावुकता मे कुछ भी निर्णय नही होता। आप विश्राम कर लीजिये, कल तक मैं सब ठीक कर लूगी।

रात की मीठी लोरियो मे सब सो गये पर जयचन्द को नीद नही आई। प्रतिशोध की आग से उनका रोम रोम झुलस रहा था। दिल्ली की ईंट से ईंट बजाने के स्वप्न उन्हे बार बार चौका देते थे। वे पडे पडे बडबडा रहे थे—— "सचमुच चौहान को बहुत घमड है। वह सीमा से बाहर होता जा रहा है, उस मे और डाकू मे कोई अन्तर नही। वह मेरे राज्य, सम्मान और पवित्रता पर भी आक्रमण कर बैठा। पापी! निर्लज्ज! अपनी भतीजी से ही व्याह करने की सोच रहा है। सयोगिता तेरे मौसेरे भाई की लडकी है। जान पडता है तेरी मृत्यु ही तुझ से यह सब करा रही है, वल्कि तू अहकार मे आंख मीच कर चल रहा है, विनाश के समय तेरी वुद्धि फिर गई है।

सयोगिता, मेरी पुत्री हो कर मुझ ही को मिटाना चाहती है, चाहे

मुझे तेरा सर ही क्यो न काट डालना पडे पर उस पृथ्वीराज से तेरा व्याह नही होने दूगा। अच्छा होता यदि तू होते ही मर जाती। अब भी कुछ नही बिगडा, मैं अपने हाथो से तेरा गला घोट डालूगा।

इस समय सब सो रहे है, इससे सुन्दर अवसर और कौनसा होगा! मेरी कटार का एक ही हाथ उस की जीवन लीला को सदा के लिये समाप्त कर देगा। उस के बाद मैं पृथ्वीराज चौहान को धूलि मे मिला डालूगा। इतिहास चाहे मुझे पुत्री का हत्यारा ही क्यो न कहे पर मैं उसका सर काट कर ही रहूँगा।''

सोचते हुए जयचन्द ने अपनी कटि से तीक्ष्ण कटार खींची और पागल की तरह अपनी शैया से उठे। उठ कर जैसे ही उन्होंने पैर बढाया वैसे ही नागमती ने बत्ती ऊची कर कन्नौजपति अपने स्वामी के पैर पकड लिये और काँपती हुई बोली—'आज आप को क्या हो गया है नाथ! आप को नीद क्यो नही आ रही? यह तीक्ष्ण कटार किस के प्राणघात हेतु निकली है?'

जयचन्द—''जिसको लाड और प्यार से गोद मे खिलाया था उसी तुम्हारी लाडली बेटी के लिये भवानी चमचमा रही है।'

नागमती—''नही नाथ! यह भी हो सकता है कि अपनी आंखो के धोखे मे हम ही मारे जा रहे हो। बहुत से पाप पुण्य दिखाई देते हैं और बहुत से पुण्य पाप प्रतीत होते हैं। आवेश मे बहुत बार मनुष्य वह कर बैठता है जिससे जीवन भर रोना पडता है। पाप और पुण्य की परिभाषा आज तक निश्चित नही हुई। आप की इच्छा के विरुद्ध जो आप देख रहे हैं उनकी समाप्ति और प्रतिशोध के लिये और बहुत से सहज उपाय हैं। संयोगिता का स्वयवर रच कर पृथ्वीराज को निमन्त्रित न कीजिये। इससे चौहान का अपमान भी हो जायेगा और संयोगिता का व्याह भी कही अन्यत्र सम्पन्न होगा। और चौहान के

सगठन मे अन्य हिन्दू राजाओ को शामिल न होने दिया जाये। बस इतना पर्याप्त है। साँप भी मर जायेगा और लाठी भी नही टूटेगी। अपनी बेटी, जिसे फूलो पर भी सुलाते हमे कष्ट होता था, क्या अपने ही हाथो से उसका गला काट डाले।"

जयचन्द के बढते हुए आवेश मे एक भीषण धक्का लगा। वे किंकर्त्तव्यविमूढ खडे रह गये और कटार उनके हाथो से छूट पडी।

४

महोबे के गर्वीले दुर्ग मे राजा परिमर्दिदेव ऊँचे सिंहासन पर बुढ़ापे की अचल गम्भीरता से विराजमान हैं। उनके लम्बे, पतले और झुर्री भरे शरीर से शान्ति और वीरता की गन्ध चारो ओर फैल फैल कर शान्ति और क्रान्ति के गीत सुना रही है। दुर्ग मे सामन्तगण अपने अपने स्थान पर विराजमान है। महोबापति परमाल के बराबर मे राजकुमार ब्रह्मा की चौकी शरद् पूर्णिमा के चाँद की तरह चमक रही है। उनके दूसरी ओर राजमन्त्री तालव्य सरलता से विराजमान है। और फिर सोने चाँदी के सिंहासनो पर सजे हुए रणबांकुरे सेनानियो को देखकर आँखें एकटक रह जाती हैं। सामन्तो मे सबसे ऊँची चौकी पर आल्हा बिजली की कौंध की तरह दमक रहे है। बड़ी बड़ी आँखें, ऊँचा मस्तक, चौड़ी छाती और लम्बी भुजाएँ! किन्तु पौरुष की इस अनूठी शान मे भी वीरवर आल्हा धरती की तरह शान्त बैठे हैं। उनके बराबर मे उनका अनुज महोबे का वीर सामन्त ऊदलराय प्रत्यक्ष आग-सा विराजमान है। और भी इसी प्रकार विराजमान सामन्त अपनी अपनी मूछे ऐंठ रहे है। सोने और चाँदी के सिंहासनो पर प्रत्येक वीर की कटि से बंधी [illegible]

हुई तलवार चारणी की तरह वीर वाक्यों का उच्चारण कर रही है। तलवार की हीरे और मणियो मे जडी हुई मूठे प्रत्येक योद्धा के अग अग को जगमगा रही है।

गम्भीरता और वीरता के इस विशिष्ट राजमण्डल मे बुद्धिमान मन्त्री तालव्य ने उठ कर नम्रता से कहा— 'हमारे दयावान राजा, वीर सामन्तो तथा प्रभुत्व-सम्पन्न अधिकारीगण! हमे हर्ष है कि हमारा राज्य शान्ति, वीरता और गौरव का राज्य है। हम किसी की शान्ति भग नही करते। यदि हमे कोई ललकारता है तो हमारे पास ललकार का उत्तर देने वाला बल है।'

मन्त्री आगे भी कुछ कहने पर सहसा प्रसन्नता से रक्तरजित एक सैनिक ने पधार कर एक ही स्वास मे कहा— 'महोबापति महाराज परिमर्दिदेव की जय हो! सिरसे का धूर्त राजा जो कुछ कुचक्रियो को साथ लेकर महोबे पर राज्य करना चाहता था, हमारे वीर सामन्त मलखान की तलवार से मारा गया। सिरसे के किले पर अब महाराजा परमाल का झण्डा लहरा रहा है।'

परमाल— इस शुभ समाचार के लिये हम तुम्हे बधाई देते है सैनिक! आज से तुम सेनानायक नियुक्त किये गये। मन्त्री जी, सामन्तो! सुना आपने यह शुभ समाचार! मलखान की इस विजय का इतिहास सोने के अक्षरो मे खुदवा दो, उस वीर योद्धा के कारण ही आज हम गर्व से माथा उठाये बैठे है।

तालव्य— सत्य है महाराज! मलखान की वीरता की जितनी प्रशसा की जाये थोडी है। इस विजय के पुरस्कार में यदि मलखान को सिरसे का राज्य भी दे दिया जाये तो कम है।

परमाल— हम तुम्हारा आशय समझ गये मन्त्री जी! हमने सिरसे का राज्य मलखान को दिया। अब वही वहाँ पुत्रवत् राजा रहेगा।

तालव्य— महाराज के गुणो की जितनी भी प्रसशा की जाये थोडी है। सचमुच वही राजा धन्य है जो प्रजा का पुत्रो की तरह पालन करता है। राज्य मे कोई ऐसा नही जो गुणनिधान राजा परिमर्दिदेव के गुण न गाता हो। सिपाही, प्रजा, अधिकारी, सामन्त, बड़े-छोटे सब ही आपकी दीर्घायु चाहते हैं।

परमाल— सब के प्रेम की निधि से अमूल्य निधि हमारे राज्य मे कोई और नही है। सत्य, प्रेम और वीरता का बल ही तो हमारे पास बड़ा बल है।

यशोगान हो ही रहा था कि माहिलराज ने मुस्कराते हुए प्रवेश किया। उनको देखते ही राज्य-मण्डल मे चहल-पहल आ गई। राजा परिमर्दिदेव ने स्वय सिंहासन से उठ कर उरईपति माहिलराज कुरियन का स्वागत किया। स्वागत के उत्तर मे माहिलराज ने गर्व से गर्दन उठाते हुए कहा— 'सिरसा विजय पर माहिल की बधाई स्वीकार कीजिये महोबा अधिपति!'

परमाल— तथा तुम्हे यह जान कर और भी हर्ष होगा कि हमने सिरसा का राज्य सिरसा को जीतने वाले अपने वीर सेनानी मलखान को दे दिया। वही अब वहाँ का राजा है।

सुनते ही माहिल के तन मे आग लग गई, पर जलन के मारे भाव मन मे ही छिपा वह हँसता हुआ बोला— 'यह तो महाराज ने बहुत ही अच्छा किया। अब बगल ही मे आपका एक बलवान साथी राजा और हो गया। सचमुच यह आपने बुद्धिमानी का काम किया है।

परमाल— सब ईश्वर की कृपा है। कहिये कहाँ कहाँ से भ्रमण करते चले आ रहे हैं।

माहिल— आपके लिये एक शुभ समाचार लाया हूँ महाराज!

परमाल— हाँ, क्यो नही, अशुभ समाचार तो आप कभी लाते ही नही! कहिये क्या शुभ समाचार है?

माहिल— दिल्ली नरेश पृथ्वीराज चौहान की पुत्री राजकुमारी वेला से महोवे के राजकुमार हमारे भानजे ब्रह्मा के विवाह की बात है महोवा नरेश! कहिये है न खुशखबरी?

परमाल— यह क्या कह रहे हो माहिल! क्या यह भी कभी हो सकता है?

माहिल— जिसे स्वय पर सन्देह होता है वही डूबता है। आप विश्वास कीजिये, दिल्ली की राजकुमारी महोवे की दुलहन बन कर ही रहेगी। लेकिन एक शर्त है!

परमाल— वह क्या?

माहिल— वह यह कि आपके वीर सामन्तो को अपनी वीरता की परीक्षा देनी पडेगी।

परमाल— अर्थात्?

माहिल— अर्थात् यह कि दिल्ली की अजेय सेना को पराजित किये विना ब्रह्मा से वेला का विवाह नही हो सकता। क्या आपके वीर सामन्त आल्हा और ऊदल मे इतना वल है कि वे दिल्ली की तलवारो से लोहा ले सकेंगे?

यह एक ललकार थी जो सामन्त ऊदल से सहन न हो सकी। उसकी भुजाएँ फडक उठी। उसने गर्व से गर्दन उठाते हुए कहा— 'दिल्लीपति चौहान के पास सूचना भेज दी जाये कि हम राजकुमार ब्रह्मा से वेला का विवाह स्वीकार करते है और दिल्ली की अजेय सेना से युद्ध के लिये प्रस्तुत है।'

तालव्य जो अब तक मौन बैठे सब कुछ सुन रहे थे, गम्भीरता से

उठे और धीरे से बोले— साले बहनोई की बातो मे तुम्हे बाधा नही डालनी चाहिए वीर सामन्त ! माहिलराज अपने भानजे ब्रह्मा के विवाह के आवेश मे फूले नही समा रहे है। लेकिन माहिलराज ! कहाँ दिल्ली और कहाँ महोबा, हाथी और चीटी का क्या सम्बन्ध !

माहिल— यदि चीटी का दाँव लग जाता है तो हाथी को मार ही डालती है। यह सुनहरी घडी हाथ से निकलनी नही चाहिए। इस विवाह का अर्थ होगा, दिल्ली की राजलक्ष्मी का महोबे मे आना। बस तनिक यह बात है कि 'हारिये न हिम्मत, बिसारिये न राम'।

तालन्य— महोबे में हिम्मत भी है और ईश्वर का नाम भी, किन्तु अन्धा आवेश नही। यह समय केवल बल-प्रदर्शनार्थ आपस मे तलवारे चलाने का नही, अब वे बाते छोड देनी चाहिये जिनसे देश की शक्ति कम होती है। जो आपस मे लडकर अपनी ही तलवारो से अपने गले काटते हैं, राजलक्ष्मी एक दिन उनसे विदा हो जाती है। वीरता के साथ जब बुद्धि नही रहती तब मानव मानव न रह कर भेडिया बन जाता है। आश्चर्य है कि दिल्ली मे किमास जैसे नीतिज्ञ मन्त्री के होते हुए विवाह के सुअवसर पर यह रक्तपात की चुनौती क्यो दी गई ! यह समय विवाह के अवसर पर तलवारे बजाने का नही है। डोलियों पर तलवारे चला चला कर हमारे देश का बहुत कुछ तो स्वाह हो चुका, अब जो शेष है उसे भी खोकर उस दिन को निमन्त्रण मत दो जिस दिन का खून से भीगा हुआ इतिहास हम मे से कोई लिखने वाला भी न रहे ! विधर्मियो के बजते हुए नगाडो की आवाज़ सुनो ! यवन इस देश की ओर बिल्ली की तरह आंखे चमका रहे है। यह समय संगठन का है, फूट का नही।

माहिल ने उपेक्षा से मुस्कराते हुए कहा— जान पड़ता है मन्त्री जी को महोबे की वीरता पर सन्देह है, तभी उनके मुँह से हार की बातें निकल

रही है। विवाह के अवसर पर वीरता की परीक्षा धर्म है, वैर नही। यदि दिल्ली की अजेय सेना को परास्त कर ब्रह्मा का विवाह वेला में हो गया तो दिल्ली और महोबे का वह अटूट सम्बन्ध स्थापित हो जायेगा जो किसी भी तलवार के काटने से नही कट सकता।

तालव्य— और यदि दिल्ली तथा महोबा लडते लडते समाप्त हो गये तो?

माहिल— ये कैसी बाते कर रहे है मन्त्री जी! व्यर्थ ही आप बात का बतगड बना रहे हैं। क्या यह भी कभी हो सकता है? यह तो परीक्षा के लिये साधारण सा खेल है, दिल्ली और महोबे का युद्ध नही।

तालव्य— मेरी आँखे देख रही हैं, यह खेल खून खराबे मे बदल जायेगा। दिल्ली की अजेय सेना कोई बच्चो की टोली नही है। चामुण्डराय जैसे कितने ही महायोद्धा इस सेना मे सामन्त है। महोबे के बाँके वीरो को इस खेल मे खपाना बुद्धिमानी नही है। राजपूत की तलवार जब एक बार म्यान मे निकल जाती हे तो महाकाली का खप्पर भी आगे बढ जाता है। तालव्य नही चाहता कि दिल्ली और महोबे के रण-बाँकुरे वीरो के रक्त मे महाकाली का खप्पर भरे। वह दिन दूर नही जब विधर्मी यवनो के सर काटने के लिये हमे तलवारे म्यान से निकालनी ही पडेंगी। महाचण्डी को अभी जगाना उचित न होगा माहिलराज!

माहिल— समय को जो अपने हाथो मे खो देता है वह राजलक्ष्मी को अपने पैरो से ठुकराता है। महोबे की श्रीवृद्धि के लिये यह परम शुभावसर है। इस समय चूडियाँ पहिन कर बैठना वीरोचित गुण नही। यदि यह घडी खो दी तो भविष्य महोबे की मूर्खता पर हँसेगा।

परमाल— माहिलराज हमारे सच्चे हितैषी है मन्त्रीजी! जान

पड़ता है कोई विशेष लक्षण दीख रहा है, तभी तो ये इतना आग्रह कर रहे हैं।

तालव्य— दुनिया में बात बनाने वाले हितैषी बहुत होते हैं महाराज! किसी भी व्यक्ति की सबसे बड़ी दुर्बलता यह होती है कि वह अपने भेद को अपने अन्तर में छिपा कर नहीं रख पाता। संसार में बहुत से ऐसे हितैषी भी होते हैं जो भेद लेकर छुरा भोंक देते हैं। जिसके हृदय की बात ज़बान जान लेती है वह बुद्धिहीन है। राजा को किसी को भी अपना सगा नहीं समझना चाहिये। सगे से सगे पर भी सन्देहात्मक दृष्टि रखना राजा का बड़ा गुण है।

सुनकर माहिल के तन-बदन में आग लग गई, पर वह अपना सारा क्रोध प्रतिशोध के पानी में पी गया और मुस्कराता हुआ बोला— सत्य कहते हैं मन्त्री जी! बिना सोचे समझे जो काम किया जाता है उससे हानि भी हो सकती है। आप अपना भला बुरा भली भाँति सोच लें महाराज! अवश्य ही मन्त्री जी के मस्तिष्क में कोई ऐसी राजनीति है जो बहुत् गहरी हो सकती है। अवसर पाकर सगे भी शत्रु हो ही जाते हैं।

तालव्य— जिस प्रकार मन्थरा ने केकयी की मति हरी थी उसी प्रकार न जाने कब से महोबे की मति हरने का प्रयत्न चल रहा है, पर कृपा है माँ सरस्वती की जो हमारी बुद्धि भ्रष्ट नहीं हुई।

मन्त्री जी कुछ और भी कहते पर शान्ति में क्रान्ति की तरह वीरवर मलखान के आगमन से रंग बदल गया। जयघोष से राजप्रासाद गूँज उठा, उत्साह से लहरें उमड़ आईं। महाराज ने स्वयम् उठ कर मलखान को छाती से लगाया, मन्त्री जी ने अपने कण्ठ से जयमाला निकाल पहिनाई और चारों ओर से हृदय-सुमन बरसने लगे।

उत्साह और चहल-पहल के बाद जब वातावरण शान्त हुआ तो,

माहिलराज ने अपनी हीरे और मोतियो की मूठ की तलवार सामन्त राजा मलखान को भेंट करते हुए कहा— अभी एक युद्ध और शेष है सामन्त! यदि तुम्हारे हाथ मे तलवार होते हुए दिल्लीपति की पुत्री बेला मे हमारे राजकुमार ब्रह्मा का विवाह नही हुआ तो धिक्कार है तुम्हारी वीरता को!

उत्साह और वीरता के आवेश मे सामन्त मलखान ने तलवार को चमचमाते हुए कहा— यदि महोबे के गौरव के लिये साक्षात् काल मे भी भिडना पडे तो आपका यह सेवक उपस्थित है। बेला का विवाह राजकुमार ब्रह्मा से होगा और अवश्य होगा।

माहिलराज— लेकिन अच्छी तरह सोच लो सामन्त! दिल्ली की अजेय सेना आज तक किसी से परास्त नही हुई। चामुण्डराय का नाम सुनते ही बडे बडे हाथी उलटे पैरो भाग लेते है। कही ऐसा न हो कि पैर पीछे लौट आये!

मलखान— मलखान की मौत की खबर आ सकती है, लेकिन मलखान का पैर पीछे कभी नही लौटेगा। दिल्ली नरेश का आज तक वीरो की तलवार से सामना नही हुआ। अभी तक उसने काठ की तलवारो से लडाइयाँ लडी है। महोबे का लोहा सामने आते ही दिल्ली की तलवारे टूट कर गिर पडेंगी।

तालन्य— भावुकता और आवेश मे वह आग न लगाओ सामन्त! जो बुझाये न बुझ सकेगी। महोबे और दिल्ली का युद्ध यदि छिड गया तो दासता की जजीरें सदा सदा के लिये सबके पैरो में पड जायेंगी। शान्ति और धैर्य से सोचे बिना किसी भी सग्राम को मोल लेना वीरोचित गुण नही। माहिलराज के प्रश्न पर गम्भीरता से सोचने की आवश्यकता है, सहसा करने से पीछे पछताना पडेगा। आज नही, कल इस सम्बन्ध में सोच कर कुछ निर्णय करना राजनीति के अनुकूल है।

माहिल— जान पडता है महामन्त्री बूढे होने के साथ साथ अपने हौसले भी खो चुके। सामने दीखती हुई लक्ष्मी को साँप के सर की मणि समझकर महामन्त्री भयभीत हो उठे है। ऐसा लग रहा है जैसे यहाँ के सामन्तो की वीरता मर चुकी है। छोटी छोटी जय के बाद बडे बडे वीर सो गये है। अब महोबे के राज्य मे वीरो के हाथ मे तलवार नही, चूडियाँ सुशोभित होगी।

तालन— सामन्तो को चढाये न जाओ माहिलराज! कही आग धधक उठी तो सब कुछ स्वाह हो जायेगा। भारतवर्ष के ये दुर्ग, ये मन्दिर, ये इन्द्रपुरी को भी लज्जित करने वाली सडके, यह वैभव जिनको देवगण भी ललचाई हुई आँखो से देखते है, जानते हो क्या होगा उन सबका! खण्डहरो मे श्मशान सुलगते दिखाई देगे, पूर्णिमा अमावस्या मे बदल जायेगी।

तालन्य कुछ और भी कहते पर प्रहरी के साथ दिल्ली का एक सुसज्जित नाई चमचमाता हुआ राजसभा मे पधारा, जिसके आने ही राजसभा का वातावरण आवेश से शान्ति मे बदल गया। नाई ने अनेको राजसी अभिवादन के उपरान्त अनुशासन मे खडे हो गर्व से कहा— “दिल्ली की राजकुमारी बेला के विवाह के लिये महाप्रभुत्वसम्पन्न परम वीर दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान ने घोषणा की है कि जिसमे दिल्ली की अजेय सेना को पराजित करने की सामर्थ्य हो वह आकर दिल्ली की राजकुमारी बेला की डोली ले जाये।”

विवाह की शर्त सुनते ही राजसभा मे नीरवता छा गई। कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात् माहिलराज ने मुस्कराते हुए कहा— जान पडता है महोबे मे कोई जीवित रहा ही नही। ललकार सुनते ही सन्नाटा छा गया! चूहो के सामने तो बिल्ली भी शेर हो ही जाती है। आज जब दिल्लीपति ने ललकारा है तो उठी हुई गर्दने नीचे झुक गई!

सुनते ही ऊदल और मलखान की आँखें लाल हो गई। भुजदण्ड फड़क उठे। अपने मूढ़े से सोते हुए सिंह की तरह गरज कर उठते हुए मलखान ने कहा— 'हम दिल्लीपति की शर्त स्वीकार करते हैं, राजकुमार ब्रह्मा से राजकुमारी बेला की सगाई हम मानते हैं। चौहान से जाकर कह दो कि अपनी तलवारों की धार तेज कर लें। रक्त से होली खेलने के लिये महोबे की सेना आगामी बसन्त पचमी पर आ रही है।'

कहते हुए मलखान ने नाई के हाथ से नारियल छीन लिया और ब्रह्मा के माथे पर सगाई का टीका लगा गर्व से अपने आसन पर आ विराजे।

माहिल के मन की इच्छा के फूल खिल गये। वह आग धधक उठी जिसे लगाने के लिये वह न जाने कब से श्मशान सिद्धि कर रहा था। वह प्रचण्ड अग्नि पैदा हो गई जो विनाश की परिक्रमा की तरह भ्रमण करती है। मुस्कराते हुए माहिल ने सामन्तों के गुण गाते हुए कहा— 'किसकी शक्ति है जो महोबे के वीरों को चुनौती दे सके। अब गर्वीले दिल्लीपति को पता चल जायेगा कि लोहे की तलवारों से टकराने का क्या परिणाम होता है। अब तक उसे काठ की तलवारों से लड़ना पड़ा है, इस्पात की तलवारों से खेलने का अवसर तो अब आया है।'

परमाल— सामन्त ने जब सगाई स्वीकार कर ली है तो नाई को उसका हक देकर विदा किया जाये और दुलहन के लिये नौलखा हार तथा सिन्दूर माँग भरने के लिये भेज दिया जाये।

मुट्ठी गर्म कर माँग भरने की सामग्री ले नाई ने दिल्ली की राह पकड़ी। नाई के मन में आज प्रसन्नता भी थी और आश्चर्य भी। घोड़े पर सवार वह सोचता हुआ चला जा रहा था। चलता चलता जब वह

नदी किनारे पानी पीने के लिये रुका तो उसने देखा कि एक अत्यन्त वृद्ध साधु सरिता मे स्नान कर रहे है।

जब साधु स्नान कर नदी से बाहर निकले तो नाई ने चरण छूकर जल पिया और फिर बाबाजी की कुटी पर साधुसग की इच्छा से आ विराजा। कुछ पल मौन रहने के बाद बाबाजी मुखर हुए। नीचे से ऊपर तक आगन्तुक को निहारते हुए उन्होने कहा— जान पडता है दिल्ली के रहने वाले हो ?

नाई— हाँ बाबाजी, दिल्ली का राजनाई हूँ। वहां के नरेश पृथ्वीराज चौहान की पुत्री के विवाह की शर्त लेकर अनेक रजवाडो मे घूमता हुआ अब महोबे से दिल्ली वापिस जा रहा हूँ।

बाबाजी— तो राजा परिमर्दिदेव ने शर्त स्वीकार कर ब्रह्मा ने बेला का सम्बन्ध स्वीकार कर ही लिया। सचमुच होनी बडी बलवान होती है।

नाई— आप तो सब कुछ जानते है बाबाजी ! जान पडता है आप त्रिकालदर्शी ऋषि है।

बाबाजी— नही बच्चा, न तो मै त्रिकालदर्शी ऋषि हूँ और न कोई चमत्कारी। मै तो एक भगवद्भक्त हूँ और गगा किनारे प्रभु के भजन मे रत रहता हूँ। पढते समय कुछ ज्योतिष का अध्ययन कर लिया था, उसी से कुछ भविष्य देख लेता हूँ।

नाई— तो क्या होनी को मिटाया नही जा सकता बाबाजी !

बाबाजी— मिटाया क्यो नही जा सकता ! सामर्थ्य होनी चाहिये, विधि का विधान भी बदला जा सकता है। किन्तु होनी भी बडी बलवान होती है।

नाई— होनी क्यो होती है बाबाजी !

बाबाजी— अनीति की प्रतिक्रिया का नाम होनी है। जो जैसा करता है वैसा ही भरता है। हमारा देश आज अनीति की राह पर है, धर्म के नाम पर अधर्म का बोलबाला है, बल के अहंकार में बुद्धि खो गई है। कंचन, कामिनी और मदिरा के मद की तरह मनुष्य आज बेहोश है। जिधर देखो अमृत-कन्या के पीछे राजपूतों की तलवारें रक्त चाट रही हैं। जिधर दृष्टि जाती है उधर ही से फूट की विषैली नागिन फुकार फुकार कर इस देश की गरिमा को डसती चली जा रही है। दुलहन बनने से पहिले ही न जाने कितनी कुमारियाँ चिता की सेज पर सदा के लिये सो जाती हैं। कुरीतियाँ न जाने इस देश को कहाँ ले जाकर डुबायेंगी! हरि इच्छा! हरि हर हरि हर!

नाई— डूबते को बचाने का कोई उपाय होना चाहिये न बाबाजी! सन्यासी में तो बड़ी शक्ति होती है।

बाबाजी— बाबा के पास शक्ति नहीं, भक्ति है, भक्ति!

नाई— तो भक्ति से ही भगवान को बुलाइये। सुना है भक्तों की पुकार से वे नंगे पैरों दौड़ आते हैं। कहीं ऐसा न हो कि इन हरे भरे खेतों में होली जल उठे।

बाबाजी— जो आग धधकनी है उसकी चिनगारी तो लग चुकी है। अब तो भगवद्भक्ति के गीत गा गाकर जितनी भी आग बुझाई जा सके बुझाने का यत्न करना चाहिये।

बाबाजी इतना कह कर मौन हुए ही थे कि सामने से उनके दो शिष्य ज्ञानदेव और नामदेव सितार पर हरिभजन गाते हुए आ पहुँचे। गुरु को प्रणाम कर शिष्यों ने झोली में से फल निकाल कर गुरु के बराबर में रख दिये और विनम्रता से कहा— "हरिभजन कोई नहीं सुनता गुरुजी! भिक्षा माँगने जहाँ भी जाते हैं वहीं से अमृत-कन्याओं के मदमाते स्वरों की गूँज से टकराकर भगवद्भक्ति के गीत रुक जाते हैं।

आज हर राजपूत रूप और शृगार की कथा सुनना चाहता है। उसकी तलवार आज कामिनी की प्राप्ति के लिये म्यान मे बाहर निकलती है। जिधर जाओ उधर ही बिछुओ की रुनझुन के साथ तलवारो की झनझनाहट मातम के गीत पढती सुनाई देती है। जान पडता है रूप के मोह मे हमारा देश फूका जा रहा है।"

बाबाजी— आग लगाने वाले लगाते है और बुझाने वाले बुझाया करते है। जलती हुई दुनिया को भगवद्भक्ति के जल से शान्ति देते रहो, जैसी हरि की इच्छा होगी हो जायेगा।

कहते कहते बाबाजी ने नाई की ओर देखा और विनम्रता से बोले— जाओ अतिथि, अब पश्चिम दिशा से जाना। उत्तर दिशा मे भीषण आंधी आने वाली है। कुछ ही देर मे नदी मे बाढ भी आयेगी। लहरो की जडता सजग होने की सूचना दे रही है। उठो शिष्य, अब किसी और तट पर आसन जमायेगे।

कहकर बाबा रामदेव उठे और अपने दोनो शिष्यो के साथ तेजी से एक ओर चल दिये। और तुरन्त ही चल दिया अश्व पर सवार हो राजनाई दिल्ली के लिये दूसरी दिशा से। हवा से बाते करता हुआ मंज़िल पर मंज़िल पार कर वह दिल्ली की सीमा मे आ पहुँचा।

वैभवपूरित दिल्ली की दमदमाती हुई सडको पर चमचमाते हुए नाई महोदय उत्थान और पतन मे गोते लगाते हुए [illegible] दिल्ली दरबार मे पहुँचे। राजपरिषद् शान से लगा हुआ था। सामन्तगण अनूठी अदा से विराजमान थे। मन्त्रीवृन्द अपने अपने आसनो की शोभा प्रदान कर रहे थे तथा ऊँचे सिहासन पर पृथ्वीराज चौहान देवराज इन्द्र की तरह सजे हुए थे। राजकुमारी का टीका लेकर गये हुए नाई ने दिल्लीपति को दूर ही से अभिवादन कर [illegible] विनम्रता से कहा— 'महाराज की जय हो।' अनेको रजवाडो मे [illegible]

किन्तु दिल्ली की अजेय सेना का नाम सुनते ही सब ने राजकुमारी का टीका लेने से इन्कार कर दिया। अन्ततोगत्वा महोबे के राजा परिमर्दिदेव के दरबार में पहुँचा। वहाँ के रणबाँकुरे सामन्त ऊदल और मलखान ने राजा परिमर्दिदेव की अनिच्छा होते हुए भी दिल्ली की शर्त स्वीकार कर राजकुमारी बेला की मँगनी का नारियल ले लिया। बसन्त पचमी पर वे अजेय सेना से युद्ध के लिये उपस्थित होंगे। राजकुमारी की गोद भरने को महोबे वालो ने सिन्दूर और यह नौलखा हार भेजा है।"

कहते हुए नाई ने नौलखा हार दिल्लीपति के आगे रखा और पृथ्वीराज ने सिहासन से उठ हुकारते हुए कहा— बहुत शोर सुन रहे हैं ऊदल और मलखान की वीरता का, अच्छा हुआ जो हम से टकरा गये। अब पता चल जायेगा कि दूल्हा के हाथ मे मेहँदी लगेगी या लहू।

किमास— रक्त के खेल से मेहँदी वाले हाथो को रगना वीरता का चिता की ज्योति से स्वागत है। यह खेल बहुत महँगा पडेगा।

चामुण्डराय— महँगा क्या पडेगा, दिल्ली के सम्मान को चार चाँद ाग जायेंगे। ऊदल और मलखान की वीरता की कीर्ति के गीत सुनते ुनते कान बहरे हो चुके थे। हम स्वय उन्हे किसी बहाने से चुनौती देने ् इच्छुक थे, अच्छा हुआ जो अपनी मौत के लिये गीदड स्वय गाँव की ोर दौड पडा।

किमास— आग धधकनी जितनी सरल होती है, बुझनी उतनी रल नही होती वीर सामन्त! तुम्हारी वीरता पर दिल्ली राज्य को र्व है, किन्तु न जाने यह युद्ध मुझे क्यो नही भा रहा।

पृथ्वीराज— हम भी वही चाहते है जो वीर सामन्त चामुण्डराय े कहा। नीति और वीरता मे महोबे वालो को ऐसा उत्तर मिलना चाहिए कि दिल्ली के नाम से साक्षात् यमराज भी काँपने लगे। अब हम

चलते है, चल कर महारानी को भी यह शुभ समाचार सुना दे। बेटी के विवाह के लिये वे उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही है।

मन्त्री ने सोचते हुए मन ही मन मे कहा— "माँ बेटी के हाथो मे मेहदी देखने को उत्सुक है और पिता बेटी के हाथ दामाद की गर्दन काट कर रगना चाहता है। ईश्वर ही जाने कि इन दोनो मे से किस की खुशी पूरी होगी।"

द्विविधा मे डूबे हुए कुशल मन्त्री ने सकेत से राजसभा समाप्त की और अपने महल मे उस वातायन के पास आ पहुँचे जहाँ से प्रतिदिन एक तस्वीर देखा करते थे।

५

"न जाने नारी मे क्या है कि पाषाण भी उसके इंगित से पिघल जाता है, कठोर से कठोर मनुष्य रूप की सुनहरी चमक से चमत्कृत हो उठता है। कौन है वह, सौन्दर्य जिसे अपना नहीं कर लेता! मुझ जैसे पत्थर पर भी तुमने यह कैसा जादू कर दिया अमृतमयी! आँखों से जब कुछ भी देखता हूँ तो तुम्हारी सूरत सामने दिखाई देने लगती है, कान जब कुछ भी सुनते हैं तो तुम्हारा गीत सुनाई देने लगता है, मस्तिष्क जब कुछ भी सोचता है तो सहसा तुम्हारा ध्यान टकरा जाता है। हृदय में तुम, बुद्धि में तुम, यहाँ तक कि रोम रोम में तुम रम चुकी हो। तुम सुन्दर हो, तुम सरस हो, तुम्हारी अन्तर में वह ज्योति है जिससे अँधेरे में भी उजाला हो जाता है। तुमने वह प्यास जगा दी है जो मृत्यु की शीतलता से भी शान्त नहीं होती।"

वातायन से रूप की रानी कर्नाटकी को देखते हुए महाम किमास न जाने कितनी कल्पनाओ मे गोते लगा रहे थे। प्रणय ने उन्हे इस प्रकार दवाया कि राजनीति के खिलाडी रूप के उतार चढाव मे उलझ गये। कर्नाटकी ने खिडकी से मुस्कराते हुए मन्त्री को प्यार का मौन निमन्त्रण दिया, मानो चाँद ने चकोर को अपनी ओर खीच लिया हो। एक मूक आदेश पर मन्त्री महोदय ने अपने आपको न्यौछावर कर दिया। पता नही प्यार मौन है या मुखर! यह वह भाषा है जो विना वोले ही वुला लेती है।

किमास से न रहा गया। वे चुम्वक की ओर लोहे की तरह खिचे चले गये। वातायन छोड कर वे टहलते हुए कर्नाटकी के महल के द्वार पर जा पहुँचे और प्रभावशाली भाषा मे किन्तु कांपते हुए कहा— "रूप की रानी से कहो कि किमास कुछ वाते करने आये है।"

प्रतिहारी ने वलखाती हुई गुलाव की पाँखुडी से कहा— "महामन्त्री किमास पधारे है।"

कर्नाटकी चमत्कृत होकर उठी और मन ही मन मे कहने लगी— "महामन्त्री किमास और एक वेश्या के महल मे! आज तक जिसे घृणा से देखते थे, उसकी ओर आज स्वय खिचे चले आ रहे है! वडे वडे राजाओ को पराजित करने वाली राजनीति की शक्ति आज एक वेश्या के चरणो मे झुकने को आकुल है! देखती हूँ मन्त्री महाराज की आज कौनसी राजनीति सफल होती है।"

चमचमाती हुई कर्नाटकी महामन्त्री के सामने आ पहुँची और उपालम्भ की मुस्कराहट के साथ वोली— कहिये, गगाजल आज अपवित्र पानी की ओर कैसे वह निकला?

किमास— इसलिये कि अपवित्रता को स्वय मे मिलाकर पवित्र कर दे।

कर्नाटकी— वाक्पटुता से कर्नाटकी को बहकाने का प्रयत्न न करो मंत्रीजी! मनुष्य चाहे कितना भी छिपाये पर मन की बात आँखों में बोल ही उठती है। कहिये क्या आज्ञा है?

किमास— मैं यह कहने आया था कि आज के घोर काल में महाराज को स्वयं से जितना दूर रखो उतना ही दिल्ली की सुरक्षा के लिये हितकर है।

कर्नाटकी— आखिर यहाँ आने के लिये आपने यह बहाना बना ही लिया। बस और कुछ?

किमास— हाँ, कुछ और भी बातें करनी हैं।

कर्नाटकी— तो यह कहिये न, मैं आपके स्वागत के लिये उत्सुक हूँ। चलिये अन्दर आराम से बैठकर बातें करेंगे।

किमास— नहीं, कहीं महाराज आ गये तो आपत्ति आ जायेगी।

कर्नाटकी— आप नहीं जानते मन्त्रीजी, मैं एक वेश्या हूँ। पुरुष को पुरुष से छिपाना मुझे खूब आता है। मेरे होते हुए महाराज तो क्या रोशनी की किरण तक आपको नहीं देख सकती। घबराइये नहीं, मेरे साथ चलिये।

कहते हुए कर्नाटकी महामन्त्री किमास को अपने शयन-कक्ष में ले आई।

रंग बिरंगे अद्भुत प्रकाश में आते ही कर्नाटकी इन्द्रधनुष की सुन्दरता सी कौंध उठी। महामन्त्री बिजली की उस दमक को सहन न कर सके। स्पर्श के समीरण में उनका रोम रोम मचल उठा। खोई हुई आँखों से कर्नाटकी को देखते हुए किमास ने कहा— बस अब दूरी नहीं सही जाती।

कर्नाटकी— इतनी व्यग्रता! कुछ धैर्य रखो महामन्त्री! पहली घूट मे ही यदि सब कुछ पी गये तो फिर दूसरी घूट के लिये इस वेश्या के पास कुछ भी न रहेगा।

किमास— तुम्हारे पास अशेष सौन्दर्य है, वह रूप जो कभी पुराना नही पडता, वह आकर्षण जिससे पत्थर भी चेतन हो जाते है। मैंने हार मान ली। राजनीति के सरदर्द से इतना पीडित हूँ कि जितना कोई सहस्र बिच्छुओ का काटा हुआ हो सकता है। आओ, निकट आओ! अपनी मधुरता से जीवन के विष को अमृत बना दो!

कहते हुए जैसे ही किमास ने कर्नाटकी को पकडने के लिये घूमना चाहा वैसे ही द्वार पर महाराज दिखाई दिये।

कर्नाटकी पीठ फेरे खडी थी। एक पल के लिये किमास का स्पर्श और शब्द न पाकर वह सब कुछ समझ गई और रुँधे हुए कठ से कहने लगी— "नही, यह नही हो सकता, मै महाराज को स्वय से पृथक् नही कर सकती। जाओ, चले जाओ मत्री महोदय! यदि तुमने दिल्ली की रक्षा के लिये महाराज को मुझसे दूर करने की चेष्टा की तो मै तुम पर अनुचित दोष लगाकर महाराज से तुम्हे दण्ड दिलाऊँगी। जाओ और इस प्रयत्न के लिये कभी मेरे पास न आना!"

कर्नाटकी ने कुछ इस तरह अनजान बन कर कहा जैसे उसे कुछ पता नही कि द्वार पर महाराज खडे है। जैसे ही महाराज ने उत्कण्ठा से कहा "क्या है कर्नाटकी!" वैसे ही कर्नाटकी पागल की तरह दौड कर महाराज से चिपट गई और आँसुओ से महाराज का वक्ष भिगोती हुई बोली— "ऐसा भी क्या राज-काज हो गया जो यहाँ तक आने के लिये घटो प्रतीक्षा करनी पडती है। और ये है आपके मत्री महोदय जो मुझसे कह रहे थे कि तुम महाराज के लिये नागिन हो, उनको डस लोगी। यदि तुम्हे महाराज और दिल्ली से प्यार है तो

उनका पीछा छोड दो'। "महाराज! मैं वेश्या अवश्य थी पर अब तो आपकी दासी हूँ, केवल आपकी। आपको छोडकर मैं अब कहाँ जाऊँ?"

कर्नाटकी ने कुछ इस ढग से कहा कि महाराज कर्नाटकी को अपने स्थान पर और मन्त्री को अपने स्थान पर अपना हितैषी समझकर अट्टहास करते हुए बोले— "चिन्ता न करो कर्नाटकी! दिल्ली-पति के यहाँ रह कर तुम्हे कोई कष्ट नही हो सकता। और देखो मन्त्री महोदय, तुम्हे कर्नाटकी के सम्बन्ध मे जो भी कहना हो वह केवल हमसे कहा करो! अब आप जा सकते है। कुछ देर बाद हम से मिलना!"

महाराज की आज्ञा सुनते ही महामन्त्री किसास नारी की बुद्धि की प्रशंसा करते हुए जान बचाकर चल दिये और मार्ग मे सोचने लगे— "सारी राजनीति पढकर भी अभी तक अपढ ही रहे। राजा और मन्त्री जो जब तक इस तरह के गुरु न मिले तब तक वे अधूरे है। कर्नाटकी ने इस समय हमे किस प्रकार मृत्यु से बचाया है! क्या यह उसी प्रकार नही जिस प्रकार एक कुशल नीतिकार कुचक्रो से अपने देश की रक्षा करता है।"

सोचते हुए किसास अपने कमरे मे आ गये और आप ही आप कहने लगे— "न जाने कैसा जाल बिछ रहा है कि सारा देश उसमे उलझ कर मृत्यु को प्राप्त होना चाहता है। व्यक्ति और समाज स्वतन्त्र हो गये है। दिल्ली के चारो ओर विनाशकारी बादलो का नृत्य शुरू होना चाहता है। किसी भी समय नही, अभी वह आग सुलग रही है जिसमे किसास की बुद्धि भी जल कर भस्म होना चाहती है। दिल्ली की आत्मा पुकार रही है कि किसास! मुझे बचाओ, और कर्नाटकी का रूप मुझे बरबस पीछे लिये जा रहा है। राजमन्त्री का जीवन भी कितना दयनीय होता है! शान्ति उससे कोसो दूर हटी रहती है। सामूहिक सुख

के सामने व्यक्तिगत भावना कराह कर रह जाती है। नारी मनुष्य की कितनी बड़ी दुर्बलता है! नही, यह भूल है। नारी दुर्बलता भी है और भूल भी। जिसने नारी के सौन्दर्य का अमृत नही पिया उसमे शक्ति का सचार कहाँ से हो सकता है! नारी ही वह निधि है जिसे पाकर कुछ पाने की इच्छा शेष नही रहती। यह कैसी माया फैलती जा रही है! सारा देश नारीमय होना चाहता है! किमास, तुम्हे यह क्या हो रहा है! सँभलो किमास, सँभलो! तुमने यदि चूक की तो देश के पैरो मे ज़जीरे पड जायेगी। बडी विचित्र हो गई है आज मेरी दशा, मुझे कर्नाटकी और देश दोनो ही समान रूप से प्रिय है।"

चिन्तन मे डूबे हुए किमास इधर से उधर टहलने लगे। टहलते टहलते उन्होने घटो बिता दिये। वे और भी टहलते रहते पर प्रतिहारी ने आकर राजाज्ञा दी कि महाराज ने आपको इसी समय स्मरण किया है। किमास जैसे खडे थे वैसे ही महाराज के महल की ओर चल पडे और बात की बात मे दिल्लीपति के उन मणिमण्डित कक्ष मे आ पहुँचे जिसमे पृथ्वीराज सोकर जागे हुए शेर की तरह उनीदे से लेट रहे थे। किमास को देखते ही वे लेटे ही लेटे बोले— "आओ महामन्त्री! कहो क्या चिन्ता है?"

किमास— चिन्ता यही है महाराज! कि दावानल से देश को कैसे बचाया जाये?

पृथ्वीराज— तुम सुख की नीद सोओ महामन्त्री! आग को बुझाने के लिये चौहान की भुजाओ का पानी पर्याप्त है।

किमास— महाराज की भुजाओ के बल पर तो दिल्ली की शान है, किन्तु महाराज! महोवे मे जो युद्ध होने जा रहा है वह भयानक दीखता है।

उनका पीछा छोड दो'। "महाराज! मैं वेश्या अवश्य थी पर अब तो आपकी दासी हूँ, केवल आपकी। आपको छोडकर मैं अब कहाँ जाऊँ?"

कर्नाटकी ने कुछ इस ढंग से कहा कि महाराज कर्नाटकी को अपने स्थान पर और मन्त्री को अपने स्थान पर अपना हितैषी समझ कर अट्टहास करते हुए बोले— "चिन्ता न करो कर्नाटकी! दिल्ली-पति के यहाँ रह कर तुम्हे कोई कष्ट नही हो सकता। और देखो मन्त्री महोदय, तुम्हे कर्नाटकी के सम्बन्ध मे जो भी कहना हो वह केवल हमसे कहा करो! अब आप जा सकते है। कुछ देर बाद हम से मिलना!"

महाराज की आज्ञा सुनते ही महामन्त्री किमाम नारी की बुद्धि की प्रशंसा करते हुए जान बचाकर चल दिये और मार्ग मे सोचने लगे— "सारी राजनीति पढकर भी अभी तक अपढ ही रहे। राजा और मन्त्री को जब तक इस तरह के गुरु न मिले तब तक वे अधूरे है। कर्नाटकी ने इस समय हमे किस प्रकार मृत्यु से बचाया है! क्या यह उसी प्रकार नही जिस प्रकार एक कुशल नीतिकार कुचक्रो से अपने देश की रक्षा करता है!"

सोचते हुए किमाम अपने कमरे मे आ गये और आप ही आप कहने लगे— "न जाने कैसा जाल बिछ रहा है कि सारा देश उसमे उलझ कर मृत्यु को प्राप्त होना चाहता है। व्यक्ति और समाज स्वतन्त्र हो गये है। दिल्ली के चारो ओर विनाशकारी बादलो का नृत्य शुरू होना चाहता है। किसी भी समय नही, अभी वह आग सुलग रही है जिसमे किमाम की बुद्धि भी जल कर भस्म होना चाहती है। दिल्ली की आत्मा पुकार रही है कि किमाम! मुझे बचाओ, और कर्नाटकी का रूप मुझे बरबस खींचे लिये जा रहा है। राजमन्त्री का जीवन भी कितना दयनीय होता है! शान्ति उससे कोसो दूर हटी रहती है। सामूहिक सुख

के सामने व्यक्तिगत भावना कराह कर रह जाती है। नारी मनुष्य की कितनी बडी दुर्बलता है! नही, यह भूल है। नारी दुर्बलता भी है और भूल भी। जिसने नारी के सौन्दर्य का अमृत नही पिया उसमे शक्ति का सचार कहाँ से हो सकता है! नारी ही वह निधि है जिसे पाकर कुछ पाने की इच्छा शेष नही रहती। यह कैसी माया फैलती जा रही है! सारा देश नारीमय होना चाहता है! किमास, तुम्हे यह क्या हो रहा है! सँभलो किमास, सँभलो! तुमने यदि चूक की तो देश के पैरो मे जजीरे पड जायेगी। बडी विचित्र हो गई है आज मेरी दशा, मुझे कर्नाटकी और देश दोनो ही समान रूप मे प्रिय है।"

चिन्तन मे डूबे हुए किमास इधर से उधर टहलने लगे। टहलते टहलते उन्होने घटो विता दिये। वे और भी टहलते रहते पर प्रतिहारी ने आकर राजाज्ञा दी कि महाराज ने आपको इसी समय स्मरण किया है। किमास जैसे खडे थे वैसे ही महाराज के महल की ओर चल पडे और बात की बात मे दिल्लीपति के उस मणिमण्डित कक्ष मे आ पहुँचे जिसमे पृथ्वीराज सोकर जागे हुए शेर की तरह उनींदे से लेट रहे थे। किमास को देखते ही वे लेटे ही लेटे बोले— "आओ महामन्त्री! कहो क्या चिन्ता है?"

किमास— चिन्ता यही है महाराज! कि दावानल से देश को कैसे बचाया जाये?

पृथ्वीराज— तुम सुख की नीद सोओ महामन्त्री! आग को बुझाने के लिये चौहान की भुजाओ का पानी पर्याप्त है।

किमास— महाराज की भुजाओ के बल पर तो दिल्ली को गर्व है किन्तु महाराज! महोबे से जो युद्ध होने जा रहा है वह भयानक दीखता है।

पृथ्वीराज— भयानक हो या महायक, जो कुछ भी हो, अब तो युद्ध होगा ही।

किमास— युद्ध तो होगा ही, किन्तु जय के लिये नीति मे काम लेना तो आवश्यक है।

पृथ्वीराज— कहो क्या नीति मे काम ले मन्त्रिवर!

किमास— नीति यह कहती है कि बलवान शत्रु को अपने ऊपर चढता देख बुद्धिमान राजा को जैसे भी हो उसकी शक्ति कम कर देनी चाहिये अर्थात् छल बल से जैसे भी बने हमे महोबे वालो की ताकत कम कर देनी पडेगी।

पृथ्वीराज— तो उपाय बताइये मन्त्रीजी!

किमास— उपाय यह है महाराज कि महोबे की एक बडी शक्ति सिरसा मे राज्य करती है। सामन्त मलखान के सरक्षण मे एक बडी सेना है। मलखान बुद्धिमान भी है और वीर भी। किसी प्रकार सिरसे पर अधिकार करना चाहिये।

पृथ्वीराज— वह कैसे?

किमास— वह ऐसे कि मलखान को सूचना दिये बिना ही अकस्मात् सिरसे पर आक्रमण कर दिया जाये जिससे कि सँभलने से पहले ही शत्रु को जीत लिया जाये।

पृथ्वीराज— किन्तु यह तो अपराध होगा। धर्म के विरुद्ध युद्ध करना चौहान ने नहीं सीखा।

किमास— युद्ध मे जो धर्म को मध्य मे रखता है वह हार को प्राप्त होता है। राम ने रावण को अधर्म से मारा। कृष्ण ने कौरवो को अधर्म से पराम्त किया। चाणक्य ने नन्द को छल से मारा। फिर बताओ कौन है इतिहास के पृष्ठो पर जिसने युद्ध मे बिना राजनीति के

जय प्राप्त की है। राजनीति का सबसे बडा सिद्धान्त यह है कि जैसे भी हो शत्रु को इस प्रकार नष्ट कर डालो कि फिर उसकी राख से पृथ्वी पर दाना तक न उपज सके।

पृथ्वीराज— तुम ठीक कहते हो किमास ! हम कल ही सिरसे पर अकस्मात् आक्रमण कर देंगे।

किमास— तो फिर शेष सबको दिल्ली की अजेय सेना मार डालेगी। महोबे के सामन्तो को चुन चुन कर यदि धरती मे न मिलवा दिया तो मेरा नाम किमास नही। इन 'बनाफलो' की नाक पर छीकते ही मक्खी बैठती है। जब तक ये घमण्डी मृत्यु या दिल्ली की शरण मे नही आ जायेगे, तब तक आपस के युद्ध नही मिट सकते। महोबे वाले बहुत घमण्डी हो गये है, उनका सर कुचलना ही पड़ेगा।

पृथ्वीराज— जब तक चौहान के हाथ मे तलवार और धनुषबाण है तब तक महामन्त्री को इतनी चिन्ता करने की आवश्यकता नही। शीघ्र ही आप सिरसा विजय की सूचना सुन लेगे।

किमास— आपकी प्रतिज्ञा और वीरता पर मुझे विश्वास है। चाहे कितनी भी आपत्तियाँ क्यो न आये किन्तु किमास के रहते दिल्ली का बाल भी बाँका नही हो सकता। सारे देश मे ऐसा मन्त्र फूंक दूगा कि दिल्ली से बडी शक्ति किसी भी राज्य की न हो पायेगी। ऐसी परिस्थिति मै पैदा ही न होने दूगा कि दो बडे राजा मिलकर दिल्ली पर आक्रमण कर सके। आप सिरसा विजय कीजिये और मै राजनीति के दाँव फेकता हूँ।

पृथ्वीराज— देवी दुर्गे की कृपा से दिल्ली की धूल को भी शत्रु के पैर नही छू सकते। बस अब इस समय और कुछ मन्त्रणा नही करनी है। तनिक इन घमण्डी राजाओ से निपट लूं, फिर दिल्ली के अन्तर्गत एक नया राज्य स्थापित करने का बीडा उठाऊंगा।

मत्रणा करके मत्री महोदय अपने स्थान को चले गये और पृथ्वीराज कर्नाटकी की उस मदभरी जवानी के महल में फिर आ गये, जहाँ से वे अभी अभी सौन्दर्य की शराव पीते पीते गये थे।

आते ही चौहान झूमते हुए शराबी की तरह अपनी दोनो भुजाये कर्नाटकी की कटि मे डाल रूप के प्याले पर प्याले पीने लगे।

मचलते हुए उन्होने कहा— तुममे अमृत है कर्नाटकी! तुम्हारी आँखो मे मदिरा के सागर लहरा रहे हैं, कितनी मधुर है इन आँखो की मदिरा! न समुद्र खाली होते है, न ओठ थकते हैं। सौन्दर्य का रस पीते पीते चाहे अधर थक जाये, पर प्यास नही बुझेगी। तुम्हारी एक एक कम्पन मे लाख लाख आकर्षण है। न जाने तुम्हारे अग अग में क्या है जहाँ दृष्टि जाती है वही निर्निमेष हो जाती है। नासिका तुम्हारी सुगन्ध को सूँघते सूँघते नही थकती। आँखे तुम्हारे दर्शनो ने बन्दी कर ली हैं। अधर तुम्हे चूमते चूमते भी चूमने के उत्सुक रहते है। भुजाये तुम्हारे आलिगन मे वँध चुकी हैं। तुम गुलाव की पाँखुडियो से भी सुन्दर हो और यौवन की कठोरता से भी जवान हो। तुम मे वह रस है जिसकी घूँट पीकर बूढा भी जवान हो सकता है और जवान सदा के लिये जवान हो जाता है। जी चाहता है कि ओठो मे तुम्हारे ओठो का प्याला लगाकर दूर हो जाऊँ इस राजनीति की कर्कश जिन्दगी मे। राज्य की कठोरता से बहुत बार जी ऊब जाता है। पर तुम्हारे पास वैठे वैठे कभी जी नही ऊबता। आओ कर्नाटकी! हम दो तन एक होकर सूर्य निकलने तक शान्ति मे सो जाये।

कर्नाटकी— प्यार की रात सोने के लिये नही होती प्रियतम! देवताओं के निमित्त व्रत करके जागरण मे जो आनन्द नही वह प्रणय के जागरण मे होता है। आज रात भर जागो, जिसमे कि घटने वाले

स्वासो को जीवन के साथ घटने दिया जा सके। चाँद जब तक चमकता रहता है चकोर को तब तक नीद नही आती।

बातो ही बातो मे रात बीत गई। प्यार की घडियाँ न जाने कहाँ कपूर हो जाती है। भगवान भास्कर ने आकर दोनो की प्रणय-क्रीडा समाप्त कर दी। जैसे ही पृथ्वीराज भुज-पाशो मे बँधे अगडाइयाँ ले रहे थे वैसे ही प्रतिहारी ने बाहर से घटी बजाई। घटी सुनते ही पृथ्वीराज कर्नाटकी की आँखो मे प्रतीक्षा छोड दरवाजे पर आ गये। प्रतिहारी ने उनको देखते ही अभिवादन करके कहा— "बडी महारानी स्मरण कर रही है।"

"चलो, चल रहे है।" कहते हुए दिल्लीपति ने बडी महारानी के महल की ओर प्रस्थान किया और तुरन्त ही उस सुसज्जित कक्ष मे आ गये जिसमे महारानी चन्द्रागदा उत्सुकता से महाराज की प्रतीक्षा कर रही थी। महाराज को देखते ही महारानी ने व्यग की हँसी हँसते हुए कहा— "कहिये, रात कैसी रही।"

पृथ्वीराज— पूर्णिमा की चाँदनी की तरह बहुत मधुर।

चन्द्रागदा— कही चाँद का कलक आपको ही न लग जाये।

पृथ्वीराज— तुम्हारे गगाजल मे स्नान करने से सारे पाप धुल जायेगे।

चन्द्रागदा— पुरुषो को बाते बनाना खूब आता है।

पृथ्वीराज— स्त्रियाँ ही पुरुष को सब कुछ सिखा देती है। नारी-कला का पहला और अन्तिम अध्याय पुरुष स्त्री से ही पढता है।

चन्द्रागदा— चाहे जीवन भर पुरुष स्त्री को पढता रहे लेकिन फिर भी वह स्त्री को नही समझ सकता।

पृथ्वीराज— क्योकि स्त्री के अन्तर की गहराई [illegible]

भी कही गहरी होती है। कोई नही कह सकता कि उसकी भाषा सच्ची है या भावना।

चन्द्रागदा— तो पुरुष कातर क्यो बनता है? स्त्री के इगित पर पुरुष गेंद की तरह गदके खा खाकर उसी के हाथ पर खेलता रहता है। नारी पुरुष को नचाती है और पुरुष नाचता है।

पृथ्वीराज— अन्तर केवल इतना होता है कि पुरुष मुखर है और स्त्री मौन। वस्तुत नारी पुरुष मे कही दुर्बल है। उसका बहिर्जगत जितना गम्भीर होता है, अन्तर्जगत उतना ही चचल। पुरुष की उत्सुक आँखे नारी के हृदय-सिन्धु मे उठते हुए ज्वार को नही देख पाती। खैर, छोडो ये स्त्री पुरुष की आलोचना! स्त्रैणता पर विचार करने के लिये इस समय हमे अधिक अवकाश नही है। थोडी ही देर बाद हम सिरसा विजय के लिये कूच करने वाले है।

चन्द्रागदा— मेरे पास आते ही आपका अवकाश समाप्त हो जाता है। जब देखो तभी या तो किसी और के पास या घोडे की पीठ पर। न आपको परकीया से समय मिलता है और न युद्ध मे। लेकिन अकस्मात् यह सिरसा पर चढाई की नौबत कैसे आ गई?

पृथ्वीराज— महोबे के राजा परिमर्दिदेव ने अपने राजकुमार ब्रह्मा ने बेला की सगाई स्वीकार कर ली है। इस हेतु वे अजेय सेना से युद्ध के लिये वसन्त पचमी पर दिल्ली आ रहे है। किन्तु दिल्ली आने से पूर्व ही हम उनकी शक्ति इतनी दुर्बल कर देगे कि अजेय सेना तो क्या दिल्ली की साधारण सेना भी उनको महोबे तक खदेड देगी। इसी उद्देश्य से हम सिरसा पर चढाई कर रहे है, जिससे मलखान को मौत के घाट उतार कर महोबे का एक वीर सामन्त कम किया जा सके।

चन्द्रागदा— तो बेटी का व्याह न होकर रण मे होली [illegible]

धन्य है आपकी रजपूती को! इस कुप्रथा के कारण न जाने कितनी बेटियाँ विवाह होने से पूर्व ही विधवा हो जाती हैं।

पृथ्वीराज— वीरता की परख को कुप्रथा न कहो राजरानी! शेष बातें फिर होंगी, अब हम जाते हैं।

कहते हुए चौहान चल दिये। द्वार पर सेनापति उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। महाराज को देखते ही सैनिक अभिवादन कर वे उन्हें सेना शिविर की ओर ले चले। रण बाँकुरे राजपूत सिपाहियों के बीच आते ही चौहान ने ललकारते हुए कहा— "वीरो! इस बार तुम्हें लोहे के राजपूतों से टक्कर लेनी है, जिनका लोहा मानकर बडे बडे राजाओं की तलवारें म्यान से नही निकलती। किन्तु हमारे सामने गिरने वाले भुनगों की तरह हैं। हम उन्हें चुटकी बजाते ही मसल डालेंगे। हवा की तरह दौडते हुए चलो और पलक मारते ही जय का झण्डा लहराते हुए चले आओ!

चामुण्डराय— आप यहीं विश्राम करें महाराज! इस सेवक को जाने की आज्ञा दीजिये। सप्ताह के अन्त की नई सुबह को आप जय की सूचना सुनेंगे।

पृथ्वीराज— तुम्हारी वीरता पर हमें भरोसा है, पर सिरसा विजय के लिये हम स्वयं ही जायेंगे। हमने सुना है मलखान बडा वीर है, हम उससे दो दो हाथ करेंगे। अब प्रतीक्षा की आवश्यकता नहीं है, कूच का बाजा बजाओ!

बाजा बजा और सेना चल पडी। दौडती हुई काली आँधी की तरह चौहान के सेनापतित्व में दिल्ली की सेना मञ्जिल पर मञ्जिल तय करती हुई सिरसा को घेर कर पड गई।

× × ×

पहली हार

चाँदनी रात में फेनिल शैया पर सोते हुए मलखान को उनकी पत्नी गजमोतिन ने जगाकर कहा— "खतरे का घंटा बज रहा स्वामी! शीघ्र उठो!"

चौंककर मलखान उठे और तलवार खींचते हुए जैसे ही द्वार आये वैसे ही सेनानायक ने एक ही श्वास में कहा— "गजब हो सिरसाधिपति! दिल्लीपति चौहान ने काली रात की तरह सिरसा लिया है, अब क्या किया जाये?"

मलखान ने क्रोध से तमतमाकर दाँत पीसते हुए कहा— "क्या जाये, आँधी और तूफान की तरह तुरन्त शत्रु सेना पर टूट प दिल्ली का यदि एक भी सिपाही बचकर चला गया तो तुम्हारी माँ योग को धिक्कार है।"

कहते हुए तूफान के झोंके की तरह मलखान सेना के मध्य में तथा कूदकर अपने घोड़े पर चढ़ गये, और टूट पड़े पृथ्वीराज चौगुनी सेना पर।

घमासान हुआ। सिरसे का एक एक सिपाही यमराज की चौहान की सेना पर टूटता और खोपड़ी से खोपड़ी भिड़ाकर दो दो एक ही साथ मारने लगा। सिरसे की भयानक तलवारों को देख दिल्ली की तलवारें थर्रा उठीं। चौहान ने जब देखा कि सेना के उखड़ना चाहते हैं तो उत्साह के वाक्य उच्चारता हुआ आगे आया मलखान के घोड़े के सामने तलवार तान कर खड़ा हो गया।

सिरसापति और दिल्लीपति की तलवारें टूटती हुई बिजलियां तरह टकराने लगीं। शेर शेर से लड़ रहा था। मलखान के वार वार देख कर चौहान के दाँत खट्टे हो गये। हार कर चौहान ने भारी भाले का एक वार मलखान पर किया।

भाले के वार से मलखान तो बच गये पर उनके घोड़े की गर्द

्क गहरा घाव हो गया। घाव होते ही घोडा तडप कर लगभग
ौबीस फुट ऊँचा उछला।

जैसे ही घोडा ऊपर उछला वैसे ही चौहान ने तूणीर से एक तीर
ीच मलखान पर फेंक कर मारा। तीर मलखान के तलवे मे लगा।
ीर लगते ही मलखान नीचे गिर पडे और फिर पृथ्वीराज ने तलवार
ा भारत के इस अद्‌भुत वीर का सर काट डाला।

मलखान के मरते ही सिरसा मे त्राहि त्राहि मच गई। पति की
त्यु सुनते ही गजमोतिन घोडे पर सवार हो तलवार खीच युद्धक्षेत्र मे
ा पहुँची और ललकार कर चौहान से बोली— "लुटेरे कही के!
ाकुओ की तरह आक्रमण करके तूने मेरे पति को मार डाला! जा, जो
शा तूने सिरसा और मेरे पति की की है वही दशा तेरी और दिल्ली की
ोगी। यदि वीर था तो धोखे से चढाई क्यो की, पहले से ललकार कर
ामने आता। कही मेरे देवर और जेठ यहाँ होते तो तेरी बोटी बोटी
वा डालते। एक अकेले पर लाखो की सेना लेकर चढते हुए तुझे
ज्जा नही आई।"

चौहान— बहुत शोर सुनते थे तुम्हारे पति का, चौहान के सामने
ाते ही दुनिया छोड भागा।

गजमोतिन— लेकिन दुनिया छोडने से पहले मेरे देवता ने तेरे छक्के
ुडा दिये। सिरसे की पाच हजार सेना ने तुम्हारे पन्द्रह हजार सैनिक
ार डाले। इतनी बडी हार पर भी तू मेरे पति को छल से मार कर
र्व करता है। घोडे के घायल हो जाने पर तूने तब तक उन पर वार
ो किया जब तक वे घोडा बदल कर तेरे सामने नही आये। जी
ाहता है तुझ पापी को नाखूनो से नोच डालूँ।

गजमोतिन के ताने सुन सुन कर पृथ्वीराज हतचेतन से हो गये।
[illegible] क्रोध और रुदन सुन कर पृथ्वीराज की आँखो से जल भर

आया। दिल्लीपति ने रुँधे कण्ठ से कहा— क्षमा करो देवि! जो हो
था वह तो हो चुका। तुम्हारी जय के सामने मैं सिरसा जीत कर
हार गया। अब यह सिरसा तुम्हारा है, मैं तो जैसे आया था वैसे
वापिस जा रहा हूँ।

गजमोतिन— मेरे लिये तो अब चिता की शैया है। तुझे य
सिरसा की ही भूख थी तो मैं तुझे वैसे ही दान करके दे देती। मे
पति बड़े ही दयालु थे दिल्लीपति! उनके द्वार से कभी कोई निरा
नही लौटा। तुमने व्यर्थ ही इतना रक्तपात किया।

चौहान— होनी होकर ही रहती है।

गजमोतिन— मनुष्य अपनी अनीति को होनी कह कर पुकारता
पर वास्तव मे मनुज अपने हाथो से अपना नाश करता है। तूने जै
मेरा नाश किया है वैसे ही तेरा भी नाश होगा।

सती का अभिशाप लेकर दिल्लीपति अपनी राजधानी को लौट प
और गजमोतिन पति का शव गोद मे ले चन्दन की चिता मे
विराजी।

किन्तु चिता मे आँच लगने से पहले ही आल्हा, ऊदल और ब्रह
अपनी सेना लेकर सिरसे मे आ धमके। भाई का शव चिता
रखा देखते ही उनकी धधकती हुई आँखें बरसात बन गई। रोते हु
ऊदल ने गरजते हुए कहा— "अभी सती न होओ भाभी! तुम स
तब होना जब पृथ्वीराज का सर कटा हुआ देख लो। मैं प्रतिज्ञा कर
हूँ कि जब तक भाई के खून का बदला न ले लूंगा तब तक अन्न ग्रह
नहीं करूँगा, तुम्हारी देवरानी का मुंह नहीं देखूंगा, और यदि प्रति
पूरी न हो सकी तो दिल्ली से वापिस लौट कर न आऊँगा। या तो तु
प्रतिशोध का शुभ समाचार सुनोगी अन्यथा मृत्यु की सूचना सुना
[illegible] हो जाना।"

गजमोतिन— तुम्हे जय मिले मेरे देवर ! पर न जाने दिल्ली से युद्ध का नाम सुनते ही मेरा रोम रोम क्यो काँप रहा है ? दिल्ली की असख्य सेना से मेरे फूल से देवर कैसे लडेगे ?

ऊदल— जैसे राम रावण से लडे थे, जैसे कन्हैया ने पूतना का सहार किया था ।

गजमोतिन— नही देवर, अपने भाई के स्वर्गवास के बाद जब तक अपनी शक्ति को दिल्ली से सवाई न कर लो तब तक दिल्ली पर चढाई का नाम न लो ।

आल्हा— जब ब्रह्मा की सगाई स्वीकार कर ली है, तब चढाई तो करनी ही पडेगी । पर अब बसन्त पर चढाई न करके होली पर आक्रमण करेगे । इतने भैया की चिता जलाकर निबट ले ।

रौद्र रस एकदम करुण रस मे बदल गया । आँखो की बरसात के मध्य भारत के वीर सामन्त की चिता जल उठी । अग्नि के बीच मे बैठी हुई भाभी को उपस्थित समूह ने साष्टाग प्रणाम किया ।

थोडी देर बाद मिट्टी मे एक कहानी बाकी रह गई । न जाने कितने वीर इस मिट्टी मे मिले पडे है, न जाने कितने वे सामन्त जो सृष्टि के सबसे अधिक सफल मनुष्य से भी अधिक सफल हो सकते थे, धूलि मे इसलिये मिले पडे है कि उन्हे अवसर न मिला । श्मशान की मिट्टी मे न जाने कितने राम और कृष्ण दबे पडे होगे !

किन्तु मनुष्य का ध्येय निराशा नही । निराशा के श्मशान पर आशा का दीपक लेकर महोबे मे निरसापति का दीपक जलाया, और फिर होली के रक्तिम मुहूर्त मे महोबे की सेना ने चोट खाये हुए साँपो की तरह दिल्ली की ओर फण फैलाये ।

ऊदल ने आँखो से आँसू पूछ भैया की चिता की राख माथे से लगा

हुकारते हुए कहा— महोबे के एक एक सिपाही को कसम है अपनी जननी और तलवार की कि या तो राजमद मे गर्वान्ध पृथ्वीराज चौहान से भैया मलखान की हत्या का बदला लेना अन्यथा धरती माँ की गोद मे सदा के लिये सो जाना। मुझे भी सौगन्ध है महोबे और 'बनाफल' जाति की कि जब तक चौहान को उसकी काली करतूतो का फल न दे लूँगा तब तक शयन नही करूँगा। चौहान ने सोते सिहो को छेडा है, वह समझ बैठा है कि अपनी अधिक सेना और शक्ति के जोम मे मै भारत के हर राजा को धूलि मे मिला दूँगा। दो चार लडाइयाँ क्या जीती है कि स्वयम् को प्रलयकर शकर ही समझ बैठा। हम चाहते थे कि दिल्ली के साथ मिलकर देश की शक्ति को बढाये, यवनो को बता दे कि यदि इस देश की ओर आँखे उठाई तो अपना घर भी खो बैठेगे। पर सबकी मूछे निराली है। कोई स्वयम् को रावण से कम नही समझता, कोई प्रेम के नाते एक होने को तैयार नही, कोई सामान्य सहयोग के बारे मे मिलना नही चाहता।

चौहान चाहता यह है कि सबको मिटा कर केवल मै जीवित रहूँ। बोलो वीरो! क्या तुम भैया मलखान की धोखे से मृत्यु देख कर शान्त रहोगे? क्या तुम चौहान से अपनी हत्या का प्रतिशोध वीरो की तरह नही लोगे?

सैनिक— लेंगे और अवश्य लेंगे। हम शपथ खाकर प्रतिज्ञा करते है कि या तो चौहान को मिटा देंगे या स्वयम् मिट जायेंगे। हम दिल्ली की ईंट से ईंट बजा देंगे। हम सिरसे की ही तरह दिल्ली की दुर्दशा कर देंगे।

ऊदल— तो फिर देर क्या है! ज्वालामुखी बन कर चौहान पर टूट पडो, प्रलय बन कर दिल्ली को डुबा दो! महाचण्डी खप्पर लिये खडी है, उसे शत्रुओं का रक्तपान कराओ!

आल्हा— तनिक शान्ति से सोच भी तो लो ऊदल !

ऊदल— सब सोच लिया ! जो सोच मे पडे रहते हैं वे कायर हैं। मलखान की छल से मृत्यु हो और हम शान्त रहे। इस समय यदि आपने भी रोका तो मैं अकेला ही दिल्ली पर टूट पडूँगा। मैं चौहान का रक्त पीकर ही रहूँगा। ब्रह्मा से बेला को ब्याह कर ही लाऊँगा। हर हर महादेव ! मैं दिल्ली जा रहा हूँ। जिसे मेरे साथ चलना हो चले, और जिसे प्राण प्यारे हो वह घर मे बैठे।

तलवार खीच कर ऊदल चल पडा और पीछे पीछे महोबे के सामन्तो और सेना ने प्रयाण किया। शख बजाते हुए वीर दिल्ली की सीमा तक आ पहुचे।

सीमा पर शत्रु की ललकार सुन कर पृथ्वीराज की सेना युद्ध के लिये कटिबद्ध हो गई। चामुण्डराय की अध्यक्षता मे कितने ही वीर सामन्तो के साथ एक विशाल सेना ने निश्चित अवसर पर युद्ध के स्थान पर शख के उत्तर मे शख बजाया।

इस ओर से चामुण्डराय और उस ओर से ऊदल के हाथ मे अपनी अपनी सेना की बागडोर थी। पहले ही दिन घोर युद्ध हुआ। हाथी के सामने हाथी, घोडो के आगे घोडे, और पैदल के सामने पैदल तलवारे तान तान कर खडे हो गये।

युद्धध्वनि होते ही होली के रग के स्थान पर रक्त के रग की वर्षा होने लगी। राजपूतो की वीरता का वह दर्शनीय सग्राम था। घटाओ की तरह उमडती हुई हाथियो की सेना जब तूफान की तरह आगे बढती थी तो दूसरी ओर की सेना का दीखना बन्द हो जाता था। हाथियो की पीठ पर सवार योद्धाओ के हाथ के भाले और तलवारे ऐसी चमक रही थी मानो सावन भादो के काले बादलो मे बिजलियां चमक रही हो।

कट कट कर सर धरती पर गिर रहे थे और बहता हुआ रक्त ऐसे दिखाई देता था जैसे अँधेरी रात में ऊषा फैलती जा रही हो। किसी का हाथ, किसी का सर, किसी का धड़ और किसी के पैर रक्त और माँस की कीचड़ में हाथियों के पैर से इस प्रकार कुचले जा रहे थे जिस प्रकार कोई कुम्हार नये बर्तन बनाने के लिये मिट्टी को रौंदता है।

निर्ममता का वह वीभत्स दृश्य देख कर श्मशान भी रो पड़ा होगा। आदमी आदमी को इस प्रकार काट रहा था जैसे कोई गाजर मूली को काट रहा हो। भाई भाई को दाँतों से चबा कर इस तरह अट्टहास कर रहा था जिस तरह भूख में कोई डायन अपने बच्चे को चबा कर अट्टहास करती है।

यहाँ तक तलवार का वह नंगा नाच होता रहा कि बड़े बड़े वीर तलवार के घाट उतर गये। कितने ही हाथी और घोड़े काट काट कर बिछा दिये गये। किन्तु देवी दुर्गा की प्यास तब भी न बुझी।

घोर युद्ध करते करते अन्ततोगत्वा चामुण्डराय और ऊदल आमने सामने आ गये। ऊदल को देखते ही चामुण्डराय ने साँग का एक भरा हुआ हाथ उसकी गर्दन पर मारा। किन्तु ऊदल गर्दन बचा कर घोड़े से एक तरफ दायें को बच गये और तुरन्त ही अपनी तेज़ तलवार का हाथ चामुण्डराय के सर पर दिया।

ढाल सामने करके चामुण्डराय ने तलवार का वार बचा लिया। [illegible] की आड़ के पीछे लोहे की जड़ी हुई टोप से टकरा कर ऊदल की तलवार टूट गई और ऊदल ने तुरन्त ही अपने उल्टे हाथ के भाले का वार चामुण्डराय के वक्ष पर कर दिया, लोहे के कवच को चीरती हुई [illegible] चामुण्डराय के सीने पर [illegible] चामुण्डराय

ने शत्रु का भाला बीच ही मे पकड इस जोर से खीचा कि ऊदल के हाथ से भाला छूट गया।

पर वाह रे ऊदल, निहत्था होते ही वह कूद कर शत्रु के हाथी पर आ चामुण्डराय की गर्दन पर पैर रख अपना भाला इतने बल से छीना कि चामुण्डराय एक तरफ से फिसल गये और भाला ऊदल के हाथ मे आ गया।

इतने चामुण्डराय सम्भले कि ऊदल कूद कर फिर अपने घोडे पर आ गये और तब तक उनके अगरक्षक ने उनके दूसरे हथियार भी उनके हाथ में पकडा दिये। फिर तो दोनो बाँके सामन्तो की तलवारे पूरी शक्ति से टकराई। लडते लडते शाम हो गई पर न तो ऊदल थके और न चामुण्डराय ही। शाम होते ही युद्ध विराम का शंख बज गया और बचे हुए सैनिक अपने अपने डेरो मे आकर आज के युद्ध का इतिहास दोहराने लगे।

दूसरे दिन फिर घोर युद्ध हुआ। महाकाली खप्पर लेकर युद्ध क्षेत्र मे अट्टहास कर उठी। दिल्ली और महोबे के कितने ही बलवानो के रक्त से तृषातुरा अपनी प्यास बुझाने लगी। ऐसा भीषण युद्ध हुआ कि इतिहासकार लिख भी न सके। वीरो की तलवारो ने विनाश का वह नगा नृत्य किया कि भूत और भूतनियाँ भी त्राहि त्राहि करने लगी। साधारण सेना के अतिरिक्त दोनो ही ओर के कितने ही योद्धाओ का सहार हुआ। युद्ध होते होते जब कोई भी नही हारा तो एक दिन पृथ्वीराज स्वय युद्ध-क्षेत्र मे आये।

भाई के हत्यारे को सामने देखते ही ऊदल की आँखो मे अगारे धधक उठे। भूखे सिंह की तरह वह चौहान पर टूट पडा। ऊदल के हाथो मे जैसे बिजली मचल उठी। वह पृथ्वीराज पर इतनी जल्दी जल्दी वार

करने लगा कि उत्तर में पृथ्वीराज का वार करना तो दूर रहा, वे अपने शत्रु के वार बचाने में भी हतचेतन से हो गये।

चामुण्डराय ने अपने महाराज को खतरे में देख घोड़े का मुँह मोड़ा और तुरन्त ही वहाँ आ गया जहाँ ऊदल पृथ्वीराज पर वार पर वार कर रहा था। चामुण्डराय को देखते ही ऊदल की क्रोधाग्नि में और भी घी पड़ गया। उसने दोनों हाथों में तलवारें लेकर दोनों पर वार करने शुरू कर दिये। ऊदल की तलवार की तेजी देखकर पृथ्वीराज ने परास्त होते हुए प्रशंसा से कहा—"वाह सामन्त, वाह! खूब वार करते हो!"

ऊदल—धोखे से मेरे भाई की हत्या करने वाले और कुछ पल श्वास ले ले, तेरी मौत इस समय मेरी मुट्ठी में है।

पृथ्वीराज ने स्वयं को भयानक स्थिति में देख चौंक कर कहा—"नहीं दीपवर्द्धन! भारत के इस लासानी योद्धा को धोखे से मारने का प्रयत्न न करो।"

चौहान की बात सुनते ही जैसे ही ऊदल ने पीछे की ओर देखना चाहा वैसे ही पृथ्वीराज की आँख का सकेत पाते ही चामुण्डराय ने तलवार का भर भरा हुआ हाथ ऊदल की गर्दन पर मारा, तलवार गर्दन से रपट कर कंधे में धसती चली गई।

वार इतना गहरा लगा कि ऊदल मुँह सीधा तक न कर सके। उनकी तलवार उठी की उठी रह गई और वे घोड़े से नीचे गिर पड़े। इस प्रकार भारत का यह अद्वितीय योद्धा भी विवाह की कुप्रथा के पीछे बलिदान हो गया।

ऊदल के मरते ही पृथ्वीराज ने रन का रुख बदला दिया और आज की हार अकेले की हुई। ऊदल की मृत्यु से महोबे की सेना में निराशा छा गई किन्तु [illegible] से अपना बदला [illegible] हो गये। अभिमन्यु-वत वे

बाद अर्जुन की तरह दाँत पीसते हुए वे बोले— "जब तक मलखान और ऊदल भैया के वध का बदला न ले लूँगा, तब तक युद्ध से वापिस न लौटूंगा। प्रतिशोध या मृत्यु इन दोनो मे से ब्रह्मा एक ही लेकर शान्त होगा।"

दूसरे दिन इक्कीस वर्ष का गौरवर्ण युवक ब्रह्मा सेना लेकर युद्ध भूमि मे ललकार उठा। दूसरी ओर से चौहान की असख्य सेना भी मुकाबले पर आ डटी। पृथ्वीराज ने ब्रह्मा को देखते ही व्यग से कहा— "क्या सारे सामन्त खप गये, जो अब स्वय दूल्हे को लडने आना पडा?"

ब्रह्मा— आपकी बेटी की माँग आपके दामाद के रक्त से भरने के लिये यह सेवक उपस्थित है।

पृथ्वीराज— क्यो अपनी नन्ही सी जान के शत्रु बने हो, जाओ और अपनी माँ की गोद मे आराम से दूध पीना। यह कोमल हाथ खिलौनो से खेलने के लिये है तलवार चलाने के लिये नही।

ब्रह्मा— लेकिन ससुर साहब ने तो मेहँदी वाले हाथो मे तलवार पकडा ही दी। अब जबान चलाना बन्द करो और तलवार उठाओ। तुमने भारत के दो बेजोड सामन्तो का रक्त पिया है। मै हत्यारे से उनके खून का प्रतिशोध लेने के लिये मचल रहा हूँ। रोको, मेरी भवानी तुम्हारा लहू पीने के लिये लपक रही है।

कहते हुए ब्रह्मा ने अश्व का पैंतरा बदल कर चौहान के मस्तक पर तलवार मारी। तलवार ढाल पर रोकते रोकते भी उचटती हुई पृथ्वीराज के मस्तक पर हल्की सी लगी और रक्त चमक आया।

मस्तक पर लोहू देखते ही चौहान का आवेश चर्म पर पहुँच गया। उन्होंने दाँत भींच कर ब्रह्मा पर वार किया।

वार से ब्रह्मा तो बच गये, पर उनके घोड़े की कमर कट गई। घोड़े को घायल देखते ही ब्रह्मा कूद कर अपने अंगरक्षक के घोड़े पर सवार हो गये और घोड़े को ऐड़ लगाकर चौहान के हाथी के मस्तक पर चढ़ा दिया, तथा भाले का एक भरा हुआ हाथ चौहान के वक्ष पर मारा।

भाले का वार कवच से झन्ना कर खाली चला गया, तथा पृथ्वीराज ने ब्रह्मा की गर्दन पर हाथ घुमा कर पीछे से तलवार चला दी। तेज तलवार का वार खाते ही ब्रह्मा की गर्दन आधी कट गई और महोबे का यह युवराज भी रक्त की शैया पर शान्ति से सो गया।

ब्रह्मा की मृत्यु सुनते ही सारी धरती पर लाल अंधेरा छा गया। जैसे ही बेला की मा चन्द्रागदा ने सुना कि उनके होने वाले दामाद ब्रह्मा मृत्यु को प्राप्त हो गये वैसे ही वे पछाड़ खाकर गिर पड़ी। पति की मृत्यु सुनते ही बेला दौड़कर पागल सी माँ के पास आई तथा "मा यह क्या हुआ, मा यह क्या हुआ, मा यह क्या हुआ?" कह कह कर हृदय विदारक स्वर से रोने लगी।

६

ब्रह्मा के मरते ही युद्ध बन्द हो गया। दुलहन के वेश में सजने वाली बेला वैधव्य की करुणा में शोक की मूर्ति सी विधवा वेश में माता-पिता के सामने आकर बोली— "क्षमा करना माता-पिता! मेरे ही कारण यह घोर युद्ध हुआ, मेरे ही कारण मेरी ही तरह घर घर में न जाने कितनी विधवायें चीत्कार कर रही होंगी। मुझे क्या पता था कि मेहँदी वाले हाथों में रक्त लग जायेगा। वधू बनने के चाव में फूली नहीं समाती थी, पर वधू बनने से पहले विधवा बन कर पति के साथ सती होने जा रही हूँ।

माँ, पिताजी! आपने मुझे कितने लाड से पाला था, मेरे लिये यह ऊँची अट्टालिका बनवाई जिस पर चढ़ कर मैं नित्य प्रति ही यमुना माँ के दर्शन करके तरंगित होती थी। मेरे लिये मणिमण्डित चन्दन का पथ निर्माण कराया। मुझे विद्या और कला में निपुण क्या इसीलिये किया था कि सुहाग की बिन्दी वैधव्य की करुणा में बदल दोगे!"

पृथ्वीराज— बस बेटी, बस! और अधिक न कह। जो होना था वह हो चुका। अब तू न रो, मैं तेरा विवाह किसी और सम्पन्न राजकुमार से करूँगा।

बेला— क्षमा कीजिये पिताजी! जिस प्रकार पार्वती ने शंकर को छोड़ किसी अन्य को स्वप्न में भी नहीं भजा, उसी प्रकार मैं अपने स्वर्गवासी पति को छोड़ किसी अन्य की कामना नहीं करूँगी। महोबे वालों ने तो वाग्दान पीछे स्वीकार किया, मैं तो पहले ही वहाँ के राजकुमार का नाम और रूप सुन कर उसे पति मान चुकी थी। जीते जी आपकी वीरता ने मुझसे मेरे देवता को न मिलने दिया, अब मर कर तो मैं उन्हें मिल ही जाऊँगी। आपने शान्ति से मुझे जीने नहीं दिया पिताजी! अब शान्ति से मुझे मर तो जाने दो! बेटी की यही अन्तिम कामना है कि उसे शान्ति से सती होने में कोई बाधा न आये। फेरों के मण्डप की तरह आप मेरे लिये एक चिता चिनवा दीजिये!

चन्द्रागदा अब तक तो शान्त थी पर अब उससे मौन न रहा गया। वह बिलख बिलख कर अपने पति को बुरा भला कहने लगी। रोते रोते वह चीत्कार करती हुई चीख कर बोली— तुमने घोर पाप किया है, तुम्हें पापों का फल भोगना पड़ेगा। जो कुछ हुआ वह तो हो ही गया, अब कैसे भी मेरी बेटी को शान्ति से सती तो हो जाने दो। मैं नहीं चाहती कि जी कर मेरी बेटी जीवन भर परकटे पक्षी की तरह [illegible] में रोती रहे।

छाती पर पत्थर रख कर पृथ्वीराज ने शोकाकुल दशरथ की तरह कहा— "तथास्तु!" और फिर सर पकड़ कर पास ही पड़े हुए पलंग पर मूर्छित होकर गिर पड़े।

× × ×

दूसरे दिन सन्ध्या समय जब सूर्य डूब रहा था तो यमुना-तट पर

चन्दन की चिता मे सती वेला अपने पति का शव अक मे लिये अग्नि-सी जगमगा उठी। सती के दर्शन को दोनो पक्ष के सम्बन्धी और जन-समुदाय उमडा पड रहा था। पृथ्वीराज चौहान और सामन्त आल्हा आँसुओ के समुद्र को आँखो की मर्यादा मे भरे गम्भीरता से खडे थे। जिनके लोहे से मौत भी थर्राती थी, आज वे ही मृत्यु के सामने नतमस्तक थे।

आल्हा ने धैर्य छोडती हुई आँसू की धार पर बाँध बाँधते हुए कहा— 'कुछ कहती जाओ तपमूर्ति!'

जलती हुई वेला ने काँपती हुई आवाज़ मे कहा— 'गर्म राख मे जो आहे दबी हुई है वे एक दिन लपटे बन कर फैलेगी। उन लपटो मे कन्याओ को जलाने वाले जल कर राख हो जायेगे। तलवार की ताकत मे अन्यो की चिताये जलेगी। तुम्हारी बहिन-बेटियो को तुम्हारी ही आँखो के सामने नगा नचाया जायेगा और तुम तडपोगे। तुम्हारे मुँह मे जबरदस्ती गउओ का माँस ठूँसा जायेगा और तुम खाओगे। तुम अपनो को भगी और चमार कहकर ठुकराओगे और वे विधर्मी बनेंगे। तुम अपना धर्म छोड दूसरे के धर्म मे बदले जाओगे, अपने मन्दिरो पर अपने ही लहू के छीटे देखोगे और युग युग तक दिखाते रहोगे। देश पर बुरे दिन आ रहे है, सतियो की ज्वाला से प्रलयकर ज्वाला जलेगी।'

आल्हा— तो इस आग को बुझाने का कोई उपाय बहिन!

वेला— आँसुओ की धार से आग बुझाना चाहते हो भैया! धधकने दो आँसुओ से नाश का कृशानु! शीतल होना चाहते हो तो हिमालय की चोटी पर चले जाओ! नहीं तो समय के दोष से तुम भी वञ्चित हो जाओगे।

पृथ्वीराज— बस बेटी, बस ! और अधिक न कह। जो होना था वह हो चुका। अब तू न रो, मैं तेरा विवाह किसी और सम्मान राजकुमार से करूँगा।

बेला— क्षमा कीजिये पिताजी ! जिस प्रकार पार्वती ने शंकर को छोड किसी अन्य को स्वप्न मे भी नही भजा, उसी प्रकार मैं अपने स्वर्गवासी पति को छोड किसी अन्य की कामना नही करूँगी। महोबे वालो ने तो वाग्दान पीछे स्वीकार किया, मै तो पहले ही वहाँ के राजकुमार का नाम और रूप सुन कर उसे पति मान चुकी थी। जीते जी आपकी वीरता ने मुझसे मेरे देवता को न मिलने दिया, अब मर कर तो मै उन्हे मिल ही जाऊँगी। आपने शान्ति से मुझे जीने नही दिया पिताजी ! अब शान्ति से मुझे मर तो जाने दो ! बेटी की यही अन्तिम कामना है कि उसे शान्ति से सती होने में कोई बाधा न आये। फेरों के मण्डप की तरह आप मेरे लिये एक चिता चिनवा दीजिये !

चन्द्रागदा अब तक तो शान्त थी पर अब उससे मौन न रहा गया। वह बिलख बिलख कर अपने पति को बुरा भला कहने लगी। रोते रोते वह चीत्कार करती हुई चीख कर बोली— तुमने घोर पाप किया है, तुम्हे पापो का फल भोगना पडेगा। जो कुछ हुआ वह तो हो ही गया, अब कैसे भी मेरी बेटी को शान्ति से सती तो हो जाने दो। मैं नही चाहती कि जी कर मेरी बेटी जीवन भर परकटे पक्षी की तरह श्वास श्वास में रोती रहे।

छाती पर पत्थर रख कर पृथ्वीराज ने शोकाकुल दशरथ की तरह कहा— "तथास्तु !" और फिर सर पकड कर पास ही पडे हुए पलग पर मूर्च्छित होकर गिर पडे।

× × ×

दूसरे दिन सन्ध्या समय जब सूर्य ढल रहा था तो यमुना-तट पर

चन्दन की चिता में सती बेला अपने पति का शव अंक में लिये अग्नि-सी जगमगा उठी। सती के दर्शन को दोनों पक्ष के सम्बन्धी और जन-समुदाय उमड़ा पड़ रहा था। पृथ्वीराज चौहान और सामन्त आल्हा आँसुओं के समुद्र को आँखों की मर्यादा में भरे गम्भीरता से खड़े थे। जिनके लोहे से मौत भी थर्राती थी, आज वे ही मृत्यु के सामने नतमस्तक थे।

आल्हा ने धैर्य छोड़ती हुई आँसू की धार पर बाँध बाँधते हुए कहा— 'कुछ कहती जाओ तपमूर्ति!'

जलती हुई बेला ने काँपती हुई आवाज़ में कहा— 'गर्म राख में जो आहें दबी हुई हैं वे एक दिन लपटें बन कर फैलेंगी। उन लपटों में कन्याओं को जलाने वाले जल कर राख हो जायेंगे। तलवार की ताकत में अन्धों की चितायें जलेंगी। तुम्हारी बहिन-बेटियों को तुम्हारी ही आँखों के सामने नंगा नचाया जायेगा और तुम तड़पोगे। तुम्हारे मुँह में जबरदस्ती गउओं का माँस ठूँसा जायेगा और तुम खाओगे। तुम अपनों को भंगी और चमार कहकर ठुकराओगे और वे विधर्मी बनेंगे। तुम अपना धर्म छोड़ दूसरे के धर्म में बदले जाओगे, अपने मन्दिरों पर अपने ही लहू के छींटे देखोगे और युग युग तक दिखाते रहोगे। देश पर बुरे दिन आ रहे हैं, सतियों की ज्वाला से प्रलयंकर ज्वाला जलेगी।'

आल्हा— तो इस आग को बुझाने का कोई उपाय बहिन!

बेला— आँसुओं की धार से आग बुझाना चाहते हो भैया! धधकने दो आँसुओं से नाश का कृशानु! शीतल होना चाहते हो तो हिमालय की चोटी पर चले जाओ! नहीं तो समय के दोष से तुम भी दलित हो जाओगे।

आल्हा— लेकिन किसी तरह हिन्दू को तो बचाओ! हम चाहे न रहे लेकिन हिन्दू नही मरना चाहिये।

वेला— तथास्तु! जिस प्रकार दाँतो मे जीभ रहती है इसी प्रकार हिन्दू भी रहेगा, जब मुस्लिम बुढापे के दाँत टूट जायेगे तो स्वत स्वतन्त्र हो जायेगा। समय की प्रतीक्षा करो भैया! हिन्दुओ का पतन और उत्थान देखना चाहते हो तो शान्त होकर हिमालय पर अमर हो जाओ। ओ३म्, शान्ति, शान्ति!

कन्या वेला आहे और आशाये लिये सती होती रही और मनुष्य अपने ही हाथ मे अपना भाग्य फोडकर आप ही आप रोता रहा।

मनुष्य कितना घमण्डी होता है और कितना लाचार! समर्थ से समर्थ मनुष्य भी कितना असमर्थ होता है! विश्व की यह कैसी विडम्बना है कि उसमे मनुष्य अपने ही हाथो मे अपना भाग्य फोडकर अपनी किस्मत पर आप ही रोता है। यही नही, वह न जाने कितनी बार जान कर भूल करता है। जो गलती वह आज करता है वही गलती वह कल फिर करके माथा धुनता है। वाह रे मनुष्य!

मृत्यु के समय हर मनुष्य दार्शनिक हो जाता है। वीर और करुण रस का गगानट पर यह कैसा संगम है! कल वीरता की अन्धी भावना जिनके सर काट कर हर्ष मनाती थी आज वही भावना उनकी मृत्यु पर विलाप कर रही है।

जमे हुए संस्कार एक या दो दिन मे नही मिटते। मदान्धता के गर्भ मे जो कीट पैदा हो जाता है वह पीढी दर पीढी की रोती हुई आँखो से भी नही धुलता।

चौहान और आल्हा रोती आँखो से सोचते ही रहे और होनी होती रही। देखते ही देखते वेला अग्नि की लपटो मे राख होती जा

रही थी। बड़े बड़े वीरों के होते हुए भी एक निरीह बालिका अग्नि में जल रही थी और सब मौन थे। जलती हुई सती को प्रणाम कर सामन्त आल्हा ने फिर पूछा— "अब इस देश का क्या होगा माँ!"

सती— जो मेरा हो रहा है। विनाश की ज्वाला दहकती हुई चली आ रही है। यदि रोक सकते हो तो रोको!

आल्हा— मेरे लिये अन्तिम क्या आज्ञा है माँ?

सती— शान्ति चाहते हो तो इस दुनिया से दूर चले जाओ! तुम्हारा धैर्य धरती से भी मौन और गम्भीर है भैया! यही अच्छा है कि तुम्हारा क्रोध शान्त रहा, नहीं तो मेरे साथ साथ सारी दिल्ली धू धू करके जल उठती। तुम्हारी तलवार में तो अग्नि का साक्षात् प्रचण्ड रूप है, किन्तु तुम्हारी भावनाओं में सागर से भी स्वच्छ शान्ति है। तुम्हारे अन्तस्तल में वडवाग्नि है, पर वह जल की सीमा से बाहर नहीं जाती। तुम्हारी मान और मर्यादा अक्षय है वीरपुंगव! तुम अमर हो।

कहते कहते शब्द मौन हो गया। तत्वों में तत्व मिल गये। देखते ही देखते सब कुछ स्वाहा होकर राख का एक ढेर रह गया। अन्ततोगत्वा हताश होकर गीली आँखों से दिल्लीपति अपने [illegible] में डूबे हुए अपने दुर्ग में चले आये और आल्हा ने वहीं चिता के [illegible] अपने राजसी वस्त्रों की चिता जला दी तथा [illegible] वहीं से हिमालय की तराई की तरफ चले गये। [illegible] रहे थे, संसार में शान्ति कहाँ है? चिर शान्ति तो [illegible] शीतलता में है। तलवार मनुष्य का [illegible] [illegible]। सब में तप में और भक्ति में शान्ति [illegible]।

[illegible] पृथ्वीराज [illegible]

फिर राजचक्र सभाला। निराशा की लम्बी श्वास फेंक कर उन्होंने आशा की एक मीठी श्वास ली, और फिर उसी दुनिया मे आ गये जिससे वे कुछ समय पूर्व विरक्त हो गये थे।

तत्काल के युद्ध से अस्तव्यस्त दिल्ली राज्य की दशा अभी सभली भी नही थी कि चौहान के दरबार मे सीमा के सिपाही पधारे। एक सिपाही हाँफता हुआ जेहलम के तट से आया और दूसरा दक्षिण-पश्चिम की सीमा से। दोनो ने आकर एक ही साथ कहा— "यवन बढते चले आ रहे है, रावी तट तक उनका राज्य स्थापित हो चुका है। यही नही, यवन डाकुओ की तरह लुक-छिप कर भारतवर्ष के मन्दिरो पर आक्रमण करते है और वहाँ की मूर्तियो को खडित कर उनके हीरे जवाहरात और स्वर्ण लूट कर ले जाते है। उन्होने सोमनाथ के रत्न-सम्पन्न मन्दिर की तरह न जाने कितने मन्दिर नष्ट कर डाले। भारत के कितने ही सम्पन्न कोष वे गाडी भर भर ले जाते है और हम पत्थर की आँखो से सब कुछ देखते रहते है। आँखे होते हुए भी हम आँखे नही खोल सकते। हमारे देश की इतनी बडी शक्ति होते हुए भी थोडे से यवन हमे कुचल जाते है और हम कुछ नही कर पाते। हमें आपने आज्ञा दी थी कि यवनो की गतिविधि का वेश बदल कर अध्ययन करो, सो अपने अध्ययन का परिणाम हम आपसे निवेदन कर रहे है।"

पृथ्वीराज— सुन रहे हो महामन्त्री!

कैमास— सब कुछ सुन रहा हूँ दिल्लीपति! पर क्या करूँ, दोनो हाथ उठा कर कहता हूँ कि सारे हिन्दू राजा एक हो जाओ। पर कोई नही सुनता। एक राजा दूसरे राजा को जन-बच्चा सहित कोल्हू मे पिसा देखना चाहता है। पहले हम अपने घर के झगडो से तो निबट ले तभी तो यवनो से निबटेंगे। गृह युद्ध शान्त होना चाहिये महाराज!

जितनी जल्दी हो सके सारे हिन्दू राजाओ का एक सगठन बनाओ तथा जो भी दुश्मन इस देश मे पैर रखे उसे कुचल डालो!

पृथ्वीराज— इस देश मे सबसे बडा प्रश्न तो यही है कि हर राजा अपने को बडे से बडा राजा समझता है। हमारे देश को दुश्मन से नही, दोस्त से भय है।

किमास— सत्य कहते है महाराज! इस देश को जब भी लगी है अपने ही दीपक से आग लगी है। खैर जो बीत चुकी है उसे जाने दो, अब आगे की सुधि लीजिये। आगे बढ कर बिखरे हुए हिन्दू राजाओ को एक झडे के नीचे निमन्त्रित कीजिये महाराज!

पृथ्वीराज— जो प्रसन्नता से सगठन मे आ जाये उनको सम्मान अपने मे मिला लिया जाये और जो सर उठाये उनका सर कुचल डाला जाये। सरदारी प्रथा को इस देश से मिटाना ही होगा। यह क्या रोग है कि कोई भी दो-चार गाँव मे अपनी सेना जोडता है और सरदार बन कर राजा कहलाने लगता है। हर दम कोने पर नया राज्य बनता जा रहा है।

किमास— हो तो यही रहा है महाराज! पर यह समय शासन से ही तलवार चलाने का नही है, शान्ति से समझा कर काम निकालना चाहिये।

पृथ्वीराज— लेकिन इसका अर्थ यही है हमारी दुर्बलता तो नही समझ लेंगे। कही यह अर्थ न निकाल ले कि पृथ्वीराज यवनों से डर कर हमारी सहायता चाहता है।

किमास— राजनीति मे छोटे बाप का बन जाने मे भी हानि नही होती। हम यदि थोडी देर के लिये अपनी मूंछ नीची कर ले तो कुछ ऊँचे उठ सकते है।

पहली हार

तर्क-वितर्क चल ही रहा था कि सहसा माहिलराज ने दिल्लीपति के राज्य-परिषद् मे कदम रखे और शिष्टता से राजसी अभिवादन करने के साथ ही साथ मुस्कराते हुए बोले— "धन्य है दिल्ली की तलवार! बडे लडाके समझते थे महोबे वाले अपने को, दिल्ली की ओर पैर बढाते ही धरती मे समा गये। जय पर बधाई है महाराज!"

पृथ्वीराज— बहुत सी जीत हार से अधिक दुख देती है माहिलराज! महोबे का विध्वंस हमारी छाती मे शूल की तरह चुभ रहा है। चोर की माँ जिस तरह घडे मे मुँह देकर रोती है, उसी तरह हमारी भी आँखे रोती है।

माहिलराज— यह व्यर्थ का मोह है महाराज! इसी मोह ने तो महाभारत काल मे अर्जुन मे कायरता पैदा की थी। कौनसी ऐसी जय है जिसमे पराजय का दुख नही होता। पर इस तरह शोक करने से तो सृष्टि का क्रम रुक जायेगा। शोक छोडो महाराज! और अपने अपमान का प्रतिशोध लेने की तैयारी करो।

चामुण्डराय जो अब तक शान्त थे क्रोध मे उबल पडे और बोले— "चुप रहो माहिलराज! तुम्हारे अतिरिक्त यदि किसी और ने ऐसे शब्द कहे होते तो हम उसकी जबान खीच लेते। चामुण्डराय के होते हुए किसकी शक्ति है जो महाराज का अपमान कर सके।

माहिलराज— अपमान तो ऐसा हो रहा है जो सारे दिल्लीवालो की नाक कट गई है। कन्नौजपति अपनी बेटी संयोगिता का स्वयवर रचा रहा है जिसमे तुम्हारे महाराज की दरवाजे पर द्वारपाल के रूप मे पत्थर की मूर्ति बना कर खडी की जायेगी। दिल्लीनरेश का यह घोर अपमान इतिहास मे दिल्ली पर अमिट कलंक के रूप मे सदैव लिखा रहेगा।

सुनते ही पृथ्वीराज क्रोध से तमतमा उठे और हुकारते हुए बोले— राजा जयचन्द का यह साहस! मै उसे दिन मे ही रात दिखा दूँगा।

किमास— शान्ति रखिये महाराज!

पृथ्वीराज— गैर जब अपमान करता है तो सब कुछ सहन हो जाता है महामन्त्री! अपने से किया हुआ तिरस्कार तो पत्थर ने भी सहन नही किया जा सकता, वह भी चोट खा प्रतिद्वन्दी को ठोकर का स्वाद चखा देता है। हमारी सेना तैयार करो चामुण्डराय! हम बिना बुलाये ही सयोगिता के स्वयवर मे जायेगे।

पृथ्वीराज यह कह ही रहे थे कि एक सिपाही ने आकर सूचना दी "गजब हो गया महाराज! शहाबुद्दीन गोरी ने चुपचाप हमारी सीमा पर डेरे डाल दिये। कल प्रात वह आक्रमण करेगा।"

पृथ्वीराज— बहुत अच्छा हुआ, गीदड की जब मौत आती है तो वह गाँव की ओर दौडता है। चामुण्डराय! तुम दिल्ली सेना [illegible] शहाबुद्दीन गोरी की गतिविधि देखो। यदि युद्ध हो तो उसे जीवित या मुर्दा हमारे सम्मुख उपस्थित करो और हम सयोगिता के स्वयवर मे जाते है।

किमास— तनिक धैर्य से सोचो महाराज! यह [illegible] स्वयवर मे जाने का नही है। विदेशी सेना लिये दिल्ली लडने को [illegible] समय मे हम गृह युद्ध मे उलझ जावे! पहले [illegible] लीजिये, पीछे जयचन्द को भी [illegible] लिया जायेगा।

पृथ्वीराज— लेकिन तब तक सयोगिता [illegible] सयोगिता के बिना [illegible] है महामन्त्री! हम [illegible] ही रहेंगे।

किमास ने मन ही मन में सोचा, "नारी भी मनुष्य के पैर में कितनी कठोर जंजीर है। दासता की बेड़ियाँ तोड़ना सरल है पर प्रणय के फूलों की लड़ियाँ तोड़ने वाला कौन भीष्म हो सकता है! मनुष्य प्रणय के चरणों पर राज्य तक की बलि देने को प्रस्तुत है। जो राजा नारी के इंगितों पर नाचना चाहता है, उसे राज्य-सिंहासन पर नहीं बैठना चाहिये। जिसे प्रणय का रस पीना है उसे मान और मर्यादा की बलि चढ़ानी ही पड़ेगी। किन्तु चिन्ता तो इस बात की है कि महाराज के प्रणय की भेंट में कहीं सारी दिल्ली दास न हो जाये। व्यक्ति की आकांक्षाओं के पीछे कहीं समूह शताब्दियों तक त्राहि त्राहि न पुकारता रहे। राजतन्त्र में यही तो बड़ा दोष है कि राजा जनता की इच्छा का नहीं, अपनी इच्छाओं का राजा होता है। यदि जनतन्त्र होता तो जनता ऐसे राजा को सिंहासन से उतार देती। सौ गुण होते हुए भी हमारे राजा में प्रणय की चाट का यह कैसा दोष है! हमारे राजा को सद्-बुद्धि दो भगवान!"

मन ही मन में कुछ देर इस प्रकार विचार करने के बाद किमास ने प्रत्यक्ष में कहा— शहाबुद्दीन ने पूरी शक्ति से आक्रमण किया होगा महाराज! उसके साथ दिल्ली से बड़ी सेना और कितने ही बड़े बड़े सरदार होंगे। अकेले चामुण्डराय को इस युद्ध के लिये प्रेषित करना कदाचित हितकर न हो।

पृथ्वीराज— घबराओ नहीं महामन्त्री! चामुण्डराय के साथ केहिल्ल मालोराव और कूरम्भन भी अपनी अपनी सेना सहित प्रयाण करेंगे। यदि इतने पर भी वह यवन लुटेरा पराजित न हुआ तो शीघ्र ही हम स्वयं भी अन्तिम चोट कर शहाबुद्दीन से ही युद्ध के लिये प्रस्थान करेंगे।

आज्ञा देकर चौहान महल मे चले गये तथा राजसभा समाप्त हो गई।

दूसरे दिन एक चुनी हुई लडाके वीरो की सेना के साथ दिल्लीपति ने कन्नौज की राह पकडी।

चुपचाप कन्नौज के निकट आकर पृथ्वीराज ने बहुत सी सेना तो मार्ग के एक निकटवर्ती बीहड वन मे छिपा दी, तथा दो सौ सवार लेकर स्वय कन्नौज की ओर लपके।

उधर कन्नौज मे सयोगिता के स्वयवर की धूमधाम मची हुई थी। कन्नौज के सज्जित मण्डप मे बडे बडे राजा बैठे हुए मूछे मरोड रहे थे। कोई आँखे छोटी होते हुए भी उन्हे फाड फाड कर बडी करने मे लगा था। कोई अपनी पगडी सँभली होने पर भी बार बार सँवार रहा था। कोई अपनी मोतियो की माला को दिखाने के प्रयत्न मे लगा हुआ था। कोई अपने तने हुए सीने को और तानने मे लगा हुआ था। कोई सुनहरी परिधान पहने था, तो कोई गुलाबी रेशम के सुनहरी कसीदे मे अकडे बैठा था। न जाने कब कब से और कितनी [illegible] लागत से राजाओ ने आज के लिये पोशाके सिलवाई थी और न जाने कब से दण्ड पेल पेल कर अपने सीने को उभार रहे थे।

उस समय बदसूरत से बदसूरत भी अपने आपको [illegible] खूबसूरत समझ रहा था। हरेक को यही आशा थी कि सयोगिता उसी के गले मे जयमाला डालेगी।

आखिर वह घडी आ ही गई जिसकी राजा [illegible] कर रहे थे। चारणो के मधुर गीत के [illegible] सयोगिता स्वय जयमाला लिये [illegible] और सखियो के साथ धीरे धीरे आई।

चारण ने प्रत्येक राजा का परिचय देते हुए गुणगान किया और सयोगिता फूलों की झुकी हुई डाली की तरह यौवन के बोझ से दबी हुई सी आगे बढती चली गई ।

जिस राजा के आगे सयोगिता आती थी वह अपनी सारी शक्ति लगाकर सौन्दर्य और गुणो का कोष बनने का प्रयत्न करता, और जब सयोगिता आगे बढ जाती तो निराशा से मुँह बना कर ढलती हुई किरण के सदृश हतप्रभ होकर बैठ जाता ।

सौन्दर्य और लाज की सिमटी हुई छटा की तरह धीरे धीरे चलती हुई सयोगिता जब मध्य के द्वार के निकट आई तो द्वार पर लगी एक प्रस्तर मूर्ति के सामने ठिठक कर खडी हो गई ।

पृथ्वीराज की मूर्ति के आगे सयोगिता को रुकते देख जयचन्द ने अपने सिंहासन से उठते हुए कहा-- "यह तो पत्थर की मूर्ति है बेटी! आगे बढो ।"

सयोगिता— "लेकिन मैं तो जिनकी यह मूर्ति है उनको ही वर चुकी हूं पिताजी!" कहते हुए सयोगिता ने अपने प्रियतम की प्रतिमा के कण्ठ मे जयमाला डाल दी ।

जैसे ही सयोगिता ने जयमाला डाली वैसे ही घोडे पर सवार पृथ्वीराज ने द्वार मे प्रवेश किया । अपने प्रियतम को प्रत्यक्ष देखते ही सयोगिता ने अपने कण्ठ से माले के फूलों का हार निकाल प्राणनाथ के गले में डाल दिया ।

हार कण्ठ मे पडा और पृथ्वीराज ने हाथ पकड सयोगिता को अपने घोडे पर सवार कराया और देखते ही देखते वे हवा से बात करते हुए सयोगिता को लेकर भाग निकले ।

आगे आगे पृथ्वीराज और पीछे पीछे जयचन्द की सेना भागी ।

आगे बढते बढते पृथ्वीराज की सेना प्रकट होती चली गई और मार्ग में दोनो ओर की सेना का घोर युद्ध हुआ।

जयचन्द की सेना को मारते और मरते हुए पृथ्वीराज अपनी पूरी शक्ति लगा दिल्ली की सीमा में आगये।

रक्त से राह को भिगोते हुए तलवारो की खनन खनन में बिछुओ की रुनझुन को दिल्लीपति अपने महल में लाये। संयोगिता के सौन्दर्य दर्शन से ही पृथ्वीराज की सारी थकान दूर हो गई। रूप की सौर शराबी आंखो से देखते हुए पृथ्वीराज ने रूपामृत पान किया।

संयोगिता में एक अद्भुत सौन्दर्य था, या यह कहो कि शांत में जो समा जाता है वह सुन्दर ही सुन्दर दीखता है। सौन्दर्य के उन फूल पर पृथ्वीराज भौंरे बन कर ऐसे मचले कि सुध बुध खो बैठे।

संयोगिता भी चौहान के गले का हार बन गई। जीवन में क्या कोई प्रियतमा अपने प्रियतम को पलभर के लिये पृथक करना चाहती है। संयोगिता का प्रणय आज परिणय में बदला था। उनके रोम रोम का स्पन्दन जाग कर तृप्ति के लिये आकुल था। उसने चौहान को अपनी जवानी में जकड लिया। नई नवेली को पाकर चौहान [illegible] न तो कर्नाटकी का ध्यान था और न चन्द्रागदा का। [illegible] दुनिया संयोगिता के आकर्षण में सिमट कर उन्हीं हो गई।

प्रणय का राग ऐसा छिड़ा कि चन्द्रमौलि दिल्ली [illegible] प्राणों से देखने लगी या यह कहो कि दिल्ली का [illegible] ने कामदेव से मिलकर [illegible] दिल्ली [illegible] था। इधर पृथ्वीराज संयोगिता के [illegible] [illegible]

[illegible]

चामुण्डराय उस विदेशी शैतान का शक्ति से मुकाबला न कर रहे होते तो वह अब तक कभी का दिल्ली के इस वैभवपूरित दुर्ग मे आ लिया होता। आँखे खोलो चौहान! और तुरन्त ही उस विदेशी से युद्ध के लिये प्रयाण करो। राजा जव आगे चलता है तो प्रजा उसके पीछे पीछे चलती है। तुम आगे वढो, विजय तुम्हारे हाथ मे है।"

पृथ्वीराज— मै सो रहा था कविराज! तुमने मेरी आँखे खोल दी। मै आज ही युद्ध के लिये प्रस्थान करता हूँ।

और मन ही मन मे चौहान ने कहा— "राजा का जीवन भी कितना सघर्षमय होता है! ससार समझता है कि उनके जीवन मे सारे सुख होते है। पर उसके जीवन मे शान्ति कहाँ होती है! हर समय राज्य-रक्षा उसे अशान्त बनाये रखती है।"

कैमास— तुम धन्य हो कवि! सचमुच जिस देश मे कवि नही, वह देश मृतक है। राजा और मन्त्री जव आँखे मूंद लेते है, अधिकारी-गण जव राजलक्ष्मी से वलात्कार करने लगते है तो कवि की स्वतन्त्र वाणी आत्मा को जगाती है। राज्याधिकारियो के बिना राज्य का कार्य चाहे चल जाये, पर कवि के विना किसी देश की जिन्दगी सुखी और सुरक्षित नही रह सकती।

चन्द्रबरदाई— यह समय भाटो की तरह कवि की प्रशसा करने का नही है महामन्त्री! कोई युक्ति बताओ जिससे आर्य [illegible] देश का कल्याण हो सके।

कैमास— आप तुरन्त युद्ध के लिये प्रस्थान कीजिए [illegible] हिन्दू राजाओ का सगठन कर [illegible] [illegible] निकालने की योजना कार्यान्वित करता हूँ। [illegible] अपना मोर्चा [illegible] लीजिये मै शीघ्र ही [illegible] आपकी सहायता के लिये [illegible] हूँ।

शंख बजा और चौहान के घोड़े पंजाब की ओर धूल उड़ाते हुए दौड़ते दिखाई देने लगे। पानीपत के पास दिल्ली की ओर आता हुआ एक लहू-लुहान सैनिक मिला। उसने घबराते हुए कहा— "महाराज! सेनापति चामुण्डराय बड़ी वीरता से यवनों को मौत के घाट उतार रहे हैं। कितनी ही बार यवनों की सेना के पैर उखड़ गये। यवन सेना भाग भी गई थी। पर मुहम्मद गोरी का एक सरदार कुतुबुद्दीन न जाने कहाँ से टिड्डी दल की तरह सेना लेकर टूट पड़ा है। हमारे सामन्त और सैनिक भूखे शेरों की तरह यवनों का भक्षण कर रहे हैं। चामुण्डराय का विकराल रूप देखकर गोरी और कुतुबुद्दीन अपने आपको मृत्यु के मुँह में समझ रहे हैं। पर उतने बड़े आक्रमण के सामने हमारी थोड़ी सी सेना कब तक टिकेगी महाराज! आप शीघ्र जाकर हम सब के प्राण सामन्तों की रक्षा कीजिये!"

कुछ उत्तर दिये बिना ही चौहान पवनसुत की तरह तरावड़ी के मैदान में जा पहुँचे। उनको देखते ही चामुण्डराय का वेग और उत्साह चौगुना हो गया।

चामुण्डराय ने कुतुबुद्दीन के आगे अपना घोड़ा अड़ाया और पृथ्वीराज महम्मद गोरी पर झपट पड़े।

किन्तु कुतुबुद्दीन भी कम नहीं था। चामुण्डराय के सामने तलवार तान कर हुङ्कार उठा। लोहे से लोहे का यह अद्भुत मुकाबला था। इतिहास में ऐसा भीषण द्वन्द्व युद्ध चाहे लिखित न हो पर किसी कवि की आँखों ने इसे अवश्य देखा होगा।

इतने [illegible] पृथ्वीराज ने गोरी का वार अपनी ढाल पर रोक [illegible] से अपना पैर [illegible] गोरी के [illegible] पर [illegible] मारी कि वह घोड़े से नीचे गिर पड़ा और फिर [illegible] उसी [illegible] पर [illegible] दिया।

मौत सामने देखते ही मुहम्मद गोरी ने गिडगिडा कर कहा— "मुझे माफ करो, मै तुमसे अपनी जिन्दगी की भीख माँगता हूँ।"

क्रोध के इस भीषण दृश्य मे भी चौहान को हँसी आ गई और बोले— "जो हमारे आगे हाथ फैलाता है हम उसे कभी निराश नहीं करते। जाओ, हमने तुम्हे छोडा।"

कहते हुए चौहान ने जैसे ही दुश्मन को छोडा, वैसे ही उसने उठने का बहाना करते हुए उठकर तलवार का एक वार पीछे से पृथ्वीराज पर किया।

चौहान की कमर का कवच कट गया, किन्तु चौहान तेजी से घूमे और अपनी तलवार पर गोरी की तलवार का दूसरा वार रोकते हुए दूसरे हाथ से भाला उसके मस्तक मे मारा।

और साथ ही चौहान के अंगरक्षक और सैनिकों ने तलवारों से गोरी को बंद कर लिया।

गोरी फिर गिडगिडाया और चौहान ने फिर उसे छोड दिया।

गोरी छूटा ही था कि उसकी छिपी हुई कुमुक आ पहुँची। सहायता देख कर गोरी फिर गरज उठा।

चौहान भाले और तलवारों मे घिर गये। पर वाह रे दाँव पेंच! जिस प्रकार अन्धकार को चीरते हुए रक्तवर्ण सूर्य का उदय होता है वैसे ही चौहान रक्त भीगी तलवार चमचमाते हुए चारों ओर [illegible] लगे। युद्ध मे कौन ऐसा सबल वीर था, जिसके सीने को [illegible] चौहान की तलवार नहीं चमकी। वह [illegible] था पर [illegible] लगता मानो तारों के बीच मे चन्द्रमा चमक रहा हो। [illegible] हार की भवानी खप्पर लिये रुधिर पान कर रही थी। [illegible] ने चौहान के सहयोगी सबल वीर [illegible] [illegible] मुहम्मद गोरी की सेना मे भागने की [illegible]

चौहान ने संयोगिता को हृदय से लगाते हुए व्यंग से कहा—नारी जब अपने प्राणप्रिय को वीरता से आभूषित देखती है तो अपने प्यार का सारा ही अमृत उँडेल देना चाहती है। पुरुष के प्रति स्त्री प्यार के समय जितनी उदार दीखती है, उतनी श्रद्धा शायद भक्ति की उपासना में भी नहीं होती। आज हम विजयी हैं, इसलिये अपने और पराये सभी हमारी पूजा करते हैं। कल यदि हम दैवयोग से पराजित हए तो भी क्या तुम हमारा उसी तरह से स्वागत करोगी?

संयोगिता—ऐसी अशुभ वाणी न बोलो नाथ! मेरे स्वामी क्या कभी पराजित भी हो सकते हैं! अशुभ कल्पना भी मनुष्य को कभी नहीं करनी चाहिये। आप युद्ध से थके हुए आ रहे हैं। मैं औषधियों का लेप किये देती हूँ, आप विश्राम कर लीजिये!

सहारा देकर संयोगिता ने चौहान को शैया पर लिटा दिया और स्वयं सेवा में लग गई।

जब कोई प्यार से सुलाती है तो शयन में ब्रह्मानन्द का स्वाद आता है। बड़ी से बड़ी पीड़ा, कठोर से कठोर चोट प्यार की थपकियों में सो जाती है। चौहान गहरी नींद में सो गये।

किन्तु रात के ढलते ही जो सुख की रात समझ कर गहरी नींद में सो जाता है उसकी शांति चोरों के हाथ आती है। उधर चौहान [illegible] प्रणय [illegible] में [illegible] थे। और [illegible] उस [illegible] पर [illegible] रही थी।

[illegible] सुहानी [illegible], लेकिन प्रणय की [illegible] नहीं [illegible]। [illegible] मनुष्य [illegible] है।

पहली हार

न जाने क्यो हँसी के अन्तर मे रुदन की चीख छिपी रहती है। हर सुख दुःख मे बदल जाता है। रात के रंगीन मोती सुबह की धूप मे सूख जाते हैं।

सुबह को अधरो मे अधर हटे, पर प्यास बनी ही रही। प्रणय की प्यास उर मे लिये चौहान ने नित्यकर्म मे निवृत्त हो जयघोषो के मध्य राज्य-परिषद् की ओर प्रस्थान किया।

राज्य-परिषद् आज पूरे वैभव मे पुष्पित होते हुए भी बार बार [illegible] कुछ लाल लाल हो रहा था, जिस प्रकार [illegible] सोने के बाद आँखे खुलने पर आँखे लाल लाल होती हैं। पृथ्वीराज ने [illegible] परिषद्-भवन मे प्रवेश किया। गर्व से माथा उठाये हुए और प्रमाद से उनीदी आँखे लिये वह आज के खण्डहर और कल के [illegible] दुर्ग मे सिहासन पर विराजमान हो गये।

सिहासन पर बैठते ही दिल्लीपति को प्रत्येक पारिषद ने [illegible] अभिवादन किया। अभिवादन का उत्तर देते हुए चौहान ने चारो ओर निहारते हुए कहा [illegible] आज महामन्त्री दिखाई नहीं दे रहे। [illegible] क्यो नही आये ?"

मन्त्री कुणवन्त ने उठते हुए विनम्रता से कहा — [illegible] कि उनके सिर मे दर्द है। [illegible] राज्य-परिषद् मे [illegible] पधारेगे।"

पृथ्वीराज— पता नही महामन्त्री [illegible] आये दिन रोगी रहने लगे। [illegible] मूल्यवान [illegible] पर [illegible] के [illegible] पद पर [illegible] हीरे [illegible]

हमने पंजाब को विजय करते हुए वहाँ के राजमहल से प्राप्त किया था। आओ सामन्त! इस हीरक माला के साथ साथ हमारा हार्दिक अभिनन्दन स्वीकार करो!

चामुण्डराय गर्व से आँखें झुकाते हुए उठे और अभिवादन करते हुए बोले— दिल्लीपति का दिया हुआ मेरे पास क्या नहीं है! मान, मर्यादा, धन आपका दिया हुआ सभी कुछ तो मेरे पास है। इतना गौरव दिया है आपने मुझे जिसको संभालने मे मैं अपने आपको असमर्थ सा अनुभव करता हूं।

पृथ्वीराज— यह तो तुम्हारी महानता है चामुण्डराय! वास्तव में दिल्ली का जो गौरव है वह सब आपकी वीरता का ही परिणाम है। आपने युद्ध पर युद्ध जीत कर दिल्ली की गरिमा को चार चाँद लगा दिये हैं।

चामुण्डराय— जो कुछ भी है सब आपका प्रताप है। दिल्ली नरेश की दीप्ति की किरण से ही यह सेवक ज्योति प्राप्त किये हुए है। यदि आज्ञा हो तो एक विनय है महाराज!

पृथ्वीराज— तुम्हें जो भी कहना है संकोच छोड़ कर कहो! हम तुमसे इतने प्रसन्न हैं कि तुम्हारे कहने पर अपना सर तक दे सकते हैं। कहो सामन्त, क्या इच्छा है?

चामुण्डराय— इच्छा नहीं, निवेदन है महाराज! और वह यह कि इस बार के युद्ध करते हुए हमारे जो सैनिक वीरगति को प्राप्त हुए हैं उनके घरों पर कोई कष्ट न हो। जो कुछ उनको राज्य से मिलता था [illegible] उनके घरों पर अब बिना मांगे पहुंच जाना चाहिये।

पृथ्वीराज— हम तुम्हारी इस मांग से बहुत प्रसन्न हुए सामन्त! [illegible] सैनिकों के लिये [illegible] निश्चित कर दिये जाएं [illegible]

जुल्म किया है। आप शान्ति के देवता हैं। मैंने इस शान्तिप्रिय देश की शान्ति भंग की है, कितने ही बेगुनाहों के खून से अपने हाथ रंगे हैं। हिन्दू और मुसलमानों के खून से मेरा ज़र्रा-ज़र्रा रंगा हुआ है। मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ। मुझे माफ कर दीजिये!

पृथ्वीराज को हँसी आ गई। वे हँसते हुए ही कुछ क्रोध में बोले—बेशर्म तो बहुत होते हैं पर आप जैसा नहीं देखा। आपको माफ करना पाप है, पर माफ न करना हमारी राजपूती शान के विरुद्ध है। युद्ध भूमि में मैंने तुम्हें बार बार क्षमा किया किन्तु तुमने छूट कर हर बार वार मारा। तुम्हारा काला इतिहास निर्दोषों के रक्त से लिखा हुआ है। तुम लोगों ने हमारे शान्त देश पर आक्रमण करके कितनी ही देवमूर्तियां [illegible] डाला, मन्दिर तोड़े, हीरे और जवाहरात लूट लूट कर ले गये। किन्तु आज तुम्हें यह पता चल गया होगा कि शान्ति के देवताओं के [illegible] अग्नि भी होती है। हमारा देश जलता हुआ पहाड़ है जिसके [illegible] ज्वाला फूटती है। जो इस देश की ओर पाप की दृष्टि से देखता है राजपूतों की भवानी उसकी आंखें निकाल लेती है। जी चाहता है कि तुम्हारा सिर काट कर भारतवर्ष की सीमा पर लटका दिया जाय जिससे कि कोई तुम्हारा भाई भविष्य में हमारी तलवार से न टकराये।

गोरी—मैं शर्म से जमीन में गड़ा जा रहा हूँ, मुझे और शर्मिन्दा न करो! [illegible] दया कर दिल्ली के [illegible] महाराज [illegible]। मुझे छोड़ दो महाराज! मैं [illegible] कभी [illegible] न करूँगा।

[illegible]

आती है। हम तुम्हे छोड देगे, किन्तु तुम्हे हमारे अधीन रह कर हमे अर्थ के रूप मे वार्षिक राजदण्ड देना होगा।

गोरी— मुझे मजूर है महाराज! हीरे, मोती, जवाहरात जो कुछ आप आज्ञा देगे, मै भेट करता रहूगा।

पृथ्वीराज— अच्छा तो हमने तुम्हे मुक्त किया।

महाराज के मुँह से वाक्य निकला ही था कि किमास ने धमकते हुए कहा— किसको मुक्त किया, क्यो मुक्त किया? क्या बात है महाराज!

पृथ्वीराज— बात कुछ भी नही है महामन्त्री! मुहम्मद गोरी दांतो मे तिनका दबा कर माफी मांग रहे थे, हमने माफ करते हुए उनको मुक्त कर दिया है।

किमास— यह नही हो सकता महाराज! महामन्त्री से मन्त्रणा किये बिना ही राजा किसी ऐसे अपराधी को मुक्त नही कर सकता, जिसने हमारे देश की स्वतन्त्रता, संस्कृति और सम्पत्ति पर आक्रमण किया है, जिसने हमारे देव मन्दिरो को तोड फोड कर लूटा है, जिसके कारण हमारी बडी भारी सेना वीर गति को प्राप्त हुई। ऐसे पापात्मा को मुक्त करके हम अपनी मृत्यु बुला लेगे। दब कर छूटा हुआ शत्रु से भी भयकर होता है। महाराज को अपनी यह आज्ञा बदलनी होगी।

चामुण्डराय— महामन्त्री ठीक कहते है महाराज! [illegible] देश पर बार बार आक्रमण कर हमे बहुत क्षति पहुँचाई है। [illegible] इसका सिर नही कुचला जायेगा, जब तक [illegible] जायेगा तब तक हमारा देश दबा रहेगा। [illegible] छोड़ने की अपेक्षा मार डालना अधिक उचित है। [illegible] [illegible] करता हूँ।

आती है। हम तुम्हे छोड देगे, किन्तु तुम्हे हमारे अधीन रह कर हमे अर्थ के रूप मे वार्षिक राजदण्ड देना होगा।

गोरी— मुझे मजूर है महाराज ! हीरे, मोती, जवाहरात जो कुछ आप आज्ञा देगे, मै भेट करता रहूगा।

पृथ्वीराज— अच्छा तो हमने तुम्हे मुक्त किया।

महाराज के मुँह से वाक्य निकला ही था कि किमास ने धमकते हुए कहा— किसको मुक्त किया, क्यो मुक्त किया ? क्या बात है महाराज !

पृथ्वीराज— बात कुछ भी नही है महामन्त्री ! मुहम्मद गोरी दांतो मे तिनका दबा कर माफी माँग रहे थे, हमने माफ करते हुए उनको मुक्त कर दिया है।

किमास— यह नही हो सकता महाराज ! महामन्त्री से मन्त्रणा किये बिना ही राजा किसी ऐसे अपराधी को मुक्त नही कर सकता जिसने हमारे देश की स्वतन्त्रता, सस्कृति और सम्पत्ति पर आक्रमण किया है, जिसने हमारे देव मन्दिरो को तोड तोड कर लूटा है, जिसके कारण हमारी बडी भारी सेना वीर गति को प्राप्त हुई। ऐसे पापात्मा को मुक्त करके हम अपनी मृत्यु बुला लेंगे। दब कर छूटा हुआ साँप शत्रु से भी भयकर होता है। महाराज को अपनी यह आज्ञा बदलनी होगी।

चामुण्डराय— महामन्त्री ठीक कहते है महाराज ! यवनो ने हमारे देश पर बार बार आक्रमण कर हमे बहुत क्षति पहुँचाई है। जब तक इनका सिर नही कुचला जायेगा, जब तक इनको जड से नही मिटाया जायेगा तब तक हमारा देश दबा रहेगा। चोट खाये हुए साँप को छोडने की अपेक्षा मार डालना अधिक उचित है। मै महामन्त्री के मत की सराहना करता हूँ।

जुल्म किया है। आप शान्ति के देवता हैं। मैंने इस शान्तिप्रिय देश की शान्ति भग की है, कितने ही वेगुनाहो के खून मे अपने हाथ रँगे हैं। हिन्दू और मुसलमानो के खून से मेरा ज़र्रा-ज़र्रा रँगा हुआ है। मै बहुत शर्मिन्दा हूँ। मुझे माफ कर दीजिये!

पृथ्वीराज को हँसी आ गई। वे हँसते हुए ही कुछ क्रोध मे बोले—वेशर्म तो बहुत होते हैं पर आप जैसा नही देखा। आपको माफ करना पाप है, पर माफ न करना हमारी राजपूती शान के विरुद्ध है। युद्ध भूमि मे मैंने तुम्हे बार बार क्षमा किया किन्तु तुमने छूट कर हर बार डक मारा। तुम्हारा काला इतिहास निर्दोषो के रक्त मे लिखा हुआ है। यवनो ने हमारे शान्त देश पर आक्रमण करके कितनी ही देवमूर्तियो को नष्ट कर डाला, मन्दिर तोडे, हीरे और जवाहरात लूट लूट कर ले गये। किन्तु आज तुम्हे यह पता चल गया होगा कि शान्ति के देवताओ मे ज्वालामुखियो की अग्नि भी होती है। हमारा देश जलता हुआ पहाड है जिसके रोम रोम से ज्वाला फूटती है। जो इस देश की ओर पाप की दृष्टि से देखता है राजपूतो की भवानी उसकी आँखें निकाल लेती है। जी चाहता है कि तुम्हारा सिर काट कर भारतवर्ष की सीमा पर लटका दिया जाये, जिससे कि कोई तुम्हारा भाई भविष्य मे हमारी तलवार से न टकराये।

गोरी— मैं स्वय जमीन मे गडा जा रहा हू, मुझे और शर्मिन्दा न करो! मैं दाँत मे तिनका दबा कर दिल्ली के यशस्वी महाराज से अपने प्राणो की भीख माँगता हूँ। मुझे छोड दो महाराज! मै अपने वतन को वापिस चला जाऊँगा और फिर कभी कही भी हमला करने की जुर्रत न करूँगा।

पृथ्वीराज— यदि जुर्रत करोगे भी तो परिणाम मे वही फल भोगोगे जो अब भोग रहे हो। तुम्हारे गिडगिडाने से हमको तुम पर दया

आती है। हम तुम्हे छोड देगे, किन्तु तुम्हे हमारे अधीन रह कर हमे अर्थ के रूप मे वार्षिक राजदण्ड देना होगा।

गोरी— मुझे मजूर है महाराज ! हीरे, मोती, जवाहरात जो कुछ आप आज्ञा देगे, मै भेट करता रहूगा।

पृथ्वीराज— अच्छा तो हमने तुम्हे मुक्त किया।

महाराज के मुँह से वाक्य निकला ही था कि किमास ने धमकते हुए कहा— किसको मुक्त किया, क्यो मुक्त किया ? क्या बात है महाराज !

पृथ्वीराज— बात कुछ भी नही है महामन्त्री ! मुहम्मद गोरी दांतो मे तिनका दबा कर माफी माँग रहे थे, हमने माफ करते हुए उनको मुक्त कर दिया है।

किमास— यह नही हो सकता महाराज ! महामन्त्री से मन्त्रणा किये बिना ही राजा किसी ऐसे अपराधी को मुक्त नही कर सकता जिसने हमारे देश की स्वतन्त्रता, सस्कृति और सम्पत्ति पर आक्रमण किया है, जिसने हमारे देव मन्दिरो को तोड तोड कर लूटा है, जिसके कारण हमारी बडी भारी सेना वीर गति को प्राप्त हुई। ऐसे पापात्मा को मुक्त करके हम अपनी मृत्यु बुला लेंगे। दब कर छूटा हुआ साँप शत्रु से भी भयकर होता है। महाराज को अपनी यह आज्ञा बदलनी होगी।

चामुण्डराय— महामन्त्री ठीक कहते है महाराज ! यवनो ने हमारे देश पर बार बार आक्रमण कर हमे बहुत क्षति पहुँचाई है। जब तक इनका सिर नही कुचला जायेगा, जब तक इनको जड से नही मिटाया जायेगा तब तक हमारा देश दबा रहेगा। चोट खाये हुए साँप को छोडने की अपेक्षा मार डालना अधिक उचित है। मै महामन्त्री के मत का समर्थन करता हूँ।

कृपावन्त— मेरी भी यही राय है।

चन्द्रवरदाई— सत्य है महाराज! मुहम्मद गोरी को छोडना नीति, न्याय और धर्म के विरुद्ध है। कही ऐसा न हो कि छूटा हुआ शत्रु समय पाकर फिर टूट पडे और दिल्ली का यह दुर्ग जिसकी चोटी आकाश को चुनौती दे रही है कहीं शत्रु के झण्डे से झुक न जाये! राजपूती तलवार पर कही आँच न आ जाये! इस देश के साहित्य और भाषा पर कही विधर्मियो का अट्टहास न होने लगे! कही भारतीय धर्म और कर्म पर यवनो की अनीति न होने लगे! देश, धर्म और सतीत्व की रक्षा के लिये यवन आक्रान्ता को छोडना धर्म विरुद्ध है, नीति विरुद्ध है। मुहम्मद गोरी को नहीं छोडना चाहिये।

गोरी— मेरे गुनाहो को देखते हुए आप जो भी कह रहे है बजा है, लेकिन मैं आबेहयात की कसम खाकर कहता हूँ कि हिन्दुस्तान का सदा अहसानमन्द रहूँगा। मै जी-जान से सदा महाराज पृथ्वीराज का खादिम बना रहूँगा। मुझ पर यकीन करो! आप दया के देवता हैं। आपकी बहादुरी के नगमे चाँद और सूरज की रोशनी में जगमगाते हैं। शहशाहो के ताज आपके पैरो मे झुके रहते हैं। आप मुझे माफ कर दीजिये! आपकी वीरता मेरे जैसे हजारो को छोड कर फिर पकड सकती है। मैं हार चुका। तवारीख पुकार पुकार कर कहेगी कि हिन्दुस्तान के दरयादिल राजा पृथ्वीराज चौहान ने शहाबुद्दीन गोरी को उसके गुनाहो के बावजूद भी गिडगिडाने पर माफ कर दिया। अगर आपने मुझे माफ नही किया तो इतिहास इसका उलटा कहेगा, और मेरे दिल में यह बात सदा तकलीफ देती रहेगी कि दिल्ली के बहादुर राजा पृथ्वीराज के राजदरबार मे अगर कोई कमी देखी तो वह यह कि वहाँ हाथ जोड कर माफी माँगने पर भी एक गुनाहगार को बख्शा नही

गया। आप गगाजल हैं जिसमे मिलकर मैं गदा नाला भी पाक पानी बन जाऊँगा।

पृथ्वीराज— कविराज, सामन्त, मन्त्रीगण एव सभासदो! मनुष्य के लिये आत्मग्लानि से बडी कोई सजा नही है। हमारे कैदी को अपने किये पर पश्चाताप है। वह दिल्लीनरेश से गिडगिडाकर दया की भीख मांग रहा है। शहाबुद्दीन साहब को छोड ही देना चाहिये। ऐसा कायर छूट कर भी हमारा क्या कर लेगा!

किमास— समय पाकर चीटी भी हाथी को मार डालती है महाराज! शहाबुद्दीन साहब केवल आपके व्यक्तिगत दुश्मन नही हैं, वे इस सारे देश के दुश्मन हैं। इनको छोड कर कल हम अपने मन्दिरो को मस्जिद बनते देखेगे, अपने दुर्गों पर कुरान की आयते खुदी हुई होगी। हमारे धर्म-ग्रन्थो की होली जलती दिखाई देगी। हिन्दुओ के जनेऊ उतारे जायेगे, चोटियाँ काटी जायेगी और इस प्रकार इस्लाम धर्म को हिन्दुस्तान के जन जन मे जबरदस्ती फैलाया जायेगा। इसलिये इस देश के दुश्मन को छोडना सारे देश को सूली पर चढाना है।

पृथ्वीराज— तो क्या महामन्त्री को अपनी बुद्धि, चामुण्डराय को अपनी भुजाओ और कविराज को अपनी कविता पर भरोसा नही रहा जो एक कायर शत्रु से डरे जा रहे है! हमने जो घोषणा कर दी वह टल नही सकती। राजाज्ञा हो चुकी है कि शहाबुद्दीन गोरी को छोड दिया जावे।

किमास— राजतन्त्र मे यदि अपनी इच्छा का दोष न होता तो शायद जनता को कभी भी रोना न पडता। विनाश के समय मनुष्य की बुद्धि उल्टी हो जाती है। नही मानते तो जैसी आपकी इच्छा! लेकिन यह ध्यान रहे कि शहाबुद्दीन गोरी साधारण शत्रु नही है वह बहादुर भी है और होशियार भी। वह गजनी पर अधिकार करके सुल्तान

को जीत चुका है। 'पेशावर उसके अधिकार मे है। पजाब के गजनवी शासक खुसरो मलिक को हरा कर यह दिल्ली की ओर बढ रहा था पर भवानी की कृपा से इसे हार कर वन्दी बनना पडा। अब ऐसे भयकर शत्रु को छोडना मातृभूमि की छाती में भाला भोकना है।

पृथ्वीराज—आप सदैव हमारी बात को काटते रहते हैं महामत्री! हम नही चाहते कि हमारी आज्ञा के विरुद्ध इतनी बात बढे। जो कुछ हम कह चुके उसके अनुसार शहाबुद्दीन गोरी से दण्ड लेकर उसे छोड दिया जाये।

पारिषद् मौन खडे रह गये और मुहम्मद गोरी तूफान मे फँसी हुई नाव की तरह चक्कर काटते हुए बचाव की आशा मे सूखे पत्ते से हलके हो गये।

आज्ञा देकर मदान्ध से पृथ्वीराज महल की ओर चल दिये और शहाबुद्दीन गोरी को अपनी सेना के साथ अतिथि की तरह उसकी सीमा पर पहुँचा दिया गया।

× × ×

गोरी को अपनी हार का उतना रज नही हुआ जितनी इस बात की खुशी हुई कि हिन्दुस्तान के दयावान राजा ने उसे छोड दिया। वह मन ही मन मे सोच रहा था कि "इसे बुद्धिमानी कहूँ या मूर्खता! कितने वीर हैं हिन्दुस्तान के राजा और कितने नीतिहीन! अपने बल मे ये कितने अन्धे रहते हैं! नादान कही का! तूने मुझे छोड दिया लेकिन मै तुझे नही छोड सकता। जब तक दिल्ली पर तुर्क झण्डा नही फहरा दूंगा तब तक दूसरे वक्त खाना नही खाऊँगा, सिर्फ सूती कपडा ही पहनूंगा। जब तक अपनी बेइज्जती का बदला नही ले लूंगा तब तक आराम नही करूगा। ओ परवरदिगार! तू मेरी मदद कर। या खुदा! तू मुझ पर रहम कर, तू मुझे सहारा दे!"

सोचते हुए शहाबुद्दीन चले जा रहे थे कि सामने से उनका सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक घोडे पर सवार आता दिखाई दिया। मालिक को देखते ही वह घोडे से उतर कर बार बार आदाब बजाता हुआ उनसे चिपट गया। इस कलियुगी भरत-मिलाप के समय दोनो ही की आंखे बरस पडी, और फिर रोते हुए कुतुबुद्दीन ने पूछा— "उन मलिकुलमौतो के हाथो से कैसे छूटे मालिक! वे इन्सान हैं या लोहे के पुतले। तोबा तोबा! एक एक राजपूत हमारे दस दस सिपाहियो को खा गया। और उस चामुण्डराय की तो क्या कहूँ, तलवार के एक एक वार से चार चार को तराश डालता था। तलवार टूट जाने पर उसने मेरी ही छाती मे मुक्का मार कर मेरी ही तलवार छीन ली। तलवार छिनते ही मै तो जान बचा कर भागा।"

गोरी— कुछ न पूछो ऐबक! हिन्दुस्तान के राजपूत इन्सान नही, मलिकुलमौत हैं, मलिकुलमौत! वे मौत से नही डरते, मौत उनसे डरती है। पृथ्वीराज आदमी नही, शेरो का भी शेर है। वह उँगली से शेर को मार डालता है। मै उसकी बहादुरी का कायल हू। हमारे बडे बडे बहादुर उसके तीर और तलवारो की भेट चढ गये। पृथ्वीराज चौहान को मै जितना बहादुर देख पाया, उससे ज्यादा वह रहमदिल है। वह हजार बार के गुनाहगारो को भी तनिक से गिडगिडाने पर माफ कर देता है। मुझे जब उसने कैद कर लिया तो मैने उससे दोस्ती का हाथ बढाया, उससे अपने किये की माफी माँगी और उसने मुझे माफ कर दिया। माफ करते समय हिन्दुस्तान के उस बेजोड बहादुर ने यह तक न सोचा कि मै किसे माफ कर रहा हू। उसे अपनी ताकत पर बड़ा भरोसा है। लेकिन ऐबक! मेरे रोम रोम मे जख्म है, जब तक ये घाव नही भरेंगे तब तक मै उसी तरह तकलीफ महसूस करता रहूंगा जिस तरह कोई हजार बिच्छुओ के डंक मारने पर तडपता रहता है।

जब तक पृथ्वीराज को क्रैद कर दिल्ली की ईंट से ईंट नही बजा दूंगा तब तक मुझे सब्र नही आयेगा। मुझे कसम है अपनी और तुम्हारी कि जब तक दुश्मन को जीत नही लूंगा, तब तक हर ज़ख्म हरा रहेगा।

कहते कहते शहाबुद्दीन अधीर हो गये। कुतुबुद्दीन ने उन्हें दिलासा देते हुए कहा— लडाई के हारने से कोई हारता नही मालिक! हारता तो वह है जो हिम्मत हार देता है। मकडी को नही देखते, जो बार बार गिर कर भी चढने की हिम्मत नही छोडती। आज हारे हैं तो कल जीतेंगे भी, उम्मीद हमारे साथ है। आप तसल्ली रखिये, हम ताकत इकट्ठी करके फिर हिन्दुस्तान पर हमला करेंगे।

शहाबुद्दीन— परवरदिगार हमे हौसला दे! लेकिन लडाई जीतने के लिये सिर्फ जिस्मानी ताकत की ही जरूरत नही है। इस वार हम हिन्दुस्तान की ही तलवार से हिन्दुस्तान का ही सर काटेंगे। तुमने देखा नही ऐबक! पृथ्वीराज हमारी बडी सेना से अकेले ही लड रहे थे। उनकी मदद को न तो बिहार के पाल आये, न बुन्देलखड के चन्देल, न उनकी मदद को जयचन्द आया, न परमाल। इसका मतलब साफ है कि ये सब पृथ्वीराज के दुश्मन हैं। हमे तरकीब से पृथ्वीराज के दुश्मनो को दोस्त बनाना चाहिये।

कुतुबुद्दीन— बजा फरमाते हैं मालिक! लेकिन अब तो आप चलिये।

शहाबुद्दीन— न मुझे भूख है न प्यास, न मुझे आराम की चाह। मेरा तो केवल एक ही मियार है और वह है दिल्ली सर करना, पृथ्वीराज से बदला लेना। मै उसे कुचलना चाहता हूं और हिन्दुस्तान को लूटना चाहता हूं।

कुतुबुद्दीन— खुदावन्द करीम आपकी उम्मीद बरकरार रखे! अब डेरे पर चलो मालिक! वहाँ कुछ दिन आराम कर गज़नी चलेंगे,

जहां ने तैयारी करके इस सोने की चिडिया हिन्दुस्तान को किसी दिन अपने कब्जे मे करके ही रहेगे। हमारे बहादुर जवानों ने कितने ही मैदान मारे हैं, अगर यह लडाई हार भी गये तो हिम्मत नही हार दी। गजनी से लाहौर तक हमारे पैरो के निशान गडे पडे हैं। हर शहर आपके जवानो से लुटा है।

गोरी— जैसे तुम्हारी मर्जी! चलो चलते है।

शहाबुद्दीन गोरी को साथ ले कुतुबुद्दीन उस शिविर मे आये जहाँ गोर सेना नाउम्मीदी की श्वास ले रही थी। मालिक को देखते ही उनमे ज़िन्दगी आ गई, जैसे मुर्दे जी उठे हो। सब खुदा को दुआये देते हुए अपने मालिक की खैर मनाने लगे।

अपने हमराहियों की गहरी हमदर्दी देख गोरी की गीली आँखे और भीग गई। रूमाल से अपनी आँखें पोछते हुए तुर्क सुलतान ने हिम्मत से कहा— "मै उन शहीदो को मुबारिकबाद देता हूँ जो हमारी जीत की बडी बडी लडाइयो मे कुर्बान हो गये। आपने गज़नी जीता, मुलतान जीता, पजाब को जीत कर फिर हार गये तो कोई बात नही। आज पृथ्वीराज चौहान ने हमारे जीते हुए भटिण्डा तक कब्जा किया है तो कल हम सिन्ध से कलकत्ते तक राज्य कर लेगे। हम कसम खाकर कहते हैं कि दिल्ली की ईट से ईट बजाये बिना हम फकीर की तरह जिन्दगी बितायेंगे। हिन्दुस्तान की मिट्टी सोना उगलती है। वहां जन्नत है जन्नत! वहां की हूरे तुम्हे निहाल कर देगी। वहां की लूट से तुम मालामाल हो जाओगे। वहाँ की हवा मे खुशबू उडती है। वहा के नगमो मे बेजोड खुशियां है। हम इस बेशकीमती मुल्क को अपने कब्जे मे करके इस्लाम को हमेशा हमेशा के लिये कायम कर देगे। वह दिन दूर नही जब हम जिहाद बोलकर अपने दुश्मन को पैरो तले रौद देगे। हिम्मत न हारो! जिसके पास उम्मीद

है वह लाख वार हार कर भी नही हारता। अब उस दिन की खुशी मे खुशी से जिओ जिस दिन दिल्ली की लूट से आपके घर सोने के बन जायेगे। अब आप सोइये जिसने कि शत्रु आपको सोया हुआ समझ कर लम्बी तान कर सो जाये और जब वह बेफिक्री की नीद मे सो जाये तब आप दिन के अँधेरे मे उन पर टूट पडना।"

इतना कहकर गोरी कुतुबुद्दीन के साथ मलमे सितारो से खचित और मोतियो से जडे हुए उस डेरे में आ गये जिसमे घुसते ही मनुष्य को जन्नत दिखाई देने लगती है। हरम मे हूरो ने अपनी बेहद खूबसूरती से गजनी के सुलतान की सारी थकान उतार दी। सोने के कटोरो मे खूबसूरत बनाव की कोमल उँगलियो से खिचा अगूर का रस सामने आते ही किसकी दुनिया नही मुस्कराती। किन्तु खूबसूरती और मद के इस मधुर आवास मे भी गोरी की आखे गीली ही थी। उनकी आँखो मे एक ही स्वप्न था कि किस तरह सोने की चिडिया हिन्दुस्तान को अपनी सल्तनत मे मिलाया जाये, किस तरह इस धर्म प्रधान भारत को इस्लाम धर्मावलम्बी बनाया जाये, उस यमराज के समान योद्धा पृथ्वीराज को कैसे कत्ल किया जाये। यही एक स्वप्न था जिसने गोरी की आँखो के सारे स्वप्न छीन लिये थे।

लाख चिन्ता मे भी मनुष्य कुछ देर के लिये सो ही जाता है। इतनी फिक्र और पीडा मे भी पलग पर पडते ही गोरी को नीद आ गई। चिन्ता मे सोते हुए भी क्या किसी को नीद आती है! सोते सोते गोरी बार बार चौकते थे और कहते थे "दिल्ली चलो, पृथ्वीराज चौहान को पकड लो, सोने की चिडिया हिन्दुस्तान को हाथ से न जाने दो!" सेविकाओ ने बहुत मन बहलाने की कोशिश की किन्तु गोरी का लक्ष्य एक ही था। आखिर एक सेविका ने सेनापति कुतुबुद्दीन को जगाकर कहा— "उठिये, मालिक बहुत बेचैन हैं।"

कुतुबुद्दीन हडवडाते हुए उठे और मालिक के पास पलग पर पैरो की ओर बैठ दिलासा भरे शब्दो मे बोले— इतनी बेचैनी से तो जो हमारे पास है हम वह भी खो देंगे मालिक! हिम्मत और बहादुरी से वक्त का इन्तजार कीजिये।"

शहाबुद्दीन— तो तुम ही बताओ मैं क्या करूँ, मुझे साँस साँस मे तकलीफ हो रही हैं।

कुतुबुद्दीन— तकलीफ मुझे भी है मालिक! पर तकलीफ मे औसान खोने से काम नही चलेगा। कल सवेरे हम गज़नी के लिये कूच करेंगे और आप जो खिराज पृथ्वीराज को देना कर आये हैं उससे सवाया खिराज भेज देंगे, तथा दूसरी ओर हमे हिन्दुस्तान के दूसरे राजाओ से दोस्ती बढानी है। बस अभी हमे यही करना है। बाकी फिर देखा जायेगा।

इस प्रकार राजनीति की गुत्थियाँ सुलझाते हुए रात का बहुत बडा हिस्सा बीत गया और फिर सवेरे शहाबुद्दीन गोरी ने अपनी बची हुई सेना के साथ गजनी की ओर प्रस्थान किया।

गज़नी पहुँचने पर गोरी सबसे पहले अपने भाई गयासुद्दीन से मिले। गयासुद्दीन ने अपने अज़ीज भाई शहाबुद्दीन को छाती से लगा लिया। लडाई की सारी दास्तान गोरी से सुनने के बाद गयासुद्दीन ने मुस्कराते हुए कहा— कौन कह सकता है कि आपकी हार हुई! आप तो हिन्दुस्तान से जीत कर आये है। अब पृथ्वीराज को हराना बहुत आसान हो गया है। यह जरूर है कि कुछ देर लगेगी। पर देर आये, दुरुस्त आये।

गोरी— तसल्ली के लिये कुछ भी कह लो लेकिन हार हार ही है। असलियत मे यह हार बडी नदामत की हार है। वह हिन्दुस्तान

जिसकी सुनहरी किरणें यहाँ तक छाई हुई हैं, मैं हार कर भी नहीं भूला। मेरी आँखों मे उसकी चाह है।

गयासुद्दीन— जिसके पास चाह है, राह उसे मिल ही जाती है। मुझे खुशी है कि मेरा भाई मुझ से कम बहादुर नहीं है। वह आँधियो मे घुसना जानता है, उसने तूफानो मे लड़ाइयाँ लड़ी हैं।

बाते हो ही रही थी कि कुतुबुद्दीन खुशी मे उछलते हुए आये और और एक ही श्वास मे बोले— "हार के साथ जीत की खुशी भी मनाइये मालिक! गुजरात की राजधानी अनहिलवाडा पर हमारे सेनानायक फैजुद्दीन ने रात को हमला करके उसे अपने कब्ज़े मे कर लिया है।"

गोरी— खूब, इस खुशी मे हम फैजुद्दीन को अनहिलवाडा मे अपनी ओर से राजा बनाते हैं। जीते हुए हिस्से को जहाँ हम हार चुके थे, हमारी हार को जीत मे बदलने वाले फैजुद्दीन को सौंप दिया जाये।

गयासुद्दीन— जो हम चाहते थे, वही हमारे भाई ने किया। जो अपने साथियो की कद्र करता है, यह दुनिया उसके नगमे गाती है।

जिन्दगी के रास्ते मे कभी काली आँधी आती है, तो कभी सूरज की सुनहरी धूप मे रास्ते जगमगाने लगते है। कभी पतझड़ होता है, तो कभी फूल भी खिलते हैं। मनुष्य के एक पैर मे हार बसी हुई है तो दूसरे मे जीत। हार उसे अपनी ओर खीचती है और जीत अपनी ओर। जो कमजोर होते हैं वे हार की ओर खिच कर मर जाते हैं और जो बहादुर होते हैं वे हार को धक्का देकर पीछे छोड़ जीत की ओर बढ़े चले जाते हैं। हार बहुत बार नीचे गिराने का प्रयत्न करती है, पर जो जीतना चाहते हैं, वे बार बार गिर कर भी उठते हैं और प्रयाण गीत गाते हुए चोटी को झुका देते हैं।

८

दिल्ली के दृढ दुर्ग मे लौह स्तम्भ के सामने एक छोटा सा द्वार है। इस द्वार से घुस कर जाने पर एक लम्बी बावडी है। बावडी के दूसरी ओर एक छोटा सा मन्त्रणा-गृह है जिसमे महामन्त्री विमान, मन्त्री कृष्णवन्त, सामन्त चामुण्डराय, राजकवि चन्द्रवरदाई तथा दो अन्य मन्त्री बडी गम्भीरता से विचार कर रहे है।

विमान ने सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते हुए कहा—[illegible] है कि आक्रमण करके यवनो से वे प्रदेश भी छीन लिये जावें जहाँ से वे हिन्दुस्तान को घूर घूर कर देख रहे है। [illegible] हमें मुस्लिम संस्कृति के पैर जड से उखाड देने चाहिये। पंजाब के बड़े भाग से हम उन्हे निकाल ही चुके है अच्छा हो कि यदि हम उन्हे [illegible] और सिन्ध से भी निकाल दें। मुझे इन लुटेरो पर बिल्कुल भी विश्वास नहीं है। गोरी चाहे सी सेना करके [illegible] हो [illegible] [illegible] हिन्दुस्तान पर फिर हमला [illegible] [illegible] के [illegible] सोमनाथ [illegible] हुए [illegible]

पडे हैं। गोरी के आक्रमणो का इतिहास तलावडी के मैदान तक लिखा पडा है। हमारे दिल्लीपति को चाहे शहाबुद्दीन पर विश्वास हो, किन्तु मैं उसे आस्तीन का साँप समझता हूँ। हमे चाहिये कि हिन्दुस्तान के हिन्दू राजाओ का एक ठोस सगठन बना कर सीमान्त नीति निश्चित करे। जब तक हम अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के सामने एक स्वर होकर नही बोलेंगे, तब तक हम सब टुकडे टुकडे होकर कट जायेंगे। हम घर के झगडो के लिये चाहे पाँच और सौ हो किन्तु विदेशियो के लिये एक सौ पाँच बने बिना हमारा कल्याण नही।"

कृणवन्त— लेकिन हमारे घर मे जो आपस के झगडे हैं उनको देखते हुए हिन्दू राजाओ का एक झण्डे के नीचे आना सम्भव नही दीखता।

चामुण्डराय— सम्भव नही दीखता तो तलवार के बल से भारतवर्ष के सारे राजाओ को जीत कर एक झण्डे के अधीन कर लेना चाहिये। पहले हम घर के दुश्मनो को जीत ले, तभी हम बाहर के दुश्मनो को जीत सकेंगे।

चन्द्रवरदाई— तलवार का उपाय टिकने वाला उपाय नही। यदि हमने तलवार से हिन्दुस्तान के अन्य राजाओ को जीतना चाहा तो हो सकता है पडोसी विदेशी शत्रु की सहायता ले बैठे। हमे पडोसियो का हृदय-परिवर्तन करना होगा। स्थायी मेल के बिना सगठन स्थायी नही रह सकता। जब तक इस देश के सारे राजा मिल कर एक नही होंगे तब तक यह देश युद्ध और दासता का दुःख भोगता रहेगा। एकता के लिये सबसे बडी काव्य-शक्ति है। यदि हमारे कवि अपनी वाणी से सगठन, प्रेम और वीरता के गीत गाये तो यह देश यवनो की साम्राज्य-वादी भावना को डस जायेगा। इस देश मे सब कुछ है पर एकता नहीं। आज का कवि अपने राजा को डोली के लिये ललकारता है,

न्य और शृंगार का चित्रण कर वीर राजाओ को कामिनियो के पीछे दौड़ाता है। हमे सीमान्त नीति से पहले अन्तर्प्रदेशीय जागृति करनी चाहिये। जागरण के गीत गा गा कर सोये हुए सिंहो को विदेशी शत्रु के विरुद्ध भडकाना चाहिये और अपनो के प्रति प्रेम जगाना चाहिये। जब तक भावना सोती रहेगी तब तक कामना नही जाग सकती।

किमास— आप तो कविता करने लगे कविराज! आप जो कहते है उसके लिये वर्षों चाहियें और हमे तत्काल ही सगठन करना है। इसके लिये उचित यह है कि एक पत्र भारतवर्ष के सभी राजाओ के पास भेजना चाहिये जिसमे लिखा जाये कि "आपके धर्म और देश पर आपत्ति आई हुई है, मन्दिर तोडे जा रहे हैं, धन लूटा जा रहा है और जन-शक्ति क्षीण होती जा रही है। धीरे धीरे वह दिन भी आ सकता है जब हमारे देश के हर भाग मे यवनो का झण्डा लहराता दिखाई दे। यवन शक्ति बढती जा रही है और भारतीय शक्ति आपस मे कट कट कर दिन पर दिन घटती जाती हैं। घर के दीपको से घर जल रहा है और हमारी आंखे फिर भी नही खुलती। अब वह समय आ गया है जब हमें आपस के सब भेदभाव भूल कर एक हो जाना चाहिये। भूल जाओ दोनो बातो को, मिटा डालो वह इतिहास जो हमारी मृत्यु के लिये दिप जगाता चला आ रहा है। भारत-भूमि के नीचे बारूद बिछी हुई है। उसे आपस की चिनगारी से अपने ही नाश के लिये धधकाना मातृ-भूमि पर भारी अत्याचार होगा। अपनी ओर दौडती हुई ज्वाला को शान्त करने के लिये एकता और प्रेम का जल चाहिये।

सगठित शक्ति की ज्योति से हमारा देश जगमगा उठेगा, भारत माता के चरणो पर ससार शरण के लिये खडा होगा, और फिर एक दिन वह होगा जब मनुष्य मनुष्य का रक्त पीना छोड देगा। शेर को जब स्यार शेर दिखाई देता है तो वह डर कर दूर ही खडा रहता है।

हमारी सगठित शक्ति देख कर हो सकता है कि हमे युद्ध भी न करना पडे और जय भी हाथ आ जाये ।

इसलिये एक होकर एक आवाज मे विधर्मियो और विदेशियो को चुनौती दो कि शान्ति से जियो और जीने दो अन्यथा भारत के अधीन हो जाओ । यदि मैत्री का उल्लघन किया तो तलवार से तलवार को फैसला करना पडेगा ।"

कृष्णवन्त— नीति तो यही कहती है कि समय पडे पर भाई तो क्या शत्रु को भी मित्र बना लेना चाहिये । अवसर पडे पर परम सम्पन्न रावण को भी गधे को बाप बनाना पडा था । हर जगह और हर समय तलवार ही ताननी उचित नही ।

चन्द्रबरदाई— बिन माँगे मोती मिले, माँगे मिले न भीख । याचक बन कर सहायता माँगने से कोई सहायता नही देगा । दुनिया माँगने से कुछ नही देती, दुनिया से अभीष्ट लेना पडता है— शक्ति से, नीति से । अच्छा तो यह है कि शक्ति और नीति से पहले सारे भारत मे एकछत्र राज्य स्थापित कर लिया जाये ।

किमास— आपकी बात मे सार तो बहुत है लेकिन सन्धि और प्रेम के लिये कन्नौजपति जयचन्द तथा बुन्देलखण्ड के चन्देल कभी तैयार नहीं होंगे । कालिजर के राजा परमाल के हृदय के घाव शायद पीढियो तक न भर सके । लेकिन आये दिन की लडाइयाँ लडते हुए दिल्ली की शक्ति भी तो अब इतनी दुर्बल हो गई है कि शक्ति से किसी भी स्वतन्त्र राज्य को जीतना सरल नही है, और यह भी हो सकता है कि दिल्ली के सामने अन्य भारतीय राजा कही एक होकर न टूट पडे । अत इस समय सद्भावनाओ से सन्धिपत्र प्रेषित करना ही उचित है । हाँ, यह हो सकता है कि सन्धि कुछ सामूहिक नियमो के आधार पर कर ली जाये, और वे नियम सभी भारतीय राजाओ के लिये हितकर हो ।

चन्द्रवरदाई— तो फिर प्रयत्न करके देख लो, परिणाम परमेश्वर पर छोड़ो ! जो कुछ होना होगा हो जायेगा, होनी क्या किसी के टाले टल सकती है ! राम को राजतिलक होते होते वनवास हो गया। राम को हरिण के पीछे और सीता को रावण की कैद मे जाना पड़ा। होनी बडी बलवान होती है महामन्त्री ! ईश्वर की ऐसी कृपा हो कि किसी प्रकार हमारे देश का बुरा समय टल जाये।

किमास— इतनी चिन्ता न करो कविराज ! अभी किमास जीवित है। यदि हिन्दू राजा हमारी विनय को ठुकरा अपने ध्वस के लिये तैयार हुए तो ऐसा जाल बिछाऊंगा कि गर्वीले राजाओ की गर्दन मेरी मुट्ठी मे होगी। महाराज की इच्छा के विरुद्ध मै छल से घमण्डी राजाओ को बन्दी बना लूंगा और कोई यह न समझ सकेगा कि द्रोही नरेश बन्दी है। आपत्ति काल तक हम उन्हे अतिथि के नाते कठोर पहरो मे बन्दी रखेगे। हम सिर उठाने वाले का सिर झुका कर कुचल देगे।

चामुण्डराय— किसकी शक्ति है जो चामुण्ड के होते हुए चौहान का बाल भी बांका करदे ! भवानी की कृपा से अभी इन भुजाओ मे बल है।

किमास— अपने सेनापति की भुजाओ के भरोसे तो हम खुले किवाड सोते है। किन्तु चामुण्डराय ! अब समय बदलता जा रहा है। वह समय गया जब केवल सच्चाई और शक्ति की लडाई थी। आज कोरी रजपूती नही चलती। आज की दुनिया मे बल से भी बडी बुद्धि की आवश्यकता है। आप यह कीजिये कि घोषणा करके घरो मे बैठे युवको को शस्त्र-शिक्षा दिलाओ। दिल्ली की सेना सात लाख थी और आज [illegible] एक लाख से भी कम रह गई है। इससे भी कुशल सेना बहुत कम है। आप और सब ओर की चिन्ता छोडिये और केवल [illegible] ! किसी भी घर से कोई भी नौजवान ऐसा

न रहे जो शस्त्र-विद्या से अनभिज्ञ हो और समय पड़ने पर शत्रु के सामने प्राणों की बाज़ी न लगा दे। यही नहीं, बूढ़े और स्त्रियाँ भी समर के लिये प्रस्तुत रहें, सती होने और खाट पर पड़ कर मरने से यह अच्छा है कि वे शत्रु की छाती मे भाले भोंक कर वीरगति को प्राप्त हों।

और कविराज! आप भी अपनी वाणी मे वह ज्वाला बरसा दो कि सोये हुए ज्वालामुखी जाग उठे, रग रग मे बिजली तड़प उठे। हमारा एक एक सिपाही लाख लाख होकर निकले।

चन्द्रबरदाई— वीणा को छोड़ कर जब तक कवि जागृति का शंख नही उठाता तब तक देश दलित ही रहता है। क्रान्ति की सबसे पहली आवाज़ कवि की वाणी से ही निकलती है, जागृति का सिंहनाद कवि के मुख से होता है। महामन्त्री का वही आदेश है जो कवि पहले ही करने को उत्सुक था। जब तक दिल्ली भयमुक्त नही होगी, तब तक सरस्वती का उपासक शान्त नही बैठेगा। वीणावादिनी को वह झनकार देनी ही होगी जिसे सुनकर सोये हुए हृदयो के तार तार झंकृत हो उठे। उठो महामन्त्री! तुम नीति से देश की रक्षा करो और मैं वाणी से तुम्हारी सहायता करता हूँ। ईश्वर की कृपा से अभी चामुण्डराय के हाथ मे तलवार है, महामन्त्री की बुद्धि सजग है और कवि की वाणी मे ओज है, फिर दिल्ली पर कैसे आँच आ सकती है! किसमे बल है कि दिल्लीपति की ओर आँखे उठाये! जय भवानी, जय वाणी, जय शिव!

मंत्रणा करके महामन्त्री अपने स्थान पर आये और अपने विश्वस्त कर्मचारी शिवराम को पत्र देते हुए बोले— "यह पत्र लेकर पहले कन्नौज जाना, वहाँ के गहड़वाड़ राजा जयचन्द से विनयपूर्वक हमारा अभिवादन करते हुए कहना कि दिल्ली और कन्नौज का पुराना नाता चला आ रहा है, आप हमारे निकट के आदरणीय सम्बन्धी हैं। दिल्ली

आपके ही पुरखाओ की सम्पत्ति है। सारे भारतवर्ष पर इस समय विदेशियो के खूनी पंजे चमक रहे हैं। ऐसे आपत्ति काल मे यह आवश्यक है कि आप घर के सारे झगडो को भूल कर हिन्दू राजाओ का एक ठोस संगठन बनाने मे सहायक हो तथा इस देश के गौरव और धर्म की रक्षा करे। इन विचारो के साथ तुम मौखिक और पत्र द्वारा दिल्ली और कन्नौज की शत्रुता मिटाने का प्रयत्न करना। साथ ही हर प्रकार मे जयचन्द और पृथ्वीराज का वैर मिटा उनको अपने निकट लाने का यत्न करना।

कन्नौज के बाद कालिंजर जाना। वहाँ के चन्देल राजा परमाल ने भी इसी प्रकार विनती कर वैर का विष उतारना। इसी प्रकार विहार जाना, वहाँ सेन वंश के राजपूत राजा पाल राज्य करते हैं। पाल बड़े वीर और उदार राजा हैं। वे संगठन मे शामिल होने के लिये प्रसन्नता से राजी हो जायेंगे।

जाओ शिवराम! बडी चतुरता से सफल होकर इस देश के लिये वह काम कर आओ जो आज की काली दीवारो पर ज्योति के अक्षरो सा चमकता रहे उसी प्रकार जिस प्रकार काली रात मे चन्द्रमा की चाँदनी चमकती रहती है। तुम उधर जाओ, और इधर मैं गोविन्दराम को भेज राव समरसिंह तथा अन्य सम्बन्धी और सहायक राजाओ को सहायता के लिये लिखता हूँ।"

पर ले प्रणाम कर शिवराम ने कन्नौज की राह पकड़ी। तेज अश्व पर सवार शिवराम चले जा रहे थे कि लगभग पचास कोस के बाद [illegible] पड़ाव पर पहुँचे तो उसी पड़ाव पर [illegible] माहिलराज भी माथा ठोकते हुए आ धमके। शिवराम को ध्यान से देखते हुए माहिलराज ने मूछ मरोड़ते हुए कहा— [illegible] [illegible] जा रहे हो?"

शिवराम— हाँ ज्योतिषी जी ! तो फिर यह भी बता दीजिये कि कहाँ जा रहा हूँ ।

माहिल— हमने आधी विद्या पढी है भैया ! पूरी पढते तो यह भी बता देते । वेशभूषा और चाल ढाल मे यह तो पहचान लिया कि श्रीमान् जी दिल्ली से चले आ रहे हैं, अब कुछ बोले तो यह भी बता दे कि कहाँ जा रहे हैं । कहिये दिल्ली के क्या हाल चाल हैं ? महाराज पृथ्वीराज का बोलबाला कैसा है ?

शिवराम— दिल्ली के बडे हितैषी जान पडते हैं आप ! कहिये आपका शुभ परिचय ?

माहिल— हमारा परिचय ही क्या है भैया ! भजते जोगी रमते राम हैं, देश के कल्याण के लिये जहाँ तहाँ घूमते रहते हैं ।

शिवराम— तो आप तो कोई देशभक्त जान पडते हैं । कहिये कहाँ मे आगमन है और कहाँ को गमन होगा ?

माहिल— कालिंजर से आ रहे हैं और कन्नौज जा रहे हैं । कालिजर के राजा परमाल हमारे बहनोई हैं, और कन्नौजपति जयचन्द हमारे गहरे मित्र हैं ।

शिवराम— श्रीमान् जी का शुभ नाम ?

माहिल— दास को माहिलराज कहते हैं ।

सुनते ही शिवराम मन ही मन मे चौक पडे और आप ही आप बोले— "ये है वे कलियुगी नारद, जिनकी लगाई हुई आग मे घर के घर भस्म हो गये । इनकी ही चिनगारी मे महोवे और दिल्ली मे घोर युद्ध हुआ तथा ऊदल और मलखान जैसे कितने ही वीर सामन्त इस भूमि को नपूती करके चले गये । यदि इससे सारा रहस्य खुल गया तो कही ऐसा न हो कि बनता हुआ काम बिगड जाये ।"

शिवराम को अधिक सोचते देख माहिलराज ने मुस्कराते हुए कहा— क्यो, क्या नाम सुनते ही जाडा चढ गया जो सोच मे पड गये।

शिवराम— नही माहिलराज। मै तो यह सोच रहा था कि तू कितने शुभ मुहूर्त मे घर से चला था जो ऐसे महापुरुष के दर्शन हो गये। पर आप इतने दिनो से कहाँ थे ? दिल्ली को तो बहुत दिनो मे आपके दर्शन नही हुए।

माहिल— दिल्ली के दर्शन करने वाले बडे भाग्यशाली होते हैं। हम तो भाग्यहीन हैं भैया। एक बार ही दर्शन करके क्या कुछ कम अपमान हुआ है जो अब दुबारा वहाँ जाने का नाम लेते।

शिवराम— सुख मे चाहे अपनो के साथ कितनी भी शत्रुता करली जाये किन्तु दुःख मे अपनो की अनीति भी भूल जानी चाहिये माहिलराज। जब से आप आये हैं, तब से दिल्ली पर आये दिन आपत्ति आती रहती है हर दिन युद्ध छिडा रहता है। महोवे से लडाई निबटी ही नही थी कि कन्नौज से शत्रुता हो गई। अभी घर की लडाई चल ही रही थी कि विधर्मी यवनराज शहाबुद्दीन गोरी ने दिल्ली पर चढाई कर दी। वह तो दिल्लीपति की वीरता और अजेय सेना को धन्य है जिसके सामने सबको हार खानी पडी। फिर भी बार बार की लडाइयो से शक्ति इतनी क्षीण हो गई है कि किसी भी समय विधर्मी हम सबको कुचल सकते हैं।

माहिलराज ने अट्टहास करते हुए कहा— जब मेरे घर मे आग [illegible] है तो मै चाहता हूँ [illegible] हो जाये। मेरी भी [illegible] पर [illegible] भी न [illegible] चाहता हूँ [illegible] राज्य मिट जाये [illegible]

कामिनी का नृत्य होता है और माहिल प्यासी आँखों से देखता हुआ जलता है।

शिवराम— मनुष्य का स्वभाव है कि वह अपनों की उन्नति नही देख सकता और दूसरो का दास होना भी स्वीकार करता है। क्या यह अच्छा होगा कि हमारी वहिन, वेटियो और मन्दिरो पर विधर्मियो के वलात्कार हो! यदि यवन इस देश में आ गये तो एक एक करके सारे हिन्दू राजाओ को नष्ट होना पडेगा और फिर शताब्दियो तक यह देश दासता का दु.ख भोगता दिखाई देगा। मन्दिरो के घटे घडियालो के स्थान पर मुल्लाओ की वाँग सुनाई देगी। इन बेजोड दुर्गो की दीवारो से धार्मिक श्लोक मिटा कर विधर्मी अपनी आयतें लिखेगे। गऊओ और ब्राह्मणो पर वे अत्याचार होंगे जिनको इतिहासकार लिख तक न सकेंगे। कवियो की वाणी मूक हो जायेगी।

माहिल— तभी तो माहिल के पैर चूमे जायेंगे। कोई नरक मे जाओ या स्वर्ग मे, माहिल को क्या! माहिल तो यही चाहता है कि दिल्ली का विध्वस हो, पृथ्वीराज को अपने किये पर माहिल को याद कर कर के मरना पडे।

शिवराम— इस देश मे वडा अभिशाप यही है कि अपने ही अपनों का वैभव नही देख सकते। खैर, छोडो राजा! ये वाते, अच्छा अब हम चले।

माहिल— इतना तो बता दो जा कहाँ रहे हो?

शिवराम— सुसराल जा रहा हूँ। पर सोचता हूँ कव कव इधर को आना होता है, लगे हाथो कन्नौज भी देखता चलूं। इस बहाने महाराज जयचन्द के दर्शन भी हो जायेंगे और कन्नौज का दुर्ग भी देख लूंगा। सुना है कन्नौज मे सोने में सुगन्ध होती है।

माहिल— कन्नौज की क्या बात है भैया! वहाँ तो इत्र की नदियां बहती हैं, हवा में सुगन्ध उडती है। लोग तो व्यर्थ ही दिल्ली की प्रशंसा करते हैं, कन्नौज की श्री तो आज विष्णुलोक से भी सुन्दर है।

सुनकर शिवराम से सहन न हुआ। दिल्ली का गौरव उसकी वाणी से हुंकार ही उठा। उसने ललकारते हुए व्यंग में कहा— क्यों नहीं, आखिर तो हमारे महाराज की सुसराल ही है।

सुनते ही माहिल चिढ गये। वे कुछ आवेश में बोले— किसी की लड़की को बलात् उठाकर ले जाने वाले लुटेरे होते हैं, दामाद नहीं। रावण की कैद में रहने से सीता रावण की नहीं हो गई थी। वह दिन दूर नहीं, जब दिल्ली पर कन्नौजपति जयचन्द का राज्य होगा और पृथ्वीराज को शूली पर लटकाया जायेगा।

शिवराम— क्या नाराज हो गये दयालु राजा! हम तो हँसी की बात कर रहे थे, आप तो व्यर्थ ही बुरा मान बैठे। कन्नौजपति और दिल्लीपति तो दोनों आपस में सगे सम्बन्धी हैं। भगवान इन दोनों का सम्बन्ध सदा बनाये रखे और दोनों खूब फलें फूलें। चलिये अब अपने साथ कन्नौज के दर्शन हमें भी करा दीजिये।

माहिल— आप जाइये मैं तो तनिक अवध होता हुआ आऊँगा।

यह कह कर माहिलराज अश्व पर सवार हुए और अपनी राह पकड़ी तथा इधर शिवराम भी यह कहते हुए घोड़े की पीठ पर सवार हुए कि "जान बची और लाखों पाये। अच्छा हुआ इस धुन में यहीं पीछा छूट गया, नहीं तो सारे भेद खुले हो जाते। अब शीघ्र चलूं और महाराज [illegible] [illegible] से [illegible] की [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible]।'

सोचते हुए शिवराम कन्नौज आ पहुँचे। कन्नौज के सौन्दर्य और सौरभ से शिवराम की सारी थकान आनन्द मे बदल गई। कन्नौजपति के पास जैसे ही सूचना पहुँची कि दिल्ली मे दूत आया है तो उन्होंने आज्ञा दी कि 'पूरे सम्मान से आगन्तुक का स्वागत किया जाये। दो दिन तक उनको कन्नौज के वैभव मे भ्रमण कराया जाये और फिर दो दिन बाद हमसे उनकी भेंट हो।'

दो दिन तक अतिथि कन्नौज के रग बिरगे दर्शनीय स्थानो मे भ्रमण करते रहे और इधर जयचन्द के पास माहिलराज चुपचाप आ टपके। जयचन्द से दिल्ली के दूत की बात सुन कर वे माथे मे तीन बल डालते हुए बोले— आपके दामाद के यहाँ से दूत आया है, खूब खातिर कीजिये।

जयचन्द— हम गहडवाड घर आये का तिरस्कार नही करते माहिलराज ! नही तो दूत को दूर ही मे नमस्कार कर लेते।

माहिल— बिना मतलब के कौन बात करता है ! आज पृथ्वीराज की खोटी दशा आई हुई है तो उसे कन्नौज की याद आ गई। मैं उस दूत से पहले ही मिल चुका हूँ। मैंने उसके माथे से सारी भाषा पढ ली। आप लिख लीजिये, दूत इसलिये आया है कि पृथ्वीराज आपकी सहायता चाहता है। दिल्ली मे अब दम नही रहा। लोहे की तलवारे टूट चुकी, वहाँ अब केवल काठ की तलवारे हैं। यह समय हाथ से न खोना कन्नौजपति ! दिल्ली तुम्हारी है। दूत को कोरा उत्तर नही दिया तो माहिलराज आत्महत्या कर लेगा। माहिल की केवल एक ही इच्छा है, और वह उसी के लिये जीवित है। वह चाहता है कि कन्नौजपति जयचन्द सारे भारतवर्ष के सम्राट् हो तथा विदेश के सभी राजा उनके चरणों में नमस्कार करते रहे।

जयचन्द— तुम हमारे बहुत हितैषी हो माहिलराज! लेकिन जो तुम चाहते हो, वह जब तक विधाता न चाहे तब तक कैसे हो सकता है! पृथ्वीराज चाहे कितना भी दुर्बल हो जाये पर अकेला ही हजार है। न जाने उसे कौन सी शक्ति का वरदान है कि युद्ध मे वह आज तक पराजित नही हुआ! कितने ही हाथियो का उसमे बल है! पता नही कौन सी भवानी उसकी तलवार मे विराजती है! युद्ध कला मे इतना प्रवीण भारतवर्ष मे आज दूसरा नही है। ऐसे महाबली को पराजित करना क्या बच्चो का खेल है?

माहिलराज— हाँ महाराज! समय आपके अनुकूल बोल रहा है। शनिदेव अनुकूल होकर आपका शुभ करने को उत्सुक है। सुनहरी भविष्य आपकी ओर दौडता आ रहा है। इस समय चूक मत करना। जीवन के सारे पाप पुण्यो मे बदलना चाहते हैं। कुआँ स्वय प्यासे के पास आया हुआ है। वही होगा जो जयचन्द चाहेंगे। अब आप दूत की सुन लीजिये क्या कहना है, बाकी फिर सोचेंगे। लेकिन सावधान, उत्तर देने से पहले सेवक से परामर्श अवश्य कर लेना।

जयचन्द— दिल्ली पृथ्वीराज के ही नाना की नही है, मेरे भी नाना की है। जब से मेरे नाना दिल्लीपति अनगपाल ने पृथ्वीराज को गोद ले दिल्ली का राज्य सौंपा है, तभी से मेरे हृदय मे गहरा घाव धधक रहा है। यही घाव मेरी माँ सुन्दरी के हृदय मे भी धधकता रहा और यही दाग लेकर वह दुनिया से चली गई। यदि किसी तरह से दिल्ली का राज्य लेकर अपनी और अपनी माँ की आत्मा को शान्ति दे सका तो जीवन सफल समझूँगा, नही तो सारे घाव [illegible] [illegible]।

माहिलराज— तो [illegible] आपकी [illegible] मे [illegible] रहे है [illegible] [illegible] है। [illegible]

श्रौर श्राप दिल्ली के सिहासन पर विराजमान होगे। पृथ्वीराज ने जैस
श्रापके साथ किया हे वैसा भरेगा। दूत की सुन लीजिये वह क्य
कहता है।

निजी गृह मे माहिल से वातचीन करने के वाद जयचन्द श्रपने राज्
सिहासन पर श्रा विराजे श्रौर दिल्ली के दूत को उपस्थित हो
की श्राज्ञा दी।

दिल्ली दूत शिवराम ने श्राते ही श्रादर से कन्नौजपति राजा जयचन्द
को राजसी श्रभिवादन किया श्रौर फिर कन्नौज तथा कन्नौजपति की
प्रशसा वखानते हुए वोला— "दिल्ली के महामन्त्री किमास ने कन्नौजपति
को सादर श्रभिवादन सहित यह पत्र प्रेपित किया है।"

सकेत पाते ही दूत के हाथ से श्रगरक्षक ने पत्र लेकर जयचन्द को
दिया। पत्र लेकर पढते हुए कन्नौज नरेश वार वार मुस्कराये। पूरा पत्र
पढने के वाद श्रट्टहास करते हुए वोले— "पत्र की भापा तो वडे महात्मा
की जान पडती है। क्या श्रव दिल्ली वाले साधु हो गये हैं? कव से
दिल्ली वालो के हृदय मे सारे देश का प्रेम जाग उठा? कहाँ गया
उनका वह घमण्ड जो नाक पर मक्खी नही बैठने देते थे?"

शिवराम— "घमण्ड करने वाले का घमण्ड किसी न किसी दिन
स्वयम् ही चूर हो जाता है। जो वीत गई उसे भूल जाइये! शरणागत
को गहडवाडो ने सदा श्रपनाया है। इस पत्र के उत्तर मे श्राप 'हाँ' कर
दीजिये, भारत सदा सदा के लिये मस्तक उठा लेगा।"

जयचन्द— "तुम चतुर जान पडते हो दूत! लेकिन पृथ्वीराज से
कह देना कि दिल्ली श्रौर कन्नौज की सन्धि यदि कही हो सकती है
तो वह केवल युद्धभूमि मे। चौहान का श्रौर हमारा फैसला तलवार से
होगा। वह उस दिन की प्रतीक्षा करे जव जयचन्द दिल्ली पर चढाई
करेगा। हमारा यह निर्णय श्रन्तिम श्रौर निश्चित है। हमे तुमसे श्रौर

कुछ बातें नहीं करनी हैं राजदूत! अब तुम दिल्ली वापिस जाकर अपने महाराज और महामन्त्री को हमारा फैसला सुना दो।"

आवेश में कहते हुए जयचन्द ने एक सेनानायक की ओर देखते हुए आज्ञा दी— 'राजदूत को सकुशल उनकी सीमा तक पहुँचा दो।'

सेनानायक के साथ शिवराम निराश होकर चले गये और जयचन्द पुन अपने निजी कक्ष में माहिलराज के पास आ विराजे। महाराज को गर्व से गर्दन उठाये और क्रोध से आँखें चढाये देख माहिलराज ने अपनी वाणी में मीठा विष मिलाते हुए कहा— जान पडता है दिल्ली-दूत ने कुछ मीठी और कडवी एक ही साथ कह दी है जो हमारे गर्वीले राजा अभी तक अशान्त हैं।

जयचन्द— अशान्ति भी है और शान्ति भी। हँसी भी आ रही है और दुःख भी होता है। जब पृथ्वीराज का पतन देखता हूँ तो शान्ति होती है किन्तु जब दिल्ली के विनाश के बारे में सोचता हूँ तो रोम रोम क्रोध से काँप दिल्ली की सहायता के लिये दौडना चाहता है। मनुष्य भी कैसा विचित्र होता है माहिलराज! एक ही क्षण में हँसता भी है और रोता भी है। वही पृथ्वीराज जिसके दुर्ग की चोटी आकाश को चुनौती देती थी आज झुक कर मुझसे सहायता की भीख माँग रहा है, और मैं जिससे बचपन में कहा करता था कि ईश्वर करे तुम दिग्विजयी राजा बनो, आज उसका विनाश देख कर प्रसन्न हो रहा हूँ। समय के साथ मनुष्य कितना बदल जाता है!

माहिलराज— क्या महाराज जयचन्द को वात्सल्य ने आ घेरा! यहाँ तो अर्जुन को हुआ था जो आज आपको हो रहा है। भूल गये वह दिन जब भरी सभा ने तुम्हारी नाक काट कर पृथ्वीराज तुम्हारी बेटी [illegible] को उठा कर ले गया। भूल गये वह दिन जब [illegible] ने अपनी [illegible]

अपने बेटे को नाना की गोद दिला उसे दिल्ली और अजमेर का राजा बनवा दिया था। तुम आज तक सीधे बने रहे पर सर्प ने काटना नहीं छोड़ा। आज वह दबा हुआ है तो महाराज जयचन्द को फुसलाना चाहता है, कल वह शक्ति-सम्पन्न था तो जयचन्द की बेटी को उठा कर ले गया। उस अधर्मी के लिये आप हित की सोचिये, मैं तो उसके विनाश के लिये कटिबद्ध हूँ। जब तक आप पर हुए अत्याचारों के प्रतिशोध में दिल्ली का विध्वंस नहीं हो जायेगा तब तक माहिल को शान्ति नहीं मिलेगी। यदि आपको पृथ्वीराज के ध्वंस में दुःख है तो माहिल जा रहा है, कोई दूसरा घर टटोलेगा।

अग्नि में घी पड़ते ही वह धधक उठती है। माहिल ने कुछ ऐसे ढंग से कभी क्रोध और कभी दुःख दिखा कर कहा कि जयचन्द की ज्वाला सुलग उठी। बहकती हुई आँधी की तरह बहकते हुए जयचन्द ने कहा— मैं तो तुम्हारा मन ले रहा था माहिलराज! मैं जीवित ही इसलिये हूँ कि पृथ्वीराज का नाश देखूँ। न जाने अन्तर में कब से चिनगारियाँ दबाये बैठा हूँ कि अब दावानल भड़कना चाहता है। जी चाहता है कि चौहान को जीवित जला डालूँ।

माहिलराज— और यह समय भी आपके अनुकूल है। हर ओर से पृथ्वीराज के शत्रु आपका साथ देने को लालायित हैं। कालिंजर दिल्ली का शत्रु है, उज्जैन और अयोध्या भी दिल्ली से नाराज बैठे हैं। और तो और पृथ्वीराज के सगे सम्बन्धी राव समरसिंह तक पृथ्वीराज से रुष्ट रहते हैं। आज देश में कौन ऐसा है जो पृथ्वीराज का साथ देना चाहता है! ऐसा अवसर हाथ से नहीं छोड़ना चाहिये।

जयचन्द— तो फिर क्या करूँ, क्या दिल्ली पर आक्रमण कर दूँ? चौहान की यह दशा होने हुए भी क्या देश के किसी राजा में इतना

साहस है जो दिल्ली पर चढाई कर दे ! हाँ, एक उपाय अवश्य सूझता है।

माहिल— वह क्या महाराज !

जयचन्द— वह यह कि विदेशियो की सहायता ली जाये और पृथ्वीराज को कुचल डाले।

माहिल— इसका क्या अर्थ महाराज !

जयचन्द— इसका अर्थ यह कि गजनी सुलतान शहाबुद्दीन गोरी पृथ्वीराज का जानी दुश्मन है। पृथ्वीराज से वह ऐसे ही दवा हुआ है जैसे कोई साँप दवा कर बन्द कर दिया जाता है। चौहान गोरी से उसकी हार के बदले मे भारी कर ले रहा है। गोरी दवा है, इसलिये फण दवाये बैठा है। यदि उसे छूटने का अवसर मिला तो वह तुरन्त डस मारेगा। हम अगर शहाबुद्दीन गोरी की सहायता ले ले तो ?

सुनकर माहिल कुछ सोच मे पड गये और फिर विचारते हुए बोले— यह प्रश्न बडा टेढा है महाराज ! देखती आँखो तो यह बात सुनहरी लगती है, पर कही ऐसा न हो कि सुनहरी घडे मे विष निकले। घर की लडाई मे किसी विधर्मी और विदेशी की सहायता कभी हितकर नही होती। पर परिस्थिति देखते हुए प्रतिशोध का कोई दूसरा उपाय भी नही जँचता। यदि किसी विशेष सन्धि पर गोरी की सहायता लेकर झटका दिया जावे तो साप भी मर जावेगा और लाठी भी नही टूटेगी।

जयचन्द — क्या कालिंजर के राजा परमाल भी इस सन्धि के लिये सहमत हो जावेंगे ?

माहिल — नहीं, कभी नहीं। परमाल पृथ्वीराज से रुष्ट है पर विदेशियो से [illegible] नहीं। वे [illegible] [illegible] कर सकते है किन्तु [illegible] [illegible] विदेशी के हाथ मे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] के [illegible]

नही चाहेगे। वे अपने बेटे के वध के बदले अपनी मातृभूमि का रक्तिम शृगार नही देख सकते।

जयचन्द— शत्रु को जिस तरह भी मिटाया जा सके मिटा देना चाहिये। राज्य विस्तार मे धर्म और अधर्म कुछ नही। शत्रु को सामने देखकर जो धर्म चर्चा करता है, वह कायर है। हमे चाहिये कि चुपचाप अपने विश्वस्त पात्र के हाथो गजनी सुलतान शहाबुद्दीन गोरी के पास इस आशय का एक पत्र भेजे कि हमे आपकी हार मे भारी दु ख है, हम चाहते हैं कि ऐसे बहादुर सुलतान से हमेशा के लिये हमारी दोस्ती जुड़ जाये। अपने बहादुर दोस्त की हम हर सहायता के लिये तैयार हैं। यदि आप तनिक सी हिम्मत करे तो पृथ्वीराज को कुचला जा सकता है और हार का वह घाव भर सकता है जो आपके हृदय मे रह रह कर चमक रहा होगा। अपने हारे हुए प्रदेश आप फिर से जीत सकते हैं। अपनी खोई हुई इज्जत आपको फिर से मिल सकती है। धीरे-धीरे आप दुनिया को रोशनी देने वाले बन सकते हैं। लेकिन इसके लिये आपको एक शर्त माननी होगी। वह यह कि जीतने के बाद यमुना से इधर उधर जयचन्द का राज्य होगा और यमुना से पार उधर उधर हमारे दोस्त शहाबुद्दीन गोरी का राज्य रहेगा।

आप तनिक हिम्मत से काम लेगे तो आपका राज्य जगमगा उठेगा, हिन्दुस्तान के अमूल्य रत्नो से आपके मुल्क मे रोशनी हो जायेगी और पृथ्वीराज का सर आपके किले की चोटी पर लटका होगा।

माहिल— बात तो बहुत जोर की है, लेकिन यह सब इतनी चुपचाप होनी चाहिये कि किसी को कानो कान तक भी पता न चले।

जयचन्द— ऐसी चुपचाप लो कि लेता जाने न देना। किसी ऐसे गुप्तचर को भेजूंगा जो अँधेरे की तरह छिपता हुआ चला जायेगा।

माहिल— बाहर से तो यह क्रिया बहुत अच्छी लग रही है, पर अन्दर से न जाने मन क्यो सकल्प विकल्प कर रहा है।

जयचन्द— दुनिया मे हर बात के दो रूप होते हैं। हर वस्तु का काला पक्ष भी है और उज्ज्वल पक्ष भी। किन्तु आँखो देखते परिणाम सुनहरी दीख रहा है। कही दांव सा बैठ गया तो दिल्ली और कन्नौज पर ही नही सारे भारतवर्ष मे जयचन्द और माहिल की मनचाही चलेगी।

माहिल— विदेशी की सहायता वन की आग की तरह होती है महाराज! कह नही सकते उसकी लपटे किधर को दौड़ जाये। हम आग के शोलो से खेलने चल रहे हैं, तूफान को साथी बनाकर अपना दीपक जलाने की इच्छा है। भगवान ही जाने क्या हो!

जयचन्द— अच्छा ही होगा। चोटी से बात करने वाला धरती की धूलि मे मिला होगा। पृथ्वीराज का सर होगा और जयचन्द का पैर, सारी दिशाओ मे जयचन्द की जय गूंज रही होगी।

प्रतिध्वनि मे गुम्बज की आवाज की तरह अट्टहास करती हुई ध्वनि गूंजी— 'रक्त बरसेगा, रुण्ड मुण्डो पर भूत प्रेत नाचेगे, चील और कौओ की दिवाली मनेगी और भारत भूमि मातम मना रही होगी।'

९

"जिन विनाश की फुलझड़ियो को सुनहरी ज्योति समझ कर मनुष्य हँसता है, वे ही कभी कभी उसे जला भी डालती हैं। जिन दीपो को हम घर के उजाले के लिये जलाते हैं, वे चिता के शोले भी होते हैं। तूफान जब आता है तो दीपक की लौ दावानल बन जाती है।"

'इसका क्या अर्थ है गुरुदेव!' रामदेव के शिष्य गोविन्द ने राह चलते हुए कहा।

रामदेव—इसका अर्थ यह कि भारत मे घर के दीपो मे ज्वाला बरसने वाली है। घर फूंकने के लिये फुलझड़ियाँ जलाई जा रही हैं। सोच रहा हूँ कि अब यहाँ से कहाँ जाऊँ! हर स्थान पर विनाश हुंकार रहा है। भाई भाई का रक्त पीने के लिये पागल है। यह कन्नौज जिसकी श्री के सामने इन्द्रपुरी की सुगन्ध भी शर्माती है आज वैर का विष उगलने को उतावला है।

गोविन्दराम— दुनिया मे कोलाहल के अतिरिक्त और है ही क्या गुरुदेव! हर ओर पीड़ा, हर ओर द्वेष, हर ओर घृणा! लेकिन हम साधुओ को इससे क्या! चले इस चमक दमक से दूर कही वन मे धूनी रमायेगे।

रामदेव— जब दुनिया विनाश की ओर जा रही हो तब किसी साधु का वन मे जाकर धूनी रमाना तप को लजाना है। महात्मा का तप वन का फूल नहीं, दुनिया का सूरज है।

गोविन्दराम — सत्य वचन है गुरुदेव! लेकिन जब सूरज पर काली घटायें घिर जायें या राहु और केतु छा जाये तो बिचारा दिया प्रकाश कैसे दे सकता है! आज आपके उपदेश को कौन सुनता है!

रामदेव— इसलिये उपदेश देना ही बन्द कर दिया। बहुतो के आगे रो रो कर अपने नयन कब तक खोवे? ऐसे हाहाकार के समय क्या कोई भला साधु की बात सुन सकता है! जयचन्द ज्वाला सुलगाये बैठा है, पृथ्वीराज ने बहुत कुछ स्वाह कर डाला। अब तो भारत-भूमि मे अधर्म की जड़ जमना चाहती है। इस देश, साहित्य और संस्कृति पर प्रहार करने के लिये यवन बारूद लिये चले आ रहे है।

गोविन्दराम— तो फिर हमे क्या करना है और कहाँ चलना है?

रामदेव— धर्म की रक्षा के लिये इस दुनिया मे हर [illegible] र [illegible] जगायेगे। सब कुछ मिटने पर भी यदि किसी [illegible] जाता है तो [illegible] आने पर वह फिर [illegible]। [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

जगाते हैं। इनको युद्ध की आवाज़ लगाने दो और हम राम-कृष्ण के गीत गाते हैं।

गोविन्दराम— तो कन्नौज से अब कहाँ के लिये प्रस्थान है गुरुदेव!

रामदेव— दक्षिण चलेंगे। वहाँ अभी कुछ शान्ति है, साधु-सन्तों की बात वहाँ अभी सुनी जाती है। चलें वहीं चल कर आश्रम बनायेंगे।

उपदेश देते हुए रामदेव चले जा रहे थे कि सामने एक बालक वन की ओर भागता दिखाई दिया।

रामदेव ने उसे आवाज देकर पास बुलाया तो देखा वह रोता हुआ जा रहा था।

बालक को पुचकारते हुए साधु ने कहा— कहाँ जा रहे हो बालक! और रो क्यों रहे हो?

बालक— भगवान की खोज में जा रहा हूँ और रो इसलिये रहा हूँ कि वे मिलते नहीं।

साधु— रोओ मत बालक! भगवान भी मिल जायेंगे, पर शान्ति से खोजने पर। जान पड़ता है तुम्हारा घर पर कुछ झगड़ा हो गया है।

बालक— कोई अनाथ किसी से क्या झगड़ा करेगा बाबाजी! माँ बाप तो शैशव में ही छोड़ कर चले गये थे। चाची ने पाला था, आठ दिन हुए वे भी छोड़ गईं। अब भूखा भटकता हुआ भगवान को खोजने जा रहा हूँ।

रामदेव की आँखें गीली हो गईं। उन्होंने झोली में से केले निकाल कर बालक को देते हुए कहा— लो, ये खा लो और निराश न होओ! हम तुम्हारे पिता हैं, तुम्हें भगवान से मिला देंगे।

सुनते ही बालक रामदेव के पैरों से चिपट गया और आँसुओं से पद-प्रक्षालित करता हुआ बोला—क्या सच आप मुझे भगवान से मिला देंगे ?

रामदेव— सच और बिल्कुल सच! चलो, राम-कृष्ण का जाप करते हुए हमारे साथ चलो! आज से तुम्हारा नाम हमने अपने परम प्रिय दिवगत शिष्य नामदेव के नाम पर नामदेव रख दिया। अब से यह परम्परा रहेगी कि जो शिष्य हमारा सबसे अधिक प्रिय होगा वही इसी नाम से हमारे आसन का उत्तराधिकारी होगा और नामदेव नाम की यह परम्परा हमारे आसन की प्रतिष्ठा के रूप में चलती रहेगी। तुम अपने नाम के धनी बन कर राम और कृष्ण की वाणी से संसार को मुखरित कर दो!

राम और कृष्ण के गीत गाती हुई यह भक्त-मंडली चली जा रही थी कि सामने से दिल्ली-दूत शिवराम ने इनको देखा। साधु के मस्तक पर तेज देख शिवराम ने दूर ही से साष्टांग प्रणाम किया और पास आकर कहा— 'मैं निराश हो गया हूँ, मुझे चारों ओर अँधेरा दिखाई दे रहा है, मुझे पथ दिखाइये महात्मा!'

रामदेव— मनुष्य हार कर भी नहीं हारता, लेकिन जो निराश हो जाता है वह जीत कर भी हार बैठता है। तुम्हें तुम्हारी यात्रा में असफलता मिली है, इसलिये तुमने आशा छोड़ दी है राही! राम और कृष्ण पर विश्वास रखो, तुम्हें अँधेरे में उजाला मिलेगा। होनी अनन्त चक्र चला रही है मनुष्य उसके सामने नत मस्तक खड़ा है। हाय रे दुर्भाग्य! प्राणी अपने पैरों की पहचान भी खो बैठा। राम राम राम! कृष्ण, कृष्ण कृष्ण!

शिवराम— ये पहेलियाँ मेरी समझ में नहीं आतीं महात्मा! [illegible]

और कृष्ण-कृष्ण जपने से यवनो को नही जीता जा सकेगा। देश के लिये शक्ति भरे गीत दो, वह सूत्र दो जिसमे एकता के फूल गूँथे जा सके। यह सोने का देश कही कागज का न बन जाये, इसलिये इसे चेतना दो!

रामदेव— उपदेश लेते लेते उलटा उपदेश देने लग गये! तुम अभी बालक हो दूत! तुम्हे क्या पता है कि देश का सब कुछ लुट जाने पर भी यदि राम और कृष्ण का नाम जीवित रह गया तो यह देश फिर स्वतन्त्र हो जायेगा। और यदि राम और कृष्ण का नाम मिट गया तो इस देश मे फिर हिन्दू नाम का तत्व कभी नही दिखाई देगा। इसलिये राम और कृष्ण भक्ति के गीत गाओ! तलवारो की झनकार मे, कामिनी की रुनझुन मे तथा कचन की बेहोशी मे जो राम और कृष्ण को नही भूलता उसे हर आपत्ति मे राम और कृष्ण बचा लेते हैं। जाओ, तुम अपना काम करो और हम अपना काम करते हैं। तुम तलवार से इस देश को बचाने का प्रयत्न करो और हम राम और कृष्ण के नाम से करते हैं। राम और कृष्ण की उपासना परब्रह्म की उपासना है। यवन आक्रमण भारत पर नही हो रहा है अपितु भारतीय सस्कृति पर हो रहा है। विदेशी हमसे पहले हमारे धर्म को मिटाना चाहता है। हमारे राम और कृष्ण पर इस्लाम धर्म का तूफान आना चाहता है, पर यह उसकी भूल है। इस साधु प्रधान देश मे, इस धर्म प्रधान भूमि पर जब तक एक भी साधु जीवित है, तब तक राम और कृष्ण का नाम नहीं मिट सकता। वे हमारे मुँह से ही नही, अपने मुँह से भी राम कृष्ण का नाम सुनेगे। तुम निराश हो राजदूत! लेकिन साधु निराश नही है। उसे अपने और अपने भगवान पर भरोसा है। राम, राम! कृष्ण, कृष्ण!

यह कह कर साधु चल दिये और शिवराम कुछ पहेलियाँ सी सुलझाते हुए यात्रा समाप्त कर दिल्ली वापिस आ पहुँचे। दिल्ली आने पर वे सबसे पहले महामन्त्री विमान के पास आये। शिवराम की मुखाकृति

देखते ही किसान सब कुछ समझ गये, लेकिन फिर भी उन्होंने कहा—
"कहो शिवराम ! यात्रा कैसी रही ?"

शिवराम— बिल्कुल बेकार, कुछ परिणाम नहीं मिला। जाते हुए जो असगुन पहले आये थे उनका फल प्रत्यक्ष देख लिया। जैसे ही मैं घोड़े पर सवार हुआ था वैसे ही मुझे दुहनी ह[illegible] कुछ आगे बढ़ा तो बिल्ली ने रास्ता काटा। परिहार [illegible] स्मरण करता हुआ जैसे ही कन्नौज की सीमा के अन्दर [illegible] दुश्मन माहिलराज के दर्शन हुए और अन्त में [illegible] सुन कालिंजर गया। वहाँ भी ढाक के तीन पात मिले। [illegible] राजा परमाल ने अपनी गीली आँखें पोंछते हुए [illegible] छटांक भर हड्डियों के अतिरिक्त सहायता के लिये [illegible] है! जो कुछ था वह सब तो पहिले ही तुम्हारे [illegible] चुका। बेटा, बहू, सामन्त, जन, धन सभी [illegible] चुका है। मैं बूढ़ा किसी की अब क्या सहायता कर [illegible]

बहुत समझाने पर ग्वालियर के राजा ने तो इतना कहा कि यदि और सब कन्नौज तथा कालिजर आदि तैयार हैं तो हम भी तैयार हैं। वास्तव मे यह है तो अच्छी बात कि भारतीय हिन्दू राजाओ का एक ठोस सगठन हो। पर मैंने तो यह पाया कि हृदय से कोई तैयार नही। कुछ यवनो से डरे हुए हैं। महमूद गजनवी के सत्रह हमलो ने हिन्दुस्तान को अभी तक जीवित नही होने दिया। पेशावर से लेकर गुजरात तक भारतवर्ष जिस निर्दयता से महमूद गजनवी ने लूटा इस दानवता से तो शायद कभी भी कोई देश नही लुटा।

महामन्त्री ने शिवराम से सारी कहानी बडी गम्भीरता से सुनी, और फिर कुछ मौन रहने के बाद बोले— 'सीधी उँगलियो से भी क्या कभी घी निकलता है! माँगने से तो राजा को भी भीख नही मिलती। मैंने सोचा था कि शायद शान्ति से हिन्दू राजाओ का एक शक्ति-सम्पन्न सगठन हो जाये, किन्तु भूल की। ससार गिडगिडाने से नही, शक्ति से अपना होता है। इसमे किसी का क्या दोष, हमने अपने हाथो अपनी शक्ति क्षय की है।

अच्छा, अब तुम जाओ शिवराम! यात्रा मे थक कर आये हो, कुछ दिन विश्राम करो। विशेष आवश्यकता हुई तो तुम्हे बुलवा लूगा।'

अभिवादन कर शिवराम आराम के लिये चले गये और महामन्त्री विमास ने एक सेवक को बुलाकर कहा—"सेनाध्यक्ष सामन्त चामुण्डराय से कहो कि महामन्त्री विमास ने आपको तुरन्त स्मरण किया है।"

आज्ञा सुनते ही सेवक चला गया और बात की बात मे सामन्त चामुण्डराय झूमते हुए सिह की भाँति आ पहुँचे।

महामन्त्री को गम्भीर देख अभिवादन करते हुए चामुण्डराय ने कहा— किस चिन्ता मे हैं महामन्त्री! कहिये सेवक को किस लिये स्मरण किया?

किमान— जब बुद्धि से काम नही चला तो बल के उपयोग के लिये महाबली की आवश्यकता पडी।

चामुण्डराय— सेवक उपस्थित है। कहिये किसका सिर आपके चरणो मे उपस्थित करूँ ?

किमान— मुझे उनके सिर चाहिये जो इस देश के दुश्मन है, जो शान्ति के प्रस्ताव को खूनी स्याही से रँगना चाहते हैं, जो कुएँ के मेंढक की तरह अपनी दुनिया को बहुत बडी समझते है। मैं वह पाप मिटाकर रहूँगा जिससे पेशावर से सोमनाथ तक की भूमि विधर्मियो के कुत्सित पैरो से दबी पडी है।

यदि यह भारत छोटे छोटे राज्यो मे न बँटा होता तो हम हिमालय की तरह सिर उठाये रहते। पर हाय रे दुर्भाग्य ! जब दसवी शताब्दी के अन्त मे सुबुक्तगीन गजनवी ने लाहौर से लेकर पेशावर तक के हिन्दू राजा जैपाल पर चढाई की तभी यदि जैपाल को भारत के अन्य राजाओ की थोडी सी भी कुमुक पहुँच जाती तो जैपाल को सिन्धु पार का इलाका सुबुक्तगीन को दे लाहौर न भागना पडता और न ही भारतीयो के सामने यह दिन आता। जिस दिन जैपाल को ओहिन्द छोड लाहौर को राजधानी बनानी पडी उसी दिन दासता का बीज पड चुका था। हम तभी से गजनवी बढते चले आ रहे है।

चामुण्डराय — बात यही नही है महामन्त्री ! बात कुछ और भी है। और वह यह कि हम तब जागते है जब शत्रु हमारे घर मे घुस आता है। आपने यह देखा कि कहाँ गोर और कहाँ भारत ! बढते बढते [illegible] पाँव हम यहाँ तक आ पहुँचे और हम सोते ही रहे। यदि हम चढाई करते तो आज पेशावर, गजनी, काबुल और [illegible] सब हमारा राज्य होता। आज हमें अपना राज्य बचाने की ही चिन्ता है। यह

को अपने प्राण बचाने की होती। हम आपस मे तो लड़ते रहे पर यह न हुआ कि सब मिलकर शत्रु को कुचल डाले।

किमास— भूल एक दो नही, सैकडो है। उनके दोहराने से बीती बात तो अब हाथ नही आयेगी। कही हम शहाबुद्दीन गोरी को न छोड़ते और शूली पर चढा देते, कही हम कालिजर महोबे को अपना सम्बन्धी बना लेते, कही हमारे महाराज सयोगिता के पीछे खो न गये होते, तो न जाने हम कितने महान् और शक्तिसम्पन्न होते। पर अब बीते पन्ने पलटने मे क्या, अब तो आज और भविष्य को सभालना है।

चामुण्डराय! महाराज को महलो मे रगरलियाँ करने दो और तुम तलवार लेकर छोटे छोटे राज्यो को अपने अधिकार मे करते जाओ, भारत भूमि के करोडो टुकडो को अपनी भवानी से मिलाते चले जाओ। पहले गुजरात की तरफ जाओ, राजपूताना के छोटे छोटे राज्यो को अपने राज्य मे मिलाते हुए विधर्मियो से पराजित गुजरात छीन लो! अन्हलवाडा के बघेलावशी गर्वीले राजाओ का गर्व कुचल डालो!

और फिर दक्षिण मे यादव, चालुक्य, काकेता, तथा चोलवश वालो को शान्ति या क्रान्ति से वश मे करना है। उसके बाद गगा यमुना के बीच के देशद्रोही राजाओ से लोहा लेना। क्योकि गोरी जो हार मानकर गये हुए अभी बहुत दिन नही हुए, इसलिये यवनो को पनपने मे अभी देर लगेगी। अत उनके पनपने से पहिले स्वयम् शक्ति सम्पन्न हो जाओ, क्योकि पनपते ही शहाबुद्दीन दिल्ली को कर देना बन्द कर देगा, और हो सकता है वह पुन पख फैलाये।

चामुण्डराय— पख फैलायेगा तो पख काट दिये जायेगे, अभी महाराज और महाबली के हाथ मे तलवार जीवित है।

किमास— हमारे महाराज जितने बली है कहीं उतने ही दूरदर्शी

किमास— तो जाओ और अपनी सहचरी के सतीत्व से आ
दिल्ली के प्राण बचालो महाबली ! अपनी तलवार के तप मे
ज्वाला उगलो कि भिन्नता जल कर राख हो जाये और सारा भारत
स्वर हो कर हुकार उठे।

चामुण्डराय—लेकिन प्रस्थान से पहले महाराज की आज्ञा आवश्
है महामन्त्री ! पर आजकल उनसे आज्ञा लेना आसान काम नही है
सयोगिता ने महाराज को ऐसा बन्दी बना रखा है कि महाराज
किसी भी सन्देश का पहुँचना असम्भव सा हो गया है।

किमास— महाराज का आदेश है कि अनावश्यक हमे तग न कि
जाये। हमारे प्रतीक रूप महामन्त्री किमास जो कुछ कहे उसका पा
हो। हम जो कुछ कह रहे हैं वह दिल्ली के कल्याण के लिये, तुम
कुछ करने जा रहे हो वह भी दिल्ली के कल्याण के लिये है। अ
सोचने की आवश्यकता नही है। महाराज को मै सूचित कर दूंगा।

चामुण्डराय— जैसी महामन्त्री की आज्ञा !

अभिवादन कर सामन्त चले गये और महामन्त्री ने महल मे प्र
किया। महल मे आते ही पहले वे अपने उस वातायन के पास आ
जहाँ से प्राय कर्नाटकी को देखा करते थे।

कर्नाटकी तो न जाने पहले ही कब से टकटकी लगाये महाम
की प्रतीक्षा कर रही थी। मनचाहे को देखते ही उसने उँगली से अप
आँख पोछा और फिर दो उँगली दिखाती हुई मौन भाषा में बोली—
'आज रात को दो बजे अवश्य !'

न जाने कर्नाटकी ने कैसा जादू किया कि देखते ही महामन्त्री
सारी राजनीति भूल गये। उनकी आँखो के सामने एक ही स्वप्न नाच

उठा। वे केवल यही सोचने लगे कि कब दो बजें और कब करनाटकी के कक्ष मे पहुँचूं।

किमास के मन मे उत्सुकता जाग उठी। किसी तरह उन्होंने दो बजे तक का समय बिताया और फिर चुपचाप करनाटकी के कक्ष की ओर चल दिये। किसी से मिलने की चाह मे पैरों मे न जाने कहाँ का बल आ जाता है। चालाक चोर की तरह किमास चुपचाप [illegible] तक आ पहुँचे जहाँ करनाटकी आलिंगन के लिये आतुर खड़ी थी।

महामन्त्री को देखते ही वह उनसे चिपट गई और फिर [illegible] अपनी भुजाओं मे छिपाये उनको उस शैया पर ले आई जहाँ [illegible] मुग्ध होकर सो जाती है। आँखों मे आँखें डालते हुए करनाटकी ने कहा— चित्त चुराकर इतनी देर के लिये कहाँ चले गये थे [illegible]!

तुमने क्या कर दिया कि मै पागल हो गई। यदि तुम इसी प्रकार दो दो, तीन तीन दिन तक न आये तो मै मर जाऊगी।

कहते कहते करनाटकी नये शराबी की तरह मतवाली हो गई। महामन्त्री से भी अब न रहा गया। दोनो की आँखो से ससार ओझल था और दोनो एक दूसरे मे खो गये।

प्रणय का रस पीते पीते दोनो ऐसे मतवाले हो गये कि आलिगन पाश मे बँधे बँधे दोनो को नीद आ गई।

× × ×

और उधर बडी रानी चन्द्रागदा की आँखो मे नीद नही थी। वह तारो को गिन गिन कर अपने श्वासो को काट रही थी। वह कभी लेटती थी और कभी बावडी के किनारे अकेली घूमने चल देती थी। वह कभी सोचती थी कि मर जाऊँ और कभी उसके मन मे आता था कि प्रतिशोध की ज्वाला लिये मरना पाप है। पहले बदला और बाद मे मृत्यु।

बदले की आग मे नारी अन्धी हो जाती है। फिर उसे कुछ दिखाई नही देता। चन्द्रागदा को केवल एक ही ध्यान था और वह यह कि जैसे भी हो इन नागिनो को नष्ट कर डालू जो मेरे महाराज को डसे जा रही है, जो मेरी दिल्ली को मिटाने पर तुल गई है, जो मेरे देश पर विनाश की बदली बन कर छा गई है।

सोचती सोचती चन्द्रागदा जब करनाटकी के कक्ष के निकट आई तो उसने झरोखे से टकटकी लगा अन्दर की ओर झाक कर देखा। बिजली के हल्के प्रकाश मे जब चन्द्रागदा ने देखा कि करनाटकी और महामन्त्री आलिगन पाश मे बँधे सो रहे है तो उसके रोम रोम मे बिजली दौड गई। उसने हल्के से दरवाजे को देखा तो वह खुला

हुआ था। बिजली की तरह दौड़ती हुई चन्द्रागदा उस महल मे आई जहाँ महाराज संयोगिता के साथ सो रहे थे।

आज्ञा न होने पर भी चन्द्रागदा ने बलात् महाराज को जगाया। शायद कोई दूसरा होता तो महाराज उसका सर उतार लेते। पर चन्द्रागदा को देखते ही वे क्रोध से बोले— 'क्या है ?'

चन्द्रागदा— घोर अनर्थ महाराज! आपके महल मे आपका ही महामन्त्री चोर बन कर घुसा हुआ है।

पृथ्वीराज— यह क्या बहकी बहकी बाते कर रही हो रानी! कही तुम पागल तो नही हो गई हो ?

चन्द्रागदा— पागल नही महाराज! आँखो देखी कह रही हूँ। करनाटकी और किमास एक शैया पर लिपट कर सो रहे है।

पृथ्वीराज— और अगर यह बात झूठ निकली तो ?

चन्द्रागदा— तो इस दासी का सर काट लेना!

चौहान ने आगे कुछ नही कहा, टँगा हुआ धनुष-बाण ले चन्द्रागदा के साथ चल दिये।

बढ़ती हुई बाढ़ की तरह चन्द्रागदा के साथ चौहान करनाटकी के कक्ष के उस पिछले वातायन पर आ गये जहाँ से वे अन्दर का सारा दृश्य देख सकते थे।

झरोखे से चौहान ने करनाटकी की शैया पर जो कुछ देखा उसे देखते ही वे धधक उठे। उन्होंने आव देखा न ताव धनुष पर तीर चढ़ा [illegible] ही [illegible] दिया।

तीर दोनों के [illegible] को चीरता हुआ बाद मे [illegible] गया। [illegible] हुई और करनाटकी के साथ ही साथ [illegible] महामन्त्री [illegible] भी [illegible] के लिये इस संसार से विदा हो गये।

१०

"यह तुमने क्या किया! आवेश में अपने ही हाथ से अपना गला काट डाला! एक औरत के पीछे देश के ऐसे जाज्वरयमान महामन्त्री के प्राण ले लिये कि जो देश का प्राण था। किमास के ऊपर एक कर्नाटकी क्या हज़ार करनाटकी भी न्यौछावर की जा सकती थीं। लाखों की सेना भी जिस किमास की बुद्धि के आगे तुच्छ थी, उस बुद्धिमान महामन्त्री को तुमने एक नर्तकी के पीछे कत्ल कर दिया! जी चाहता है कि किमास के बदले में तुम्हारे टुकड़े टुकड़े कर डालूँ। पर सम्बन्ध और परिस्थितियों को देखते हुए क्रोध को पीना पड़ रहा है। जिस किमास के होते हुए तुम सदा सुख की नींद सोते रहे उस किमास को तुमने एक सुन्दर वेश्या के पीछे नष्ट कर डाला! जान पड़ता है अब तुम्हारे नाश के दिन आ गये चौहान!"

अचानक चित्तौड से आये हुए राव समरसिंह ने पृथ्वीराज से सारी कहानी सुनकर क्रोध मे एक ही साथ यह सब कहा। पर चौहान पत्थर बने सब कुछ सुनते रहे, जैसे उनके लिये किमास की मृत्यु कुछ है ही नही। जब रावजी और अधिक कहते ही चले गये तो चौहान ने चिढते हुए उत्तर दिया— ऐसे पापी को मारना अच्छा ही हुआ रावजी! मैं नही चाहता कि मेरे राज्य मे किमास जैसे पापी और कपटी जीवित रहे।

समरसिंह— और तुम यह तो चाहते हो कि इस देश मे पृथ्वीराज जैसे राजा जीवित रहे, जिनके माथे पर न जाने स्याही के कितने टीके लगे हुए हैं! सौ गुण होते हुए भी यदि किसी मे एक अवगुण है तो वह सारे गुणो को ढक देते हैं चौहान! तुमने कई विवाह किये और राज्य को सब सहन करने पडे। तुमने अपने ही हाथो अपनी बेटी को विधवा बना डाला और हमने चू तक न की। हम भी इस पाप के भागी है। तुम अपने भाई की बेटी भरी सभा से जबरदस्ती उठा लाये और किमास ने उस परिस्थिति को भी शान्ति से सँभाल लिया। महारानी ने तुम्हारे सुख और राज्य विस्तार के लिये जो कुछ किया है वह इतना अधिक है कि जन्म जन्मान्तर में भी उनके ऋण से उऋण नही हो सकोगे।

पृथ्वीराज— और मैंने क्या किमास पर कम कृपा की थी! इस प्रकार से सारा राज्य ही उस पर छोड दिया था। पर बदले मे वे मेरी ही प्रिया पर डाका डाल बैठे। मनुष्य सब कुछ सह सकता है पर जब उसके प्यार पर डाका डाला जाता है तो उससे सहन नही होता।

समरसिंह— [illegible]

सकता है वैसे दूसरे को भी। फिर जिस प्रिया के पीछे तुमने किमास की जान ले ली वह तो एक मामूली वेश्या थी।

पृथ्वीराज— वेश्या थी, पर मेरे महल मे आने से पहले। यदि आज कोई पापी है तो कल बदलने पर वह पापी नही रहता।

अमरसिंह— यदि किमास को तुम पापी ही समझते थे तो उसके पाप को मिटाते, किमास को मिटाने से क्या मिला, अन्धकार ! राज एक धुरन्धर महामन्त्री से शून्य हो गया, दिल्ली का सबसे अधिक प्रकाशमान रत्न धूल मे मिला डाला।

पृथ्वीराज जो अब तक आँसुओं को आँखों ही मे रोक गर्व से दुख छिपाये बैठे थे अब फूट पड़े। उन्होने रोते हुए कहा— किमास और करनाटकी की मृत्यु का जितना दुख मुझे है उतना शायद ही किसी को हो ! मैं तो चोर की नारी की तरह प्रकट मे रो भी नही सकता। आप सच कहते हैं राव जी ! मैंने अपने ही हाथ से अपना गला काट डाला, मैंने वह दीपक बुझा दिया जिससे मेरी दिल्ली मे उजाला था। किमास ने जीवन भर मेरे सुख के लिये तपस्या की और मैं उनकी शान्ति के लिये करनाटकी तक न दे सका। उस तेजस्वी को मारते समय मैंने एक बार भी नही सोचा कि प्रणय की प्यास पगली होती है। महामन्त्री मुझे रह रह कर याद आयेंगे राव जी ! उनकी एक एक बात मेरे हृदय मे शिलालेखों की तरह खुदी हुई है।

अमरसिंह— पाप करने के बाद प्रत्येक को पश्चात्ताप होता है पर प्रायश्चित्त कोई विरला ही करता है। महामन्त्री की मृत्यु से मुझे उतना ही दुख हुआ जितना किसी को अपने जवान भाई की मृत्यु से हो सकता है। तुमने यह बहुत बुरा किया चौहान !

पृथ्वीराज— जितना चाहो कह लो, पर अब हो ही क्या सकता

समरसिंह— आवेश मे पागल न बनो चौहान ! राजकाज मे बहुत सी बाते गोप्य रखनी ही पडती हैं । राजा का पागलपन चाहे सहन कर लिया जाये, पर प्रजा का पागलपन प्रलय की बाढ की तरह होता है । प्रजा जब बिगड जाती है तो सँभाले नही सँभलती । राजा ही क्या, किसी को भी अपना रहस्य किसी पर भी नही खोलना चाहिये । मनुष्य चाहे कितना भी दोषी हो लेकिन ससार के सामने जो साधु है वह पूजा जाता है, और जो अपनी बात अपने सगे से सगे पर भी प्रकट कर देते हैं किसी न किसी दिन उनकी बात बिखर जाती है। ससार मे वही मनुष्य सफल है जिसने अपने कल को भी छिपा लिया । तुम नही जानते चौहान ! कि किस समय मैं तुम्हारा शत्रु बन जाऊँ । आज जो सगा है कल वह शत्रु भी हो सकता है । इसलिये निकट से निकट पर भी अपनी बातें प्रकट मत करो । और फिर किमास का वध प्रकट होने से तो सारे राज्य में हल चल मच जायेगी, शत्रु के घर मे घी के दीपक जल उठेंगे, और हो सकता है हमारी इस परिस्थिति में कोई आक्रमण कर बैठे ।

पृथ्वीराज— यह तो ठीक है, पर यह भेद छिपा कैसे और कब तक रह सकेगा ? बडी रानी जानती हैं, और भी महल के अन्दर कुछ को सन्देह है ।

समरसिंह— महारानी चन्द्रावती को मैं समझा दूंगा । वे राज्य के हित की हर बात मान लेती हैं । जिन नौकरानियों को पता है उन्हें धन देकर रोको ! और यदि कुछ समय बाद पता चल भी गया तो परिस्थिति काफी बदल चुकी होगी ।

पृथ्वीराज— तो फिर घोषणा करवा देता हूँ कि महामन्त्री सहसा बहुत बीमार हो गये हैं, राजवैद्य का आदेश है कि उनको पूर्ण विश्राम करना चाहिये । अब किसी से भी महामन्त्री की भेंट नहीं होगी । और [illegible] के पाँचवें दिन प्रकट कर दिया जावे कि हृदयगति [illegible]

भयानक बीमारी की सूचना मिलते ही मन्त्री कृष्णवन्त, सामन्त चामुण्डराय और राजकवि चन्द्रबरदाई महामन्त्री को देखने पहुँचे। पर द्वार पर खड़ी एक सेविका ने कहा— "अन्दर जाने की किसी को आज्ञा नहीं है। महाराज ने कहा है कि कोई भी आये हमसे मिले बिना महामन्त्री के कक्ष में न जाने पाये।"

इतना सुनकर तीनों चुपचाप महाराज के महल की ओर चल पड़े। वहाँ भी द्वार पर एक तरुणी का पहरा था। कृष्णवन्त ने द्वारपालिका से कहा— "महाराज से कहो कि मन्त्री कृष्णवन्त, सामन्त चामुण्डराय और राजकवि चन्द्रबरदाई दर्शन चाहते हैं।"

सेविका सुनकर अन्दर चली गई और चन्द्रबरदाई ने माथे में बल डालते हुए कहा— "आज दिल्ली में पुरुषों का नहीं, स्त्रियों का राज्य है। जिस द्वार पर देखो उसी द्वार पर नयनों के तीर लिये सुन्दरियाँ पहरे पर दिखाई देती हैं। इन नागिनों ने महाराज तक पहुँचने का मार्ग भी बन्द कर रखा है।"

कृष्णवन्त— मुझे तो कर्नाटकी की मृत्यु में ही कोई रहस्य जान पड़ता है। महामन्त्री की बीमारी का समाचार भी हृदय को कँपा रहा है। मेरी बाईं आँख रह रह कर फड़क रही है। न जाने क्या हो चुका है और क्या होगा।

चामुण्डराय— कल मध्याह्नोत्तर तो महामन्त्री ने मुझे गुजरात पर आक्रमण करने के लिये आदेश दिया था और आज वे भयंकर बीमारी में पड़ गये। न जाने यह कैसी माया है।

इसके पहले कि द्वारपालिका ने आकर उत्तर दिया — 'महामन्त्री के पास [illegible] रात भर जागते रहे, इसलिये वे सो रहे हैं।"

इतना सुनकर चन्द्रबरदाई को क्रोध आ गया। वे तड़पते हुए बोले— महाराज को जगा दो।

गये— मेरे पाप के कारण महामन्त्री हमसे विदा हो गये। मैंने करनाटकी और महामन्त्री दोनों को एक साथ ही एक तीर से मार डाला।

"क्या, महामन्त्री को मार डाला। उनको मारने से पहिले तुमने हम तीनों को क्यों नहीं मार डाला चौहान! ऐसे बुद्धिमान देवता के प्राण ले लिये जो सारी दिल्ली के प्राण थे, जिनके जीवन का हर श्वास तुम्हारी श्री वृद्धि में लगा हुआ था। हाय, तुमने यह क्या किया दिल्लीपति!" आँसू बहाते हुए तीनों के प्रतीक रूप में चन्द्रबरदाई ने एक ही श्वास में कहा, और पृथ्वीराज अपराधी की तरह सब कुछ सुनते रहे।

किन्तु शोक के इस अयोध्याकाण्ड के समय में भी कृष्णवन्त ने धीरज धरते हुए कहा— "जो होना था वह तो हो चुका, अब कोई नयी होनी न हो जाये इसलिये धैर्य धर कर नीति से काम लो और वह करो जिससे महामन्त्री और राज्य दोनों की बात बनी रहे। आश्चर्य तो यह है कि किमास जैसे तपस्वी किसी नारी के जाल में फसे कैसे?"

चन्द्रबरदाई— जब महर्षि नारद और विश्वामित्र तक न संभल सके, जब पराशर जैसे ऋषि दुनिया की आँखों के सामने धुवाँ तान कर वह कर बैठे जिसे पाप कह कर पुकारा जाता है, तब महामन्त्री किमास का ही क्या दोष था! प्रकृति के नियमों को कौन मिटा सकता है! महाराज स्वयं इस अग्नि का पान करते हैं। फिर क्यों राज्य परिषद की स्वीकृति के बिना किमास का वध किया गया? राजतन्त्र में भी राजा इतना स्वतन्त्र नहीं कि महामन्त्री तक की हत्या कर डाले। जी चाहता है कि तुम्हारे इस अपराध के बदले हम सब तुम्हें छोड़ कर चले जायें। लेकिन जब हम दिल्ली की ओर देखते हैं, जब उन पौधों की ओर देखते हैं जिनको सींचते सींचते हम बूढ़े होने को आये तो तुम्हारा हर अन्याय अपने सर पर लेना पड़ता है।

अब तुम ही बताओ कृणवन्त ! हम क्या करे। शोक और राज्य की रक्षा का यह विषम समय है।

कृणवन्त— शोक मे जो स्वय को खो देता है, उसकी मृत्यु हो जाती है। अब तो सब ने पहले यही करना है कि महामन्त्री की मृत्यु की सूचना कल हम सब एक ही साथ करे। कल प्रात. चार बजे महामन्त्री के महल से हमारे रोने की आवाज एक ही साथ निकले। इतने हमे अपने दु ख को आँखो ही आँखो मे पीना पडेगा। और सामन्त ! तुम को शोक का यह पहाड अपनी छाती पर लिये आज ही गुजरात की ओर सेना सहित प्रयाण करना होगा, जिससे किसी को तनिक भी सन्देह न होने पाये।

चामुण्डराय— सैनिक का जीवन भी कितना कठोर होता है! चाहे घर पर मुर्दा पडा रहे, पर वह राह से वापिस नही आ सकता। कर्त्तव्य का यह कितना भयकर रूप है ! लेकिन एक राजभक्त को यह सब करना ही पडता है। आपकी आज्ञानुसार मैं जा रहा हूँ। देवी दुर्गा की कृपा से शीघ्र ही जय का श ख बजाता हुआ अपनी दिल्ली के दर्शन करूँगा।

चामुण्डराय चले गये और दिल्ली मे एक विचित्र प्रकार की गम्भीरता छा गई।

दूसरे दिन महामन्त्री किमास के महल से एक भयकर रुदन निकला— "हाय, यह क्या हुआ ! हम लुट गये। महामन्त्री किमास हम से सदा के लिये विदा हो गये।"

समाचार सुनते ही चारो ओर स्तब्धता छा गई। आश्चर्य की आँधी ने सारी दिल्ली को हिला डाला। सहसा सब तरफ से रुदन फूट पडा। प्रजा शोक से उमड पडी। महामन्त्री के महल के पास सारी दिल्ली आँसू बहाती हुई आ जुटी। प्रत्येक की आँखो मे आँसू और वाणी पर महामन्त्री के गुणो की चर्चा थी।

शोकातिरेक मे राजसी सम्मान के साथ यमुना तट पर महामन्त्री किमास की अन्तिम यात्रा समाप्त की गई, और फिर चन्दन की चिता मे दाह सस्कार कर सब खाली हाथ खडे रह गये। अभी कुछ समय पहले जो दृश्य था, वह अदृश्य हो गया। साकार और निराकार की केवल एक पहेली शेष रह गई।

मृत्यु के रहस्य को सुलझाते हुए सब अपने अपने घर वापिस आ गये, पर आंखो के आंसू तो युग युगान्तर तक नही सूख सकते।

दुनिया मे मनुष्य की पलके भीगी रहती हैं पर फिर भी उसे चलना ही पडता है। बडे से बडा दु ख भी समय के मरहम से कम पड जाता है। दिनो के साथ घाव भरते जाते हैं, लेकिन दाग नही मिटता है।

उर में कसक लिये राज्याधिकारी फिर कार्य मे सलग्न हो गये। राजनीति ऐसा मकडी का जाला है कि जो उसमे फँस जाता है वह जितना निकलने का प्रयत्न करता है उतना ही उलझता जाता है। राज-काज में न दिन की शान्ति है, न रात की नींद।

कृष्णवन्त चिन्ता के बल माथे मे डालते हुए आप ही आप विचारने लगे— भारत दिन प्रति दिन खण्ड खण्ड होता जा रहा है। जिधर दृष्टि जाती है उधर ही इस भूमि के अग रक्त मे भीगे दिखाई देते हैं। धर्म के नाम पर दुराचार हो रहे हैं, डोलियो पर तलवारे चल रही हैं। गहडवाड, चन्देल, परिहारो और चौहानो मे तो तलवारे चलती ही रही हैं, पर अब तो उडीसा और बिहार मे भी हर समय ठनी रहती है। बगाल में नारी के अभिशाप से जो आग धधक रही है वह तो सारे भारत के आंसुओ से भी नही बुझ सकती। आज के राजा का सबसे बडा लक्ष्य यह है कि डोली के लिये वीरता का प्रदर्शन करे, औरत के लिये अपने राज्य की बलि चढा दे।

आज का भारत जातियो का भारत है। जितने व्यक्ति हैं उतने ही वर्ग हैं। आज का आर्यावर्त फूट का देश है। एक दूसरे को देख नही सकता। धर्म देश से उठ कर वनो मे चला गया है। धर्म यदि कही शेष है तो वह केवल साधुओ के फैले हुए हाथ मे। विश्वगुरु भारत आज अपना अस्तित्व खोकर दास हुआ चाहता है। हे ईश्वर, तुम उसकी रक्षा करो! हे शकर, तुम शक्ति दो जिससे कि हम दुष्टो का सहार कर सके।

कृपावन्त यह सोच ही रहे थे कि जय के शख की ध्वनि से दिल्ली गूज उठी। उन्होने जो खिडकी से झाँक कर देखा तो सामने से जय-ध्वनि करते हुए सामन्त चामुण्डराय आते दिखाई दिये। देखते ही कृपावन्त दौड कर द्वार पर आये और देखते ही देखते चामुण्डराय भी दुर्ग के द्वार पर आ पहुँचे।

चामुण्डराय ने कृपावन्त को श्रद्धा और प्रसन्नता से सैनिक अभिवादन किया। कृपावन्त ने चामुण्डराय को अपने हृदय से चिपटा अपने गले से मोतियो की माला उतार वीर सेनापति के कण्ठ मे डाल दी।

और फिर सेनापति ने गर्व और नम्रता से कहा—आपके आशीर्वाद से हमने वघेलो को जीत लिया। गुजरात हमारे अधिकार में आ गया है। अब वह दिन दूर नही जब सब छोटे छोटे राज्यो को मिटा कर दिल्ली राज्य मे मिला दूंगा। शक्ति के विना कोई सर नही झुकाता। हम किसी न किसी प्रकार छोटे छोटे राज्यो को जीत कर दिल्ली को एक वडा राज्य बनाकर ही रहेंगे।

कृपावन्त—समय हाथ से निकल चुका है, फिर भी प्रयत्न तो करना ही चाहिये। आशा नही होती कि गहड़वाड़, चन्देल और परिहार वशी इस भारतवर्ष को एक हो जाने देंगे।

चामुण्डराय— यदि हमारे महाराज हमारी मानते तो अब तक ये भी कभी के पैरो मे आ पडते ।

कृष्णवन्त— शक्ति से या शान्ति से इनको दिल्ली के अधीन होना ही पडता । पर अब पछिताये होत क्या जब चिडिया चुग गई खेत । जाओ, अब विश्राम करो सामन्त ! तुम्हारे जैसे सपूत पर ही तो माँ गर्व करती है ।

अभिवादन करते हुए सामन्त चले गये । अपने महल मे आकर माँ के चरण छू वे विश्राम के लिये शैया पर आ पडे ।

माँ ने बेटे का सर सहलाते हुए कहा— तुम्हारा भी कोई जीवन है ! घोडे की पीठ और युद्धभूमि के अतिरिक्त तुम्हे और किसी से मोह ही नही ।

चामुण्डराय— मोह क्यो नही है माँ ! मुझे अपनी दिल्ली से अपने प्राणो से भी अधिक मोह है । तुम्हारा बेटा अपने प्राण दे सकता है, पर अपनी मातृभूमि की मिट्टी भी किसी को नही दे सकता । मेरे जीवन की केवल यही अभिलाषा है कि मेरे जीते जी दिल्ली पर आंच न आने पाये ।

माँ— देशभक्त की महत्वाकाक्षा ऐसी ही होती है बेटा ! लेकिन मैं तो इस से भी आगे चाहती हूं और वह यह कि तुम रहो या न रहो पर मेरी दिल्ली सदा बनी रहे ।

चामुण्डराय— तुम्हारी जैसी माँ के ये बोल कृष्ण की गीता से भी महत्त्वपूर्ण हैं । भारतवर्ष ऐसी ही माताओ के बल पर टिका हुआ है ।

माँ— सामूहिक जीवन के साथ साथ मनुष्य की कुछ व्यक्तिगत इच्छा भी होती है । मै चाहती हूँ कि बेटा ! तू अब की फुलेहरा दोयज पर अपना विवाह करा ले ।

चामुण्डराय— मेरा विवाह तो तलवार से हो चुका है माँ! वीर का विवाह नारी से नहीं, मृत्यु से होना है। उस दिन तुम समझ लेना कि तुम्हारे बेटे का विवाह हो गया जिस दिन तुम्हारा बेटा देश के लिये वीरगति को प्राप्त हो जावे। जब देश पर चारो ओर से आँधियाँ घिर घिर कर आ रही हैं, जब मेरी दिल्ली के चारो ओर अग्नि की ज्वालाये जल रही हैं, तब विवाह की बात वीर माता के मुंह से शोभा नहीं देती।

माँ— लेकिन तेरी मगेतर का क्या होगा ? हमारे यहाँ जिससे वाग्दान हो जाता है उससे सम्बन्ध नही छूटता। अब तू ही बता उसका क्या होगा ?

चामुण्डराय— वाग्दान क्या मुझसे पूछ कर हुआ था ? बचपन मे इस प्रकार के शब्दो का उत्तरदायित्व हमारे रूढिवादी समाज से अब नष्ट हो जाना चाहिये।

माँ— तो तू विवाह नही करेगा ?

चामुण्डराय— जब तक दिल्ली भयमुक्त नही होगी, जब तक सारा भारत एक ध्वज के नीचे नही आ जायेगा, तब तक यह प्रश्न मेरे सामने फिर कभी नही छिडना चाहिये माँ! अब मैं सोऊँगा। थका हुआ हूँ, मुझे सो जाने दो माँ! तुम भी सो जाओ।

चामुण्डराय दिल्ली और देश के उत्थान का स्वप्न देखते हुए सो गये और उधर पृथ्वीराज के मन से किमास और करनाटकी की मृत्यु का शोक समय के परिवर्तन से इस प्रकार हट गया जिस प्रकार जाडो के बादल कुछ देर बाद फट जाते हैं।

शराब का नशा उतरने पर जिस प्रकार मद्यप फिर अपनी वास्तविक दशा मे आ जाता है उसी प्रकार चौहान फिर उसी पुरानी

रगीनी दुनिया मे आ गये। वे भूल गये राजकाज को, और रम गये उन्ही यौवन के फूल पर जो कन्नौज मे उठा लाये थे।

सयोगिता के पास बैठते ही चौहान ने हाथ नरमी से दबाते हुए कहा— मेरे सामने यदि यह प्रश्न हो कि सयोगिता और दिल्ली मे तुम्हे कौन अधिक प्रिय है, तो मैं कहूंगा सयोगिता। मैं दिल्ली छोड सकता हूँ, लेकिन तुमसे क्षण भर भी अलग नहीं हो सकता।

सयोगिता ने चौहान के वक्ष को सहलाते हुए मदालस भरी वाणी में कहा— ऐसे अवसर पर पुरुष ऐसी ही बाते किया करते हैं।

पृथ्वीराज— तुम्हे यह अनुभव कैसे है ?

सयोगिता— अनुमान से। आपने न जाने कितनी बार यही भाषा अपनी अन्य रानियो से दोहराई होगी !

पृथ्वीराज— तुम जितनी चचल हो उतनी चतुर भी सयोगिते ! जी चाहता है जीवन का एक क्षण भी तुमसे अलग न बीते।

सयोगिता— ससार मे यह कामना प्रत्येक की अधूरी ही रही है महाराज ! प्यार किसी का पूरा नहीं उतरता। इस राह में चलता चलता ही प्राणी विलीन हो जाता है।

पृथ्वीराज— पर प्यार में वह स्वाद है कि सर कटा कर भी आनन्द आता है। हर समय दार्शनिक बाते अच्छी नहीं लगती। दुनिया में मनुष्य यदि इन बातो को सोचे तो वह कर्म करना ही छोड दे। जो काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि को अभिशाप कहते हैं वे ससार को नहीं पहिचानते, वे सत्य और तथ्य से दूर हैं। दुनिया जो कुछ है वह कथित तत्वो से ही है। जीवन मे रूप और जवानी का रस जिसने नहीं पिया, उसका भी क्या जीवन है ! अपने फूल मे अधरो की सुगन्ध से मुझे सुरभित करती रहो सयोगिते ! पीने दो अपनी आंखो

का रस, नहाने दो अपने रूप की चाँदनी मे, बरसने दो कण्ठ से प्यार भरे गीत!

संयोगिता— अपने शक्ति-सम्पन्न महाराज के चरणो मे यह रूप और रत्नो का सागर न्योछावर है। आपको पाकर मेरे अग अग मे लहर दौड रही है। मैं आपको स्वय से पल भर को भी पृथक नही कर सकती। आप जल हैं और मैं मीन।

प्यार का यह सवाद चल ही रहा था कि सेविका ने आकर द्वार के पीछे से कहा— "दरबार का समय हुए बहुत देर हो चुकी है। राजसभा में सब महाराज की प्रतीक्षा मे हैं। मन्त्री कृणवन्त स्वय महाराज को बुलाने महल मे आये हैं।"

सुनते ही पृथ्वीराज एक झटके के साथ जाने लगे, पर सयोगिता ने उनके गले में बाहे डालते हुए कहा— "चलो, राज्य छोड कर कही एकाकी गुहा मे चले, जहाँ राज्य के झझट प्यार की इन अनमोल घडियो मे बाधक नही बन सकेंगे।"

पृथ्वीराज— मै बहुत शीघ्र लौट आऊँगा, लेकिन इस समय तो मुझे जाना ही होगा। गुजरात विजय के उपलक्ष मे आज राजदरबार लगा है।

सयोगिता— ईश्वर आपकी कीर्ति इसी प्रकार बढाता रहे! जाओ, मै खिड़की से अपने महाराज का ऐश्वर्य देखूँगी।

झूमते हुए हाथी की तरह दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान दुर्ग के उस चौक मे आ गये जहाँ विजयोत्सव के ठाट-बाट रचे हुए थे। सामन्त और सरदार कटि में लम्बी लम्बी तलवार लटकाये गर्व से मूछें ऐंठ रहे थे। महाराज के बराबर में एक ओर राजकवि चन्द्रबरदाई और दूसरी ओर कृणवन्त का आसन था। कृणवन्त के बराबर मे सामन्त

चामुण्डराय का मणिमण्डित मूढा बिछा हुआ था, लेकिन मूढे पर चामुण्डराय अभी तक उपस्थित नहीं थे।

सेनाध्यक्ष का मूढा खाली देख चौहान ने व्यग्य मे कहा— सामन्त का अभी तक पता नही! बरात चढ गई और दूल्हा है ही नही।

कृपावन्त— सामन्त ने अत्यन्त विनम्रता से सूचना भेजी है कि 'मेरे स्वागत का दिन अभी बहुत दूर है। जय अभी कहां, अभी तो हम मँझधार में हैं। पार पहुँचने से पहले प्रसन्नता कैसी! मेरा स्वागत तो उस दिन होगा जिस दिन मेरी दिल्ली सारे भारत की सम्राज्ञी होगी, जिस दिन इस पवित्र भूमि मे विदेशियो के पैरो के निशान मिट जायेंगे। इससे पहले आपके सेवक को कुछ भी नही सुहाता। नाच और गाने तो वहाँ अच्छे लगते हैं जहाँ हर्ष होता है, और मुझे हर्ष उस दिन होगा जिस दिन महाराज को सर्वप्रिय और सर्वश्रेष्ठ देखूंगा। आशा है महाराज क्षमा करेंगे!'

सूचना सुनकर महाराज ने मन ही मन मे कहा, 'सामन्त ने यह हमें भारी उपालम्भ दिया है। शायद वे यह समझ बैठे हैं कि दिल्ली का राज्य उनकी ही भुजाओ मे चल रहा है। मैंने उनको मान क्या दिया कि उनको भारी घमण्ड हो गया है!'

और फिर प्रत्यक्ष में बोले— सामन्त के उपकारो के हम आभारी है। दिल्ली राज्य के प्रति उनकी जो सेवायें हैं वे हम कभी नही भूल सकते। उनको मान इतना मिल चुका है कि अब वे हमारे द्वारा अपने अभिनन्दन को तुच्छ समझते हैं। हमें दुख है कि आज के राज्योत्सव में हमारे सेनाध्यक्ष सामन्त चामुण्डराय नही हैं, फिर भी इतने उपस्थित अतिथियो और प्रजाजनो के लिये उत्सव तो मनाना ही चाहिये। हां तो कविराज! तुम ही अपनी वाणी मे रस बरसाओ!

चन्द्रवरदाई— आज तो वाणी केवल वीर हुंकार करके ही महाराज का स्वागत और आदेश का पालन कर सकेगी। सुनिये दिल्लीपति! मैं आपकी सेवा मे एक छप्पय निवेदन कर रहा हूँ —

वज्जिय घोर निसान रान चौहान चहौ दिस।
सकल सूर सामंत समरि बल जंत्र मंत्र तिस॥
उट्ठि राज प्रिथिराज बाग मनो लग्ग वीर नट।
कढत तेग मन वेग लगत मनो बीजु झट्ट घट॥
थकि रहे सूर कौतिग गगन, रगन मगन भइ शोन धर।
हदि हरषि वीर जग्गे हुलसि हुरेउ रंग नव रत्त वर॥

पृथ्वीराज— वाह कविराज, वाह! ध्वनि और भावना के योग ने क्या खूब चित्र उपस्थित किया है।

चन्द्रवरदाई— किन्तु आज केवल कविता लिखने और सुनने से ही देश का काम नही चलेगा। आज तो राष्ट्र को कर्मठ वीरो की आवश्यकता है। वाणी के साथ साथ जब तक देश के हर व्यक्ति के हृदय झंकृत हो ललकार लेकर नही उठेंगे, तब तक कवि का गाना निरर्थक रहेगा।

पृथ्वीराज— शृंगार के समय युद्ध की झनकार शोभा नही देती कविराज! यह समय तो नर्तकियो के नृत्य का है, गायको की सुरीली तान का है। हां तो फिर छिड़ने दो रुनझुन और रिमझिम की लय। जीवन केवल आदर्श के लिये नही, यथार्थ के लिये भी है। खिलने दो वे फूल जिन से पत्थर भी महक उठते हैं। होने दो वह नृत्य जिससे मृतको में भी झनकार आ जाती है। सुनने दो वह संगीत जिससे बंजर मे भी बहार मचल उठती है। अब देर क्यो? हमारी आज्ञा का पालन हो!

और फिर दूसरे ही क्षण दिल्ली के दुर्ग मे मदमाती नर्तकियो के नाच से मदिरा बरसने लगी। तलवार के धनी ठुमको पर ठिठर कर जड हो गये। यौवन की शराब मे अद्‌भुत मद होता है। शराब का नशा तो एक बार को उतर भी जाता है, पर जो कामिनी के अलक जाल मे बन्दी है वह तो छुटाये भी नही छुटता। शराब का नशा तो पीने से चढता है, लेकिन यह तो ऐसा नशा है जो देखने से ही चढ जाता है।

सगीत और नृत्य की रगीन बौछारो पर बाँके वीरो की गर्दने झूम ही रही थी कि सहसा भयानक शोर सुनाई दिया। नागरिको की भीड की भीड इधर से उधर दौडती दिखाई दी और दिल्ली मे खलबली मच गई।

चौहान सिहासन से उठ कर खडे हो गये और उन्होने गर्जते हुए कहा—"क्या बात है ?"

उत्तर मे द्वार से दौड कर आते हुए प्रहरियो ने कहा—"पत्तावत हाथी जजीर तोड कर बिगड गया है। उसने कितने ही बूढे, बच्चो और स्त्रियो को कुचल डाला है। वह किसी के बस मे नही आता। प्रलय की तरह वह राजधानी का नाश करता हुआ खूनी पागल की तरह घूम रहा है। उसने महावत को मार डाला। वह न सेना के बस मे आता है और न महावतो के।"

पृथ्वीराज— वह राज्य का अमूल्य धन है, उसे कोई क्षति नही होनी चाहिये। किसी भी प्रकार उसे शान्त करो।

कहते हुए महाराज राज्योत्सव समाप्त कर चले गये और प्रजा हाथी के प्रहारो से त्राहि त्राहि पुकारती रह गई।

११

प्रजा का भीषण शोर सुन चामुण्डराय खाना छोड दौड़कर द्वार पर आये। द्वार पर आते ही उन्होंने जो उडती हुई आंधी देखी और सुना कि पट्टावत हाथी बिगड गया है तो दौडे हुए उसी तूफान की ओर चल पडे, जहाँ हाथी लोहे की जजीर सूड मे दबाये प्राचीन उद्जन बम चला रहा था।

जैसे ही चामुण्डराय हाथी के सामने आये, वैसे ही हाथी सूड ऊपर उठाकर जजीरें फेंकता हुआ चामुण्डराय पर झपटा। चामुण्डराय भी प्राणो का मोह छोड भूखे शेर की तरह हाथी से युद्ध के लिये कटिबद्ध हो गये।

हाथी के सूड की जजीर अपने पैरो से दबा एक हाथ से सूड और एक हाथ से दांत पकड इस जोर से ऐंठे कि हाथी गिर पडा। और फिर जजीर हाथी की सूड से खीच सामन्त ने हाथी पर इस तरह पटक पटक कर मारी कि हाथी उठने की कोशिश कर कर के हार गया पर उठ न सका।

सामन्त ने जब देखा कि हाथी बेदम हो गया है लेकिन उसका नशा अभी तक नही उतरा तो वस्त्र के नीचे से हर समय साथ रहने वाला अपना खजर खीच हाथी को फाड डाला।

दिल्लीवासियो ने जब सुना कि वीरवर सामन्त चामुण्डराय ने बिगडे हुए खूनी हाथी पत्तावत को मार डाला तो सामन्त की जय बोलते हुए वहाँ आ गये जहाँ हाथी के प्राण ले उस काल के नृसिंह खडे हाँफ रहे थे।

वाणी वाणी पर सामन्त की प्रशसा के गीत गू ज उठे। जन जन ने फूलो की वर्षा से सामन्त को ढक दिया। हर एक का हृदय चामुण्डराय के व्यक्तित्व पर न्योछावर होने को उत्सुक था।

इधर सामन्त चामुण्डराय की वीरता पर पुष्प चढ रहे थे और उधर दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान का पारा गर्म हो रहा था। चौहान ने जब सुना कि चामुण्डराय ने हमारी इच्छा के विरुद्ध हमारे पत्तावत हाथी को मार डाला है तो वे आगबबूला हो गये। उन्होंने अगारे की तरह धधकते हुए कहा— "चामुण्डराय को हमारे सामने तुरन्त उपस्थित किया जाये।"

चौहान की आज्ञा होते ही सामन्त चामुण्डराय को तुरन्त दिल्लीपति के सामने उपस्थित होना पडा। सेनापति समझते थे कि महाराज हाथी के मरने मे प्रसन्न होकर सेवक को बधाई देगे, पर माथे मे बल देखते ही वे गम्भीर हो गये, अभिवादन कर ऐसे खडे रह गये जैसे कोई निर्दोष दोषी प्रमाणित होने पर सहमा सा रह जाता है।

पृथ्वीराज ने आखे लाल करते हुए कहा— तुमने पत्तावत हाथी को किसकी आज्ञा से मारा ?

चौहान ने कुछ ऐसी तेजी से कहा कि सामन्त भी आवेश मे आ गये, किन्तु उन्होंने शान्ति से कहा— आतमा और ईश्वर की आवाज़

से ही मैंने प्रजा-हित के लिये हाथी को मारा है। यदि हाथी को न मारा जाता तो वह दिल्ली को नष्ट कर डालता। इतनी ही देर मे उसने कितने ही वच्चे, स्त्री और पुरुषो को कुचल डाला।

पृथ्वीराज— कुछ भी था, लेकिन सामन्त को किसी भी प्रकार उसे शान्त करना चाहिये था। ऐसे अमूल्य धन को मिटाकर तुमने राजकीय अपराध किया है।

चामुण्डराय— अपराध किया है तो दण्ड दे दीजिये ! मैंने आज तक दिल्ली की सेवा के लिये स्वय को मिटा डाला। महाराज के लिये हर समय शूलो पर सोता रहा। धरती और आकाश साक्षी हैं कि चामुण्डराय जिया है तो दिल्ली के लिये और जियेगा तो दिल्ली के लिये।

पृथ्वीराज— हम देख रहे हैं कि तुम्हारा घमण्ड दिन प्रति दिन वढता जा रहा है। तुम समझते हो कि पृथ्वीराज हमारी भुजाओं के सहारे से राज्य करता है। किन्तु तुम्हे पता होना चाहिये कि पृथ्वीराज को केवल अपनी ही भुजाओ का भरोसा है। उसे किसी दूसरे का सहारा नही चाहिये। तुमने हमारे इतने प्रिय हाथी को मार कर हमारी इच्छा का खून किया है। और भी तुमने हमारी इच्छा के विरुद्ध हमसे विना पूछे कितने ही कार्य किये हैं। हो सकता है तुम अन्दर ही अन्दर कोई गहरा जाल विछाते जा रहे हो। यह भी हो सकता है कि तुम किसी दिन चौहान पर ही आक्रमण कर वैठो। इसलिये हम तुम्हे वन्दी करते हैं। आज से तुम सेनापति नही, पृथ्वीराज के वन्दी हो।

कहते हुए चौहान ने सैनिको को आज्ञा दी, "चामुण्डराय को वन्दी वनाकर किले की लोह कोठरी में डाल दो!"

आज्ञा सुनते ही सैनिक चामुण्डराय को पकड़ने के लिये आगे वढे पर चामुण्डराय ने मुस्कराते हुए करुण वाणी मे कहा— "सौभाग्य है

मेरा! जीवन भर की सेवाओं का इससे सुन्दर परिणाम और क्या मिल सकता था! इन सैनिकों को कष्ट देने की क्या आवश्यकता है, अपने महाराज की आज्ञा पर तो मैं स्वय ही अपने हाथों मे जजीरे डाल लूंगा। जिनका इगित पाते ही ये हाथ तूफानो को भी तराश डालते थे, क्या उनकी आज्ञा से ये हाथ स्वय नही बँध सकते? मुझे कारा की कठोर कोठरी मे डाल कर यदि महाराज प्रसन्न हो सकते हैं तो मेरे लिये इससे बडा हर्ष दूसरा नही। किन्तु लोह कोठरी मे जाने से पहले एक विनती है महाराज! दिल्ली पर आँच न आने पाये। चामुण्डराय को चाहे जीवित जला देना पर चामुण्डराय के रक्त से सिची दिल्ली की फुलवारी का एक भी फूल नष्ट न होने पाये।

पृथ्वीराज— यह कह कर तुम यह कहना चाहते हो कि तुम न रहोगे तो दिल्ली चौहान के पास न रहेगी। चौहान की भुजाओं मे इतना बल है कि वह अकेला ही उन सबको मिटा सकता है जो दिल्ली की ओर आँख उठाना चाहेंगे। किसकी ताकत है जो चौहान की तलवार के सामने टिक सके? किसमे बल है जो मेरे बाणों की नोकों को मोड सकता है? तुम तो क्या, यदि मेरे हाथ में भाला न रहे, कटि मे तलवार न रहे और तुणीर मे तीर न रहे तो भी मैं किसी के वश मे नही आ सकता।

चामुण्डराय— ईश्वर ऐसा ही करे! मेरे महाराज का मस्तक किसी के भी सामने न झुके। जो गौरव दिल्ली की चोटी पर शताब्दियों से सर ऊँचा किये ससार को चुनौती दे रहा है वह महाराज पृथ्वीराज के हाथों और ऊंचा उठे, यही इस बन्दी की अभिलाषा है। बस, अब मुझे ले चलो, और डाल दो उन लोहे के सीकचों मे जिन में पडा पडा मै दिल्ली की श्रीवृद्धि के लिये ईश्वर से प्रार्थना करता रहूं। परम पराक्रमी महाराज पृथ्वीराज ने जीवन भर की सेवाओं के बदले कारागृह

से सुन्दर पुरस्कार और क्या हो सकता था! अब दया करो महाराज! मेरा सर चक्कर सा रहा है। मुझे ऐसे स्थान पर बन्द करा दो जहाँ से न मैं औरो को देख सकूं और न कोई मुझे देख सके। मैं सजा सहन कर सकता हूँ, पर आँखो से किसी को यह कहते नही देख सकता कि ये हैं वे सामन्त चामुण्डराय जिनको महाराज पृथ्वीराज ने घोर अपराध के बदले कारा का कठोर दण्ड दिया, या यह सुनूं कि ये हैं वे महाराज पृथ्वीराज जिन्होने स्वामीभक्त वीर सामन्त चामुण्डराय को सेवा के बदले बन्दीगृह मे बन्द कर दिया।

पृथ्वीराज— बहुत सुन चुका! चौहान ने एक साधारण सैनिक को इतना ऊँचा स्थान देकर अपने ही पैरो मे कुल्हाडी मारी। सैनिको! सोच क्या रहे हो? ले जाओ इस मदान्ध को और दुर्ग के गर्भ भाग वाले लोहे के पिंजरे मे डाल दो!

पृथ्वीराज ने दिल्ली के इस लासानी वीर को लोहे के पिंजरे मे डलवा दिया। प्रजा और अधिकारियो ने जब सुना कि पृथ्वीराज ने चामुण्डराय को पत्तावत हाथी के मारने के अपराधस्वरूप कैद कर लिया है तो वे विद्रोह के लिये तडप उठे। लेकिन दिल्ली के विनाश की कल्पना कर सामन्त कवि चन्द्रवरदाई और मन्त्री कृणवन्त ने बडे विवेक और त्याग से प्रजा की धधकती हुई आग को शान्त किया।

सामन्त चन्द्रवरदाई ने अपना आंसू पूंछते हुए मन्त्री कृणवन्त से कहा— "जान पडता है दिल्ली का पतन निकट आ गया। सारी सेना खप गई, किमास जैसे बुद्धिमान मन्त्री हमारे बीच से चले गये, सामन्त चामुण्डराय को अकारण ही बन्दी बना लिया गया, और राजकोप घटते घटते बहुत कम रहता जा रहा है। महाराज लाख समझाने पर भी नही समझते, न राजकाज देखते हैं, न किसी की चलने देते हैं। अब तुम ही बताओ कृणवन्त! हम क्या करें।"

कृष्णवन्त— जबसे संयोगिता के पैर दिल्ली में आये हैं, तब से दिल्ली का नाश होता जा रहा है। संयोगिता के रूप में दिल्ली की बर्बादी आई है। महाराज आज यदि किसी की सुनते हैं तो केवल संयोगिता की। और जो राजा नारी का दास हो जाता है, वह किसी न किसी दिन राज्य को खो बैठता है।

चन्द्रवरदाई— लेकिन फिर भी कोई उपाय तो सोचना ही पड़ेगा।

कृष्णवन्त— उपाय तो केवल एक सूझता है और वह यह है कि चलकर बड़ी महारानी चन्द्रागदा से सहायता ली जाये। वे सूझबूझ की महिला हैं, उनको दिल्ली से प्रेम है।

चन्द्रवरदाई— तो फिर चलो!

चन्द्रवरदाई और कृष्णवन्त बात की बात में महारानी चन्द्रागदा के पास आ पहुँचे। महारानी ने राजमन्त्री और राजकवि को सत्कार से बैठाया।

मन्त्री या कवि कुछ कहें इससे पहले ही महारानी ने आँचल से अपनी आँखें पोछते हुए कहा— दिल्ली और महाराज को बचाइये, सब कुछ स्वाह होना चाहता है।

चन्द्रवरदाई— यही तो हम पूछने आये हैं कि क्या करें। हर दिशा अँधेरी होती जा रही है।

चन्द्रागदा— मैं तो स्वयं अँधेरे में हूँ, और मुझे दुःख है कि मेरी ही भूल से किमास जैसे बुद्धिमान हमसे विदा हो गये। ईर्ष्या में नारी अंधी हो जाती है। मैं नहीं जानती थी कि महाराज करनाटकी के साथ साथ किमास को भी तीर का निशाना बना देंगे।

कृष्णवन्त— बीती कहानी को दोहराने से क्या लाभ! अब तो

यह बताइये कि सयोगिता के जाल से महाराज कैसे छुटे ? किस प्रकार राजकाज की ओर उनका ध्यान लगाया जाये ?

चन्द्रागदा— सयोगिता के रहते अब यह सम्भव नही। उस नागिन ने महाराज को चारो ओर से लपेट लिया है। सयोगिता के महल तक अब परिन्दा भी पर नही मार सकता। उसने महाराज को अपने रूप और यौवन की ऐसी मदिरा पिलाई है कि महाराज मूच्छित से हर समय उसी के पास पड़े रहते हैं।

चन्द्रवरदाई— तो इस इन्द्रजाल से छूटने का कोई उपाय ?

चन्द्रागदा— उपाय केवल एक है और वह यह कि किसी भी गुप्त रीति से राजहित के लिये सयोगिता को सदा के लिये सुला दिया जाये। फिर न होगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी।

चन्द्रवरदाई— लेकिन इससे भारी अहित भी हो सकता है। यदि रहस्य खुल गया तो महाराज अपने ही हाथो से अपना विनाश कर लेगे। और यदि भेद नही भी खुला तो हो सकता है कि सयोगिता के अभाव मे महाराज राजपाट छोड दे। मनुष्य राज्य का अभाव सह सकता है, प्रणय का अभाव नही सहा जा सकता।

चन्द्रागदा—यदि कविता करनी है कविराज ! तो कटि से तलवार निकाल फेंक दो। तुम कवि भी हो और सामन्त भी ! इन दो नौकाओ में पैर रखने से यात्रियो को पार नही उतार सकोगे। यदि तुमने नागिन नही मारी, तो नागिन तुम सब को डस लेगी।

कृष्णवन्त— महारानी ठीक कहती हैं, किन्तु नागिन को मारा कैसे जाये बडी रानी ! वहाँ तक पहुँचना तो आज असम्भव सा है।

चन्द्रागदा— जब से करनाटकी की मृत्यु हुई है, तब से सयोगिता बहुत सतर्क हो गई है। मै तो किसी भी प्रकार वहाँ तो क्या, वहाँ

के आस पास भी नहीं पहुँच सकती। और न वहाँ तक कोई भी पुरुष ही पहुँच सकता है। महाराज ने आज्ञा निकाल दी है कि मेरे अतिरिक्त कोई भी पुरुष चाहे वह बालक ही क्यों न हो, यहाँ तक न आने पाये। पुरुष या अन्य स्त्री भी क्या, वहाँ तक तो किसी सन्देश का पहुँचना भी असम्भव है। हर द्वार पर संयोगिता ने अपनी विश्वस्त सेविकाएं छोड़ी हुई हैं और उनमें से बहुत सी ऐसी भी हैं जो मेरे आस-पास-सूंघती फिरती हैं।

चन्द्रबरदाई— बड़ी उलझन बन गई है। महाराज जैसे पराक्रमी को एक स्त्री ने किस तरह परास्त किया है। वास्तव में नारी पुरुष की सबसे बड़ी दुर्बलता है। लेकिन दुर्बलता तब सबलता भी हो जाती है जब प्रणयरूपिणी शक्ति-रूपा हो जाती है। इतिहास में ऐसी नारियों की कमी नहीं जो समय पड़ने पर अपने स्वामी और देश की शक्ति हुई हैं। सावित्री तो अपने पति को यमराज तक से छीन लाई थी।

चन्द्रांगदा— आदर्श के पात्र उंगलियों पर गिने जाने वाले होते हैं। इन पहेलियों से क्या? आप राज-काज सभालिये! यदि मुझे प्रयत्न में सफलता हुई तो महाराज इस नागिन से भी छूट जायेंगे।

कृष्णचन्द— क्या संयोगिता को समझाकर हित नहीं हो सकता?

चन्द्रांगदा— कैकयी को सबने कितना समझाया था, पर क्या कुछ परिणाम निकला?

कृष्णचन्द— हम तो आप तक बात पहुंचा चुके, अब जितनी सहायता आप कर सकें, करें! हमसे जो कुछ होगा हम करेंगे ही।

कहते हुए चन्द्रबरदाई के साथ मन्त्री कृष्णचन्द अपने कक्ष में आ गये। जैसे ही वे कक्ष में आये वैसे ही एक कलचारी ने आकर सूचना

दी, "बघेलो ने फिर स्वतन्त्र राज्य की घोषणा कर दी है मन्त्री जी ! हाथ मे आया हुआ गुजरात फिर हाथ से निकल गया।"

ठण्डी सास भरते हुए कृष्णवन्त ने कहा— जब बुरा समय आता है तो भुने तीतर भी उड जाते हैं। समय पडने पर सगे भी शत्रु हो जाते हैं। आज हमारी ही बुद्धि हमारी वैरिन बन गई है। किन्तु कुछ भी हो, एक बार तो प्रलय से भी लडेंगे। होनी से हार मान कर जो बैठ जाते हैं वे कायर हैं।

सामन्त, कवि ! अब तुम्हे कविता छोड कर तलवार पकडनी होगी, दिल्ली के चारो ओर इस प्रकार कठोर पहरा लगवा दो कि कोई भी बात बाहर न जाने पाये। सेना का सगठन करो और दुर्ग के चारो ओर अजेय सेना के बचे हुए सैनिको का घेरा डलवा दो ! और जहाँ तक हो सके रूठे हुओ से अधिक से अधिक मित्रता बढाओ। यह समय ऐसा नही है कि दुश्मन से भी कुछ कहा जाये। जब तक खोये हुए दिन वापिस न आ जायें तब तक मौन ही रहना ठीक है।

चन्द्रवरदाई— लेकिन कन्नौजपति जयचन्द के कानो तक यदि तनिक भी भनक पहुँच गई तो न जाने क्या हो जाये।

कृष्णवन्त— इस समय सबसे बडी आवश्यकता इसी बात की है कि अपनी कमजोरियो को छिपा कर रखा जाये। यदि किसी प्रकार कन्नौज के हाल-चाल का पता मिलता रहे तो बहुत ही अच्छा है।

चन्द्रवरदाई— वेश बदल कर किसी विश्वस्त को भेजे देता हूँ।

कृष्णवन्त— तो तुरन्त यह करो ! हमें कन्नौज की हर गतिविधि से परिचित रहना चाहिये।

चन्द्रवरदाई ने अपने निवास पर आ अपने पुत्र जल्हण को बुलाकर कहा— तुमको कल कन्नौज जाना है। आज ही तुम कन्नौज-नरेश

जयचन्द की प्रशसा मे कुछ छन्द लिख लो ! छन्द बेजोड होने चाहिये । छन्दो मे पृथ्वीराज की बुराई और जयचन्द के गुणो का चित्रण होना चाहिये, चाहे यह चित्रण तुम्हे श्लेष से ही करना पडे ।

जल्हण— अपने महाराज की निन्दा और जयचन्द की प्रशसा करना जल्हण के लिये ऐसे ही है जैसे तलवार की धार पर चलना । लेकिन इसमे अवश्य ही हमारे महाराज का कोई गहरा हित पिताजी ने सोचा होगा । कहिये, वहाँ जाकर मुझे क्या करना होगा ?

चन्द्रवरदाई— जब तुम जयचन्द के गुणगान कर उनके प्रिय बन जाओ तो यह जानने का यत्न करना कि जयचन्द को दिल्ली की किस किस तात्कालिक घटना का पता है, और वह क्या कर रहा है । उसकी हर गतिविधि का पता हमको होता रहना चाहिये । और जिस समय भी तुम अपने ऊपर कोई खतरा देखो उसी समय वहा से भाग निकलना ।

जल्हण— लेकिन पृथ्वीराज रासो की रचना जो आप कर रहे है उसका क्या होगा ?

चन्द्रवरदाई— यह समय रासो की रचना का नही है, महाराज पृथ्वीराज और दिल्ली की रक्षा का है । रासो की रचना तो अब तभी होगी जब दिल्ली सकटमुक्त हो जायगी । देखो, कैसी चतुरता से कन्नौज का भेद निकालते हो, किसी को कानो कान भी असलियत का पता न चलने पावे ।

जल्हण— आपके आशीर्वाद से ऐसा ही होगा पिताजी !

चन्द्रवरदाई— लेकिन यह ध्यान रहे कि दिल्ली का कुछ भी भेद उनको नही मिलना चाहिये ।

जल्हण— मै भेद लेने जा रहा हू, भेद देने नही पिताजी !

चन्द्रवरदाई--- तो जाओ, ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे !

रात भर जल्हण जयचन्द की प्रशस्ति लिखते रहे और फिर दूसरे दिन सवेरे उन्होंने कन्नौज की राह पकडी। कन्नौज जाकर वे एक मन्दिर मे ठहरे। अपनी वाक्पटुता और काव्य-गुण से उन्होंने दो चार दिन मे ही अपना प्रभाव जमा लिया।

जल्हण में काव्य-रचना का गुण तो था ही, साथ ही कण्ठ भी वहुत ही सुरीला था। उन्होंने कवितायें जो गा गा कर सुनाईं तो उनके आसन पर श्रोताओं की भीड लगने लगी। काव्य-रसिकों की तो बात ही क्या थी, जो काव्य-प्रेमी नही थे उनको भी जल्हण के काव्य मे रस आने लगा। वे भी भौंरो की तरह जल्हण के काव्य-कमलो पर मँडराने लगे।

पहुँचते पहुँचते जल्हण के काव्य-गुण की प्रशसा कन्नौजपति जयचन्द के कानो मे भी पहुँची। प्रशसा पर प्रशसा सुनकर वे भी जल्हण का काव्य सुनने को उत्सुक हो उठे। वास्तव मे कला मे जो तरास है वह तलवार मे भी नही। तलवार की तरास से मृत्यु मिलती है और कविता की तरास से जीवन। तलवार टुकडे करती है और कविता टूटे हुओ को जोडती है। तलवार मे भिन्नता है और इसमें आकर्षण।

काव्य के आकर्षण ने जयचन्द को लट्टू वना दिया। कन्नौज के दुर्ग मे जल्हण के आते ही जयचन्द ने वडी आवभगत की। जल्हण ने भी कन्नौज नरेश के वे गुण गाये कि महाराज झूम उठे।

वस्तुत. किसी की प्रशसा करके जितना उसे ठगा जा सकता है उतना और किसी तरह नही। अपनी प्रशसा सुन कर जो अपनी वास्तविकता को भूल जाते है वे मूर्ख हैं। अपनी निन्दा सुन कर मनुष्य अपने आप को सँभालता है और प्रशसा सुनकर स्वयम् को खो देता है। प्रशसा सुनकर प्रसन्न होना एक वडा अवगुण है।

जयचन्द ने एक राजसेवक की ओर सांकेतिक दृष्टि से देखा और तुरन्त ही जल्हण के निवास और स्थान का सुन्दर प्रबन्ध हो गया।

दो चार दिन मे ही जल्हण जयचन्द पर ऐसे छा गये कि वे जब चाहते तभी जयचन्द के पास बिना रोक टोक चले जाते।

एक दिन जब जल्हण ने महराज जयचन्द के कक्ष मे प्रवेश किया तो जयचन्द ने बडे आदर से उन्हे बुलाते हुए कहा— 'आओ कवि! आओ, देखो ये कुरियल के राजा माहिलराज आये हुए है, हमारे सखा हैं और बडे हितैषी हैं।'

और फिर माहिलराज की तरफ देखते हुए बोले— ये है कवि जल्हण, सिद्धहस्त कवि हैं, कण्ठ भी क्या पाया है कि कोयल की कूक भी इनके कण्ठ के सामने फीकी है।

माहिल— महाराज जयचन्द के राज्य मे वह कौन सी ऐसी चीज ह जो निराली नही है! यहाँ की हर बात अनोखी है। अच्छा तो कविराज की कविता तो फिर किसी समय सुनेगे। इस समय तोआवश्यक बाते कर ले। कविराज! आशा है मेरी धृष्टता को क्षमा करेगे और फिर किसी समय आने का कष्ट कर हमे कृतार्थ करने की कृपा करेगे।

प्रदर्शन मे 'हाँ हाँ' और मन ही मन मे कुढते हुए जल्हण कक्ष से बाहर निकल आये, और मुँह की मुह मे कहने लगे— "यह तो बडा घाघ जान पडता है। बात की बात मे हमे पत्ते की तरह उडा दिया। अवश्य ही इस समय कुछ रहस्य की बाते होनी है, किसी न किसी प्रकार सुननी चाहिये।"

सोचते हुए जल्हण चुपचाप दरवाजे से कान लगा कर खडे हो गये और उधर कक्ष मे बैठे हुए माहिलराज ने कहा— यह समय बहुत ही सुन्दर ह। वैसे तो दिल्ली पहले ही खोखली हो चुकी थी, पर

किसान की मृत्यु और चामुण्डराय के बन्दी होने से तो वहाँ अब कुछ रहा ही नहीं। प्रतिशोध लेने का यह अच्छा अवसर है। आप तुरन्त ही किसी को गजनी भेजिये। शहाबुद्दीन गोरी से मिलकर दिल्ली पर चढ़ाई करा देनी चाहिये और इधर से हम आक्रमण कर देंगे। बस चौहान का काम तमाम हो जायेगा और दिल्ली आपके हाथों में होगी। उसके बाद धीरे धीरे कन्नौजपति जयचन्द सारे भारत के सम्राट् बन जायेंगे।

जयचन्द— तो गजनी किसे भेजना चाहिये? मेरा विचार है लाखन को भेज दें।

माहिल— भेजना तो किसी विश्वस्त को ही चाहिये। लाखन [illegible] पुत्र है। वह वीर भी है और चतुर भी। पर उसका वहाँ [illegible] विरुद्ध है, इसलिये आप धर्मप्रकाश को भेज दें। वह बहुत [illegible] और विश्वस्त है। दूसरे लाखनसिंह को यहाँ सेना संगठन [illegible] है। सेना की बागडोर उसी के हाथ में रहनी चाहिये।

जयचन्द— तुम ठीक कहते हो, मैं अभी धर्मप्रकाश को बुलाता हूँ।

[illegible] ने जो सुना कि मैं अभी धर्मप्रकाश को बुलाता हूँ, तो वह दौड़ कर दुर्ग के बीच वाले उपवन में आकर टहलने लगी।

महाराज जयचन्द ने धर्मप्रकाश को बुलाया और कहा— तुम गजनी जाने के लिये तैयार हो जाओ। वहाँ जाकर शहंशाहे गजनी शहाबुद्दीन गोरी से हमारा आदाब बोलना और कहना कि कन्नौज के राजा जयचन्द ने आपसे दोस्ती का हाथ मिलाया है, और कहा है कि [illegible] पृथ्वीराज ने आपका [illegible] अपमान किया [illegible]। हम चाहते हैं कि पृथ्वीराज का सर [illegible]।

दिल्ली पर चढाई करने का यह सुनहरी मौका है। आपसे जो खिराज पृथ्वीराज ने वसूल किया है, उसकी पाई पाई चुकाने का इससे अच्छा अवसर हाथ नही आयेगा। आप उधर से फौज लेकर तुरन्त चले आये और हम इधर से कन्नौज की सारी सेना लेकर आपका साथ देने को तैयार खडे हैं।

दिल्ली इस समय बिल्कुल खाली पडी हे। भारतवर्ष का कोई भी राजा पृथ्वीराज का साथ देने नही आयेगा। पृथ्वीराज अब बिल्कुल अकेले हैं, उनके बुद्धिमान मंत्री किमास मर चुके हैं और अपने वीर योद्धा चामुण्डराय को पृथ्वीराज ने कैद कर लिया है। बार बार युद्धो मे बहुत सी सेना भी खप चुकी है। अब अकेले पृथ्वीराज कुछ गिने चुने सामन्त और सैनिको को साथ लेकर कहाँ तक लड सकते हैं!

जितनी जल्दी हो सके आप चढाई कर दीजिये, हमारी और आपकी सन्धि की केवल एक शर्त है कि पृथ्वीराज को परास्त करने के बाद दिल्ली की लूट आपकी और दिल्ली का राज्य हमारा है।

उसके बाद हमारी और आपकी गहरी दोस्ती बनी रहेगी। हम हमले मे आपका साथ देंगे।

देखो धर्मप्रकाश, कैसी चतुरता से शहाबुद्दीन को भडकाकर चढाई कराते हो! इसके बदले में तुम्हे मुंह मांगा इनाम मिलेगा।

धर्मप्रकाश— महाराज की हर सेवा के लिये यह सेवक प्रस्तुत है, किन्तु यदि महाराज क्षमा करें तो इतना निवेदन कर दूं कि विधर्मी और विदेशी की सहायता लेकर अपने घर के दुश्मन के नाश की कामना इतिहास में कभी सफल नही हुई। शकुनि ने भी यही सोचा था कि भाई भाइयो को लडाकर भारतवर्ष पर अपना अधिकार कर लूं, किन्तु कृष्ण की नीति से देश श्मशान तो बना पर विदेशियो के अधिकार में न आ सका। आज भी शकुनि जैसे सम्बन्धी इस देश में हैं, जो अपने

बहनोई से बदला लेने के लिये कालिंजर को खण्डहर बना कर अब दिल्ली की ईंट से ईंट बजवाना चाहते हैं। वहां के प्रतापी राजा परमाल तथा ऊदल और मलखान जैसे वीर सामन्त उसी आग में जल कर राख हो गये। नाहिलराज की विनाशक नीति हिन्दू राजाओं का नाश तो कर चुकी अब बीज तो नष्ट न होने दो! जो व्यक्ति अपने बहनोई से दगा कर सकता है वह हमारे महाराज से मैत्री निभायेगा, इसमें [illegible]।

धर्मप्रकाश— यदि यह विचार है तो उत्तम है। मैं गजनी जाने को प्रस्तुत हूँ। पर इसमें विश्वासघात नहीं होना चाहिये। मैं किसी भी दशा में देश में यवन-सत्ता स्वीकार नहीं करूँगा।

जयचन्द— यवनों के नाश के लिये ही तो यह षड्यन्त्र रच रहे हैं। तुम महाचण्डी का स्मरण करते हुए जाओ! इस विकट नीति में शत्रु और यवनों का नाश होगा।

धर्मप्रकाश— जैसी भवानी की इच्छा होगी वही होगा। मैं कल प्रात गजनी चला जाऊँगा।

जयचन्द से आज्ञा मिलते ही इधर जल्हण ने गाँव के बहाने दिल्ली को प्रस्थान किया, और उधर धर्मप्रकाश ने गजनी का पथ पकडा। मंज़िल पर मंज़िल पार करते हुए जल्हण दिल्ली आगये, और गज़नी दूर थी, इसलिये धर्मप्रकाश तेज़ अश्व पर सवार चलते ही रहे।

दिल्ली आकर जल्हण ने अपने घर पर ही श्वांस लिया। थकान जब कुछ कम हुई तो वे उस कमरे में गये जहाँ चन्द्रबरदाई पृथ्वीराज रासो की रचना छोड सेना सगठन का हिसाब किताब लगा रहे थे। जल्हण ने पिता को प्रणाम करके कहा— "चिनगारी लग चुकी है, आग किसी भी समय धधक सकती है। जयचन्द और उरियल के राजा माहिलराज मिलकर भयानक कुचक्र रच चुके हैं। ये विधर्मियो को सहायता देकर दिल्ली पर आक्रमण कराना चाहते हैं। कन्नौज से पत्र लेकर एक दूत गज़नी के लिये प्रस्थान कर चुका है। जयचन्द हमारे महाराज से प्रतिशोध लेने के लिये और दिल्ली पर अपना राज्य करने की इच्छा से गज़नी सुलतान शहाबुद्दीन गोरी से मिल गया है। जयचन्द ने दूत से कहलाया है कि 'दिल्ली मे आजकल अराजकता फैली हुई है। चौहान पर हमला करने का यह सुनहरी अवसर है। दिल्ली बिल्कुल खाली है, हम आपकी सहायता करेंगे। जीत के बाद दिल्ली की लूट तुम्हारी और दिल्ली का राज्य हमारा। इसके बाद भी जयचन्द और गोरी की गहरी दोस्ती बनी रहेगी और वह दिन दूर नही होगा जब हम और तुम मिलकर दुनिया मे अपना झडा गाड देंगे।'

चन्द्रबरदाई— और कन्नौज की सेना शक्ति का क्या हाल चाल है?

जल्हण— बहुत अच्छा हाल चाल है। लाखनसिंह की देख रेख मे एक विशाल दृढ सेना का सगठन कन्नौज मे है। आर्थिक दृष्टि से भी कन्नौज फल फूल रहा है। स्वामीभक्ति भी वहाँ खूब है। अस्त्र-शस्त्र और पशु धन भी वहाँ बढता ही जा रहा है।

चन्द्रवरदाई— क्या महाराज पृथ्वीराज के प्रति उनकी दुर्भावना किसी प्रकार सद्भावना में भी बदली जा सकती है ?

जल्हण— नहीं, वे हर सम्भव और असम्भव उपाय से महाराज पृथ्वीराज का विनाश चाहते हैं।

चन्द्रवरदाई— जो गैरों की सहायता से घर की लडाई के पीछे अपनों का विनाश चाहता है एक न एक दिन वह भी मूड पकड कर रोता है।

से समाचार मिला है कि जयचन्द यवनो से मिल कर दिल्ली पर टूटने वाला है। अभी अभी जल्हण सीधे कन्नौज से चले आ रहे हैं।

कृष्णवन्त— तो मुझे तो केवल एक ही उपाय सूझता है, और वह यह कि राव समरसिंह जी को बुलाया जाये। चौहान पर यदि कुछ प्रभाव है तो केवल उनका ही। साथ मे बहिन प्रथा को भी बुला लिया जाये तो अच्छा है। हमारे महाराज अपनी बहिन प्रथा की बात इसी प्रकार नही टालते जिस प्रकार कोई भक्त अपने भगवान की बात नही टालता। चित्तौड की महारानी प्रथा वीरागना और समझदार हैं।

चन्द्रबरदाई— वे तो आजकल अजमेर हैं। तुरन्त उन्हे बुलाने के लिये किसी को भेजो जिससे कि बादल बरसने से पहले छत पाटी जा सके।

इधर द्रुतगामी दूत राव समरसिंह जी को बुलाने के लिये दिल्ली से चला, उधर पथरीले पथ और पहाडी रास्तो को पार करता हुआ कन्नौज का दूत गज़नी आ पहुँचा। गज़नी की इमारतो, सडको और आदमियो को आश्चर्यचकित सा देखता हुआ वह शहाबुद्दीन गोरी के किले के पास आकर रुका और दर्वाजे पर खडे लम्बे चौडे बूढे पठान पहरेदार को देखता हुआ बोला— 'शहशाहे गज़नी से बोलो कि हिन्दुस्तान से कन्नौज के राजा जयचन्द ने एक दूत भेजा है जो आपके दर्शन करना चाहता है।'

द्वारपाल फ़र्शी सलाम झुकाता हुआ बोला— 'बादशाह सलामत का हुकुम है कि जिसे भी मिलना हो वह सिर्फ आठ बजे से दस बजे तक मिल सकता है। इस वक्त वे दीवाने खास मे किसी खास मसले पर बातचीत कर रहे हैं।'

धर्मप्रकाश— 'मै तुम्हारे बादशाह के लिये एक बहुत बडी खुशखबरी

चन्द्रवरदाई— क्या महाराज पृथ्वीराज के प्रति उनकी दुर्भावना किसी प्रकार सद्भावना मे भी वदली जा सकती हे ?

जल्हण— नही, वे हर सम्भव और असम्भव उपाय मे महाराज पृथ्वीराज का विनाश चाहते हैं।

चन्द्रवरदाई— जो गैरो की सहायता से घर की लडाई के पीछे घरको का विनाश चाहता हे एक न एक दिन वह भी मूड पकड कर रोता हे।

जल्हण— अतीत को मनुष्य भूलना चाहता हे, वर्तमान मे वह सुख के लिये तडपता है और भविष्य उसका चिन्तामय रहता हे। पर इस दार्शनिक उधेड बुन से हमे इस समय क्या लेना। इस समय तो दिल्ली को आने वाली आपत्तियो से वचाना है।

चन्द्रवरदाई— सोच तो मैं भी यही रहा हूँ। चलो, मन्त्री कृणवन्त के पास चलते हैं, उनके परामर्श से ही प्राणो की बाजी लगाकर भी अपने सखा महाराज पृथ्वीराज और अपनी दिल्ली की रक्षा करेंगे।

जल्हण को साथ ले चन्द्रवरदाई मन्त्री कृणवन्त के कक्ष मे आ गम्भीरता से वैठते हुए बोले—महाराज महल मे सो रहे हैं और आग सिर पर आ पहुँची है। दिल्ली के चारो ओर भयकर चिनगारियाँ विछ चुकी हैं। शत्रु आक्रमण के वाजे वजाता हुआ कानो तक आ गया हे और हम सो रहे हैं!

कृणवन्त— इस प्रकार दु ख मान कर रोप करने से क्या होगा! कोई उपाय वताओ जिससे कि महाराज की नीद खुल सके।

चन्द्रवरदाई— नीद तो तव खुलेगी जव जयचन्द और गोरी दिल्ली को लूटते हुए हम सव को जीवित जला देगे। कन्नोज से गुप्त रीति

से समाचार मिला है कि जयचन्द यवनो से मिल कर दिल्ली पर टूटने वाला है। अभी अभी जल्हण सीधे कन्नौज से चले आ रहे हैं।

कृष्णवन्त— तो मुझे तो केवल एक ही उपाय सूझता है, और वह यह कि राव समरसिंह जी को बुलाया जाये। चौहान पर यदि कुछ प्रभाव है तो केवल उनका ही। साथ मे बहिन प्रथा को भी बुला लिया जाये तो अच्छा है। हमारे महाराज अपनी बहिन प्रथा की बात इसी प्रकार नही टालते जिस प्रकार कोई भक्त अपने भगवान की बात नही टालता। चित्तौड की महारानी प्रथा वीरागना और समझदार हैं।

चन्द्रबरदाई— वे तो आजकल अजमेर हैं। तुरन्त उन्हे बुलाने के लिये किसी को भेजो जिससे कि बादल बरसने से पहले छत पाटी जा सके।

इधर द्रुतगामी दूत राव समरसिंह जी को बुलाने के लिये दिल्ली से चला, उधर पथरीले पथ और पहाडी रास्तो को पार करता हुआ कन्नौज का दूत गज़नी आ पहुँचा। गज़नी की इमारतो, सडको और आदमियो को आश्चर्यचकित सा देखता हुआ वह शहाबुद्दीन गोरी के किले के पास आकर रुका और दर्वाज़े पर खडे लम्बे चौडे बूढे पठान पहरेदार को देखता हुआ बोला— 'शहशाहे गज़नी से बोलो कि हिन्दुस्तान से कन्नौज के राजा जयचन्द ने एक दूत भेजा है जो आपके दर्शन करना चाहता है।'

द्वारपाल फर्शी सलाम झुकाता हुआ बोला— 'बादशाह सलामत का हुकुम है कि जिसे भी मिलना हो वह सिर्फ आठ बजे से दस बजे तक मिल सकता है। इस वक्त वे दीवाने खास मे किसी खास मसले पर बातचीत कर रहे हैं।'

धर्मप्रकाश— 'मै तुम्हारे बादशाह के लिये एक बहुत बडी खुशखबरी

लेकर आया हूँ। खबर सुनते ही वे बागबाग हो जायेंगे और तुम्हें बहुत बड़ा इनाम देंगे। और लो यह कन्नौज के इत्र की शीशी हम तुम्हें दोस्ती मे देते हैं। यह हम बादशाह सलामत के लिये लाये थे, पर लो तुम ही इससे जन्नत का मजा लूटो! इसकी खूशबू से तुम तरोताज़ा हो जाओगे, इसकी सुगन्ध से बूढा जवान हो जाता है।'

बूढे पठान ने जो जवान होने की बात सुनी तो मुंह में पानी भर आया। इत्र की शीशी लेकर उसने जेब मे रखी और यह कहता हुआ दीवाने खास की ओर चल पडा कि 'आप यहाँ इन्तज़ार कीजिये, मैं बादशाह सलामत से हुकुम लेकर अभी आता हूँ।'

द्वारपाल ने दीवाने खास में पैर से सर तक हाथ लेजा लेजा कर शहशाहे गज़नी का आदाब बजाते हुए कहा— 'हिन्दुस्तान से कन्नौज के राजा जयचन्द ने एक सफ़ीर भेजा है। इजाजत हो तो आने दू ?"

शहाबुद्दीन ने कुतुबुद्दीन की ओर देखते हुए कहा— क्या अभी और यहीं आये हुए सफीर को बुला ले ?

कुतुबुद्दीन— नुकसान क्या है, बुला लेना चाहिये।

शहाबुद्दीन ने द्वारपाल को हुकुम दिया कि दूत को बाइज्जत लिवा लाओ।

द्वारपाल खुश होता हुआ दर्वाजे पर आया और नखरे दिखाता हुआ कहने लगा— जनाब के लिये मुझे सुलताने गजनी की ज़िन्दगी में पहली बार फटकार सुननी पडी है। बडी मुश्किल से हुजूर के लिये इस वक्त मिलने का वक्त लाया हूं। अब आप शान से पर फैलाते हुए चलिये, हम आपका इस्तक़बाल करते हुए बडी इज्ज़त से दीवाने खास में रौनक अफरोज़ जल्लेसुभानी, ज़ल्लेआसमानी शहशाहे गज़नी शहाबुद्दीन गोरी साहब से मिलवाते हैं।

द्वारपाल के साथ धर्मप्रकाश कुछ शकित और कुछ उदास से शहाबुद्दीन गोरी के दीवाने खास की ओर चल पडे। जैसे ही उन्होंने मुख्य द्वार पार किया, वैसे ही सुलतान की ओर से बडे बडे औहदेदार उनका स्वागत करने आये। फूलो की मालाओ से और तहजीब की बातो से अपनी ओर खीचते हुए गजनी के सरदार कन्नौज के दूत को शहशाहे गजनी के सम्मुख ले आये।

सुलताने गजनी के सामने आते ही धर्मप्रकाश ने सादर अभिवादन करते हुए कहा— "मैं कन्नौज से महाराज जयचन्द का फरमान लेकर आया हूँ। इजाजत हो तो अर्ज करूँ।"

गोरी— बडी खुशी से कहिये! हम सुनना चाहते हैं कि हमारे दोस्त जयचन्द ने हमारे लिये क्या खिदमत भेजी है।

धर्मप्रकाश— "महाराज ने अर्ज की है कि हम गजनी सुलतान शहाबुद्दीन गोरी से गहरी दोस्ती मानते हैं। हमे आपके साथ गहरी हमदर्दी है। हम चाहते हैं कि हम और आप मिलकर अपने राज्य को बढाये और अपने दुश्मनो से बदला लें। दिल्ली का चौहान पृथ्वीराज आप ही का दुश्मन नही, हमारा भी शत्रु है। वह आपसे खिराज लेता है और हम पर तो उसके बहुत से गुनाह हैं।

इस वक्त उससे बदला लेने का और दिल्ली पर कब्जा करने का बहुत अच्छा मौका है। दिल्ली इस वक्त बिल्कुल खाली पडी है। न वहाँ सेना है, न सामन्त और न चतुर मन्त्री। दिल्ली सोने चाँदी और माल से भरी पडी है। आप फौरन चढाई कर दीजिये। हम आपकी मदद के लिये हर तरह तैयार खडे है। सेना, रुपया और बुद्धि सब तरह से आपकी मदद करेगे, सिर्फ एक शर्त है कि जीत के बाद दिल्ली की लूट आपकी और दिल्ली का राज्य हमारा होगा।

लड़ाई के लिये बहाना भी मजबूत है कि जो कुछ खिराज आपने हमसे लिया वह वापिस लेने के लिये हमने चढ़ाई की है। यदि आपने इस समय हमला नहीं किया तो आपको जन्म भर पछताना पड़ेगा।"

दूत की बातें सुन कर गोरी के मुख पर मुस्कान दौड़ गई। लेकिन मन के भाव मन ही में छिपा वे विचारते हुए नम्रता से बोले—"महाराज जयचन्द का बहुत बहुत शुक्रिया। वे हमारे इतने हमदर्द हैं जितना कि हिन्दुस्तान में तो क्या दुनिया के तख्ते पर हमारा कोई दूसरा नहीं। लेकिन दिल्ली पर हमला करने से पहले हमें बहुत बार सोचना पड़ेगा। पृथ्वीराज चौहान की ताकत हम खूब जानते हैं। वह आदमी नहीं, देवदाना है। बिल्कुल फौज न होने पर भी वह अकेला ही मलिकुल्मौत है। वह तूफान की तरह टूटता है और बिजलियों की तरह तलवार चलाता है। उस लासानी बहादुर के सामने तलवार उठाने से पहले ही रूह फना हो जाती है। उसमें न जाने कितने हाथियों का बल है। वह एक ही साथ आँधी है, पानी है और आग है। इसलिये अच्छी तरह सोचना पड़ेगा।

और फिर यह भी बात है कि राजा जयचन्द और महाराज पृथ्वीराज चौहान आपस में भाई-भाई और रिश्तेदार हैं। अगर किसी वक्त खून ने जोश मारा तो वे हमारे दुश्मन भी हो सकते हैं। इसलिये हर बात पर अच्छी तरह गौर करने के बाद ही जवाब दिया जा सकता है। कहीं इस बार फिर नादानी में हमला कर बैठे और हार हुई तो कहीं गजनी से भी हाथ न धोना पड़े।"

धर्मप्रकाश— "कन्नौज के गहड़वाड़ों की ज़बान कच्ची नहीं होती। महाराज जयचन्द क़ौल-क़रार से कभी नहीं गिरते। हम प्राण दे देते हैं पर अपने वचन से नहीं फिरते। आपके लिये यह सुनहरी मौक़ा है। यह वक्त अगर निकल गया तो जिन्दगी भर पछताना पड़ेगा। आप

सोच लीजिये और खूब सोच लीजिये ! अपने हर मुसाहव से पूछ लीजिये ! मै दो दिन यही ठहरा हुआ हूँ। परसो आपका जवाब लेकर वापिस चला जाऊँगा।"

गोरी—"आप इतने आराम से गजनी की सैर कीजिये ! हम इतने आपस मे सलाह किये लेते हैं।"

कहते हुए गोरी ने एक सरदार की ओर देखा। देखते ही सरदार सामने आकर खडा हो गया और गोरी ने हुकुम दिया— "देखो यासीनखाँ, कन्नौज से आये हुए ये हमारे मेहमान हैं। तुम अच्छी तरह से इन्हे गज़नी की सैर कराओ और इनकी खूब खातिर करो। देखना कोई कसर न रह जाये। आपके दिल वहलाने के लिये अपने यहाँ से हर ज़रूरी चीज़ पेश की जाये। आपके ठहरने का इन्तज़ाम चमेली वाग वाले महल मे हो। आपकी टहल के लिये खूबसूरत से खूबसूरत इन्तज़ाम किया जाये। और आपकी दिल की खुशी के लिये तरह तरह के नाच-गानो का पुरज़ोर इन्तज़ाम किया जाये।

अच्छा मेहमान ! अब तुम गज़नी की वहार लो और हम अपने दर्वारियो से सलाह करते हैं। परसो तक जिस भी नतीजे पर पहुँचेंगे आपसे अर्ज़ कर देंगे।"

धर्मप्रकाश गज़नी की सैर करने लगे। पर जब मन किसी विशेष चिन्ता में डूबा रहता है तो कुछ भी अच्छा नही लगता। तरह तरह के प्राकृतिक दृश्य, रग-विरगी खूबसूरतियाँ, मस्ती भरे नाच-गाने सब उस समय फीके लगते हैं जब हृदय दुवधा में होता है।

वाज़ार मे, नाचघर मे, खेल-तमाशे में हर जगह धर्मप्रकाश के मस्तिष्क में केवल परसो घूम रही थी। वे रह रह कर यही सोच रहे थे कि कब परसो हो और कब अपने देश वापिस जाऊँ।

यद्यपि धर्मप्रकाश की खातिर खूब हो रही थी पर उनको ग़ज़नी का सामिष खाना देखकर भी अन्दर ही अन्दर उबकाई आती थी। अत वे केवल फल खाकर गुज़ारा कर खुश रहने की कोशिश मे थे।

वे उत्सुक थे कि कब गजनी का गुपचुप का बण्डल खुले और कब जयचन्द के लिये दिल्ली की बादशाहत निकले।

धर्मप्रकाश गोरी के फैसले की बाट देख रहे थे और शहाबुद्दीन गोरी ने दिल्ली पर हमले के सवाल पर विचार करने के लिये अपने मुसाहबो और साथियो को बुलाया।

गज़नी के किले के एक जर्क़-व़र्क़ कमरे मे गोरी के वज़ीर और सरदार इकट्ठे हुए। शहाबुद्दीन गोरी के दाये हाथ पर कुतुबुद्दीन ऐबक सजीदगी से बैठे है और बाये हाथ पर फौज के सरदार बख्तियार विराजमान हैं। और भी मल्लूखां, फैज़खां, फज़लुल हक, नूरुद्दीन आदि कितने ही वज़ीर अफसर गभीरता मे सजे हुए हैं।

सबसे पहले कुतुबुद्दीन ने मौन भग किया। सबका ध्यान अपनी ओर खीचते हुए सिपहसालार ने कहा— "वह वक्त आ गया है जब हमे अपने मालिक का नमक हलाल करना है। वे दाग अभी तक हम लोगो के माथे पर लगे हुए हैं, जो हम पृथ्वीराज से हार कर हिन्दुस्तान से लगा लाये थे। अपने मालिक को कैद करा कर जब हम तराइन के मैदान से भागे थे तब हमे डूब मरना चाहिये था, पर इस उम्मीद से जिन्दा रहे कि किसी न किसी दिन हिन्दुस्तान को फतह करेंगे। खुदा की बदौलत वह दिन खुदबखुद हमारे पास आ गया है जब हम हिन्दुस्तान को फतह कर सकते हैं। परवरदिगार की मेहरबानी से आज फतह हमारे दर्वाजे पर है। हमे खुश होना चाहिये कि हमारे मालिक के दिल का वह घाव भरने की दवा मिल गई जो हम सबके दिल मे खटक रहा था।

अगर आप हिम्मत से काम लें तो पृथ्वीराज का सर काट कर गज़नी के चौराहे पर टांगा जा सकता है।

आपकी खुशकिस्मती से दिल्ली बिल्कुल कमजोर और खाली पड़ी है, न वहाँ फौज है और न एका। एक एक करके सारे सामन्त खत्म हो चुके हैं और महाराज पृथ्वीराज महल में अपनी नयी दुलहन संयोगिता के पास पड़े रहते हैं। मतलब यह है कि दिल्ली में मर्दों का नहीं, औरतों का राज रह गया है।

इसके अलावा हिन्दुस्तान का हर राजा एक दूसरे के खून का प्यासा है। आपस में फूट इतनी जबरदस्त है कि भाई भाई का दुश्मन है।

कन्नौज का राजा जयचन्द जो पृथ्वीराज का मौसेरा भाई और ससुर है वह पृथ्वीराज चौहान का जानी दुश्मन है। वह हमें मदद देकर चौहान का नाश करना चाहता है। उसने एक सफीर से हमारे पास खबर भेजी है कि आप दिल्ली पर फौरन हमला कर दीजिये, हम तन मन धन से आपका साथ देने को तैयार हैं, हमारी फौज आपकी मदद के लिये तैयार खड़ी है।

हमारा साथ देकर दिल्ली और अजमेर के राजा पृथ्वीराज को हरा और मिटाकर वह दिल्ली की लूट हमें देना चाहता है और दिल्ली का राज्य खुद चाहता है। यह शर्त उसने साथ रखी है।

हमारी राय है कि इस वक्त हमें राजा जयचन्द की हर शर्त मान लेनी चाहिये और जयचन्द को खूब दोस्त बनाना चाहिये। और भी रास्ते के सभी राजाओं को हमें साथी बनाना है। हम तो किसी न किसी तरह सोने की चिड़िया को अपने कब्जे में करना चाहते हैं।

हार होती या जीत, हिन्दुस्तान पर हमला तो हम करते ही। दिल्ली पर जिहाद बोलने का इरादा तो हम पहले ही पक्का कर चुके थे। मौत या हिन्दुस्तान की फतह दो में से एक ही हम चाहते हैं।

तराइन के मैदान मे भाग आज तक हम इसी उम्मीद पर जीते रहे हैं। मालिक ने तब से अब तक तसल्ली से श्वास नहीं लिया, न वे खाते हैं न उनको नीद आती है।

अब हमारी ताकत पुरजोर है। गजनी से लेकर लाहोर तक हमारी नुमाइन्दा हकूमत है। फौज भी ज़रूरत से ज्यादा बढ चुकी है। घुड सेना, हाथी सेना और पैदल सेना सभी कुछ हमारे पास है। और वह तोप भी शायद तैयार हो जाये जो बुन्दू लुहार दो साल से हिन्दुस्तान की फतह के लिये बना रहा है।

ताकत हमारे पास है, भाई के दुश्मन भाई हमारे साथ हैं। ऐसा अनमोल मौका छोडना गुनाह है।"

गोरी— बहादुर और हमदर्द सिपहसालार जो कुछ कहते हैं वह बेहद ठीक है। अब जैसी आप की राय हो। क्यो बख्तियार ?

बख्तियार— मालिक की राय के सामने यह नाचीज़ क्या कह सकता है! गुलाम के लिये तो जो भी हुकुम हो बजाने को तैयार है। आप के इशारे की देर है कि दिल्ली तो क्या कलकत्ते तक फतह करता चला जाऊगा।

गोरी— तुम्हारे बाजुओ की ताकत तो गजनी के उस खजाने में भरी पड़ी है जो तुम्हारी लूटमार से मालामाल है। तुम जैसे बहादुर नौजवानो के दम पर ही तो हमारी उम्मीद टिकी हुई है। और तुम क्या कहते हो मल्लूखा !

मल्लू खा— हुज़ूर के हुकुम की इन्तजार कर रहा हू। खून खौल रहा है और तलवार मचल रही है। मालिक का बदला लेने के लिये यह गुलाम दिल्ली के खून का प्यासा है।

गोरी— क्यो फ़ौज खां !

फैजखां—विगुल बजने की देर है, दिल्ली के किले पर झण्डा गाड कर ही दम लूंगा।

गोरी—कहो नूर खां! तुम क्या कहते हो?

नूरखां—अपने मालिक के इकबाल पर चार चांद जडे देखने के लिये हिन्दुस्तान पर मुसलानो का राज्य चाहता हूँ। इसके लिये जान लेने और देने को तैयार हूँ।

गोरी—अब आखीर में आप बताइये फज़लुलहक साहब!

फज़लुल हक—मैं आप के बुलन्द इरादे की कद्र करता हूँ। लेकिन कही अगर इस बार भी हारे तो यवन सल्तनत हमेशा हमेशा के लिये खत्म हो जायेगी, क्योंकि पृथ्वीराज चौहान एक ही ऐसा शेर है जो लाखो भेडियो के लिये काफी है।

कुतुबुद्दीन—दुश्मन की तारीफ करके हमारे हौसले पस्त न करो हक साहब! हमने चौहान से लडाई हारी है, हिम्मत नहीं हारी। इस दफा हम बता देगे कि दिलेर और बहादुर कैसे होते हैं।

फजलुलहक—मुझे तो खुशी है कि मुस्लिम हकूमत सारी दुनिया मे फैले। अगर आपकी उम्मीद यकीनन है तो फिर खुदा का नाम ले बोलो 'अल्ला हो अकबर'! लेकिन जयचन्द से होशियार रहना, जो अपने भाई का दुश्मन है तुम्हारा भी दुश्मन हो सकता है।

कुतुबुद्दीन—हम जयचन्द की ताकत पर नही, अपनी ताकत पर हमला कर रहे हैं। बिल्ली के भागो अगर छीका टूट पडे तो हमारा क्या हर्ज ह! जयचन्द फिलहाल हमे मदद दे रहा है, हमसे मदद ले नहीं रहा। जब हमने कुछ मागेगा तब जैसा मौका होगा देखा जायेगा।

फज़लुलहक—जहाँ तक हो पहले कन्नौज की फौज दिल्ली की लडाई में काम आये तो अच्छा है।

कुतुबुद्दीन— ऐसा ही होगा। मोर्चाबन्दी बड़ी सियासत से होगी।

फजलुलहक— तो हिन्दुस्तान मे इस्लामी राज्य भी जरूर कायम होगा।

कुतुबुद्दीन— होगा और जरूर होगा।

बख्तियार— हुकुम हो तो कबायली, अफरीदी, महमूदी और वजीरी कौमो को जिहाद के लिये पैगाम भेज दूं, और मैं खूंखारो को लूट के माल का लालच देता हुआ लूटमार मचाता आगे बढूं ?

कुतुबुद्दीन— हाँ, तुम लूटते मारते, खाते पीते और कब्जा करते हुए बढते चले जाओ। तुम हमें अपनी बढी हुई फौज और माल के साथ लाहौर मे मिलना। वहाँ से हम बेशुमार फौज के साथ इकट्ठे चलेंगे।

गोरी— तो मैं कन्नौज के दूत से कहे देता हूँ कि हम महाराज जयचन्द के पूरी तरह साथ हैं, वे हमारी मदद के लिये तैयार रहें। हम एक तरफ से आते हैं वे दूसरी तरफ से दिल्ली को घेरें। जीत के बाद दिल्ली मे गले मिलेंगे।

सबने एक साथ ही कहा— बेशक कह दीजिये। लड़ाई और प्यार में हर तरह के हथियार अपनाये जाते हैं।

दूसरे दिन गोरी ने कन्नौज के राजदूत धर्मप्रकाश को सम्मान बुला कर कहा— राजा जयचन्द से जाकर कह दो कि गोरी को आपसे पूरी हमदर्दी है, ऐसे हमदर्द दोस्त को पाकर हम बहुत खुश हैं। बरसात के बाद जब मौसम ठीक होगा तो हमारी फौज दिल्ली के लिये कूच कर जायेगी। हमें राजा साहब की यह बात भी मंजूर है कि फतह के बाद दिल्ली की लूट हमारी और दिल्ली हमारे दोस्त की। अब हमारे दोस्त महाराज जयचन्द जिस तरह भी और जितनी भी मदद हमारी कर सकें करने की मेहरबानी करें। इस बार जीत सिर्फ उनकी बदौलत है।

धर्मप्रकाश— बेफिक्र रहिये गजनी सुलतान! कन्नौज वाले जिसके हो जाते हैं उसके लिये मर मिटते हैं। आपकी जीत के लिये हम अपना खून बहा देंगे। इजाजत हो तो अब जाऊँ?

गोरी— तबियत तो नहीं भरी, लेकिन यह वक्त आपको रोकने का भी नहीं है। नहीं तो जी तो यह चाहता है कि गजनी में हमारे मेहमान कुछ दिन रहें और जन्नत का मजा लूटें।

धर्मप्रकाश— सिपाही की ज़िन्दगी में मज़ा और आराम कहाँ शहंशाह! उसका जीवन तो तलवार की नोक पर टिका रहता है, न दिन अपना है न रात।

गोरी— कुछ दिन और ठहर जाओ। दिल्ली फतह के बाद दिन भी तुम्हारा होगा और रात भी तुम्हारी होगी। जिन्दगी इसलिये है कि खूब भोग भोगे जायें। जो प्यासा मरता है वह दोज़ख में जाता है और जो भोग कर मरता है वह जन्नत में मज़ा लेता है। ज़रा दिल की आग बुझा लो फिर तुम्हें इसी दुनिया में स्वर्ग दिखायेंगे।

धर्मप्रकाश— दिल की आग कभी किसी की नहीं बुझती। स्वर्ग की चिन्ता में बेकार ही मनुष्य गलता है। मनुष्य केवल कर्म के लिये बना है, और हमारा धर्म केवल कर्म करना है। हम कर्मठ हैं, वीर हैं और सच्चे हैं। बस यही हमारा स्वर्ग है। अच्छा अब विदा शहंशाहे गज़नी!

शहाबुद्दीन गोरी ने अपने सिपाहियों के पहरे में कन्नौज दूत को शान से सीमा तक पहुँचाया। सीमा पार कर धर्मप्रकाश मंजिल मंजिल चलते हुए कन्नौज आ पहुँचे।

जैसे ही कन्नौज की ज़मीन पर धर्मप्रकाश ने पैर रखा वैसे ही भीषण अट्टहास करते हुए मुण्डमालाधारी एक नर भूत ने उसे देखते हुए कहा, 'मैं प्यासा हूँ प्यासा, रक्त पीऊँगा रक्त।'

और फिर मुँह से आग उगलता हुआ वह न जाने कहाँ चला गया।

१३

"दिल्ली के कण कण मे आग दब चुकी है। चौहान का राज्य धूलधूसरित होने मे अब देर नही है। उसने जैसा किया था उसका परिणाम उसे मिलने को है। तुम्हारे बेटे और सामन्तो की मृत्यु का प्रतिशोध पृथ्वीराज के सर पर मृत्यु बनकर नाच रहा है राजन्!" माहिल ने पलग पर लेटे हुए वृद्ध राजा परमाल से कहा।

परमाल ने एक लम्बी श्वास लेकर माथे पर बल डालते हुए कहा—दिल्ली ही नही, सारा देश धूल धूसरित होने वाला है। हिन्दू राज्य इस देश से लोप होने जा रहा है। एक दिल्ली का किला क्या, वह दिन दूर नही जब धीरे धीरे हर हिन्दू राज्य के किले की नीव तक मिटा डाली जायेगी।

माहिल—यह नही हो सकता। जयचन्द चौहान का शत्रु है, देश का दुश्मन नही। हम पृथ्वीराज का विनाश चाहते है, हिन्दू राज्य का विनाश नही। शहाबुद्दीन गोरी से हमने सहायता ली है, उसके हाथो दिल्ली या देश नही बेचा है।

परमाल— क्यो मुझ बूढे को बहका रहे हो माहिल! दुनिया देखते देखते मेरे वाल सफेद हो गये। यह वह आग सुलगी है जो बुझाये नही बुझेगी, और जो शताब्दियो तक के लिये हिन्दू राज्य को स्वाहा करके रहेगी। व्यक्तिगत शत्रुता का अर्थ यह नही कि हम मुस्लिम आक्रान्ताओ से मिल अपनो को मिटा डाले।

माहिल— और अपनो का मतलब यह भी नही कि अपनो की ही लडकी को डाकुओ की तरह जवरदस्ती उठा ले जाकर उससे विवाह कर ले। चौहान अपना था, तभी तो उसने आपके वीर सामन्तो को धोखे से मार डाला। चौहान अपना था, तभी तो उसने आपके बेटे को जिसके हाथो मे ब्याह की मेहंदी रची हुई थी, मार डाला। वह शक्ति के मद मे अन्धा अपनो पर अत्याचार पर अत्याचार किये जा रहा है और आप शान्त ही रहने को कहते हैं!

परमाल— दूध देने वाली गाय की लात भी सहन की जाती है माहिल! दुनिया मे कौन वह मनुष्य है, जिसमे दोप नही है! पर चौहान मे दोप एक और गुण हजार हैं। वह तलवार का धनी यदि न होता तो दिल्ली के दुर्ग पर अब तक कभी का इस्लामी राजा का झण्डा लहरा चुका होता। उसकी ताकत ने यवन आक्रान्ताओ को खदेडा, उसी की तलवार ने मुसलमानो के जीते हुए भटिंडा आदि जिले छीने।

माहिल— वह घमण्डी चाहता ही नही था कि किसी की सहायता ली जाये। इसलिये और हिन्दू राजा चुप बैठे रहे।

परमाल— यह वहाना है। किसी के घर में जब आग लगती है तो वह बुझाने के लिये बुलाता नही फिरता, पडोसी स्वयम् बाल्टी ले ले कर आग बुझाने को दौड पडते हैं।

माहिल— जान पडता है बुढापे मे जीजाजी सठिया गये हैं, अथवा चौहान की तलवार से कांप कर कायर बन गये हैं। आश्चर्य है कि

आप उसकी प्रशंसा कर रहे हैं जिसने आप को स्वाह कर डाला। आप के बेटे ब्रह्मा की अतृप्त आत्मा स्वर्ग से चीख चीख कर कह रही है कि चौहान से मेरी हत्या का बदला लो। आप के सामन्तो के बलिदान आप से श्राद्ध मे चौहान का सर चाहते हैं।

परमाल— चाहते हैं, पर किसी मुसलमान की, आक्रान्ता की तलवार से नहीं, राजपूत की तलवार से। यदि जयचन्द मे साहस है तो वह दिल्ली पर अपने बल पर चढाई करे, परमाल उसकी सहायता करेगा। यह बूढा स्वयम् तलवार लेकर युद्ध मे कूदेगा। पर किसी विधर्मी और विदेशी की सहायता से मैं चौहान का नाश नहीं चाहता। चौहान परिमर्दिदेव का शत्रु है, वह देश का दुश्मन नहीं। और परमाल की शत्रुता भी राजपूतो की एक हठीली कुप्रथा के कारण है। यह दोष विवाह मे तलवारे चलाने की राजपूती कुप्रथा का है, चौहान का नहीं। समाज के दोषो का उत्तरदायित्व व्यक्ति को बनाना अन्याय है। हम अपनी रक्तिम आन पर कटते मरते हैं और फिर दूसरे को दोषी ठहराते हैं। जिस समाज की नींव मनोवैज्ञानिक शाश्वत सिद्धान्तो पर नहीं है, वह समाज किसी न किसी दिन ढह जायेगा।

माहिल— तो आप की दृष्टि मे सारे राजपूत दोषी हैं और चौहान निर्दोष!

परमाल— नहीं माहिल! मैं यह नहीं कह रहा। मेरे कहने का अर्थ यह है कि चौहान उतना ही दोषी है जितना कि राजा परिमर्दिदेव।

माहिल— यह आप से आपके राज्य का बुढापा कहला रहा है।

परमाल— हा माहिल, जवानी अन्धी होती है और बुढापा देख कर चलता है। जवानी नाले की तरह है और बुढापा हंस की तरह।

माहिल— नही बहिन! गोरी को तो केवल मूर्ख बनाया जा रहा है, वास्तव में दिल्ली पर राज्य तो जयचन्द का होगा। शहाबुद्दीन की तो छल से मदद मात्र ली जा रही है। यह अच्छा अवसर है। महोबे को भी कन्नौज की सहायता करके लाभ उठाना चाहिये। कन्नौज से महोबे की पुरानी मित्रता है। इस समय कन्नौज के सहायक होकर हम चौहान से प्रतिशोध ले सकते हैं। तुम्हारे पुत्र ब्रह्मा और वीर सामन्त की अतृप्त आत्माएँ प्रतीक्षा कर रही हैं कि किस क्षण चौहान के रक्त से हमारा श्राद्ध हो, किस क्षण हम नरक से स्वर्ग मे जाये।

मालती— ठीक कहते हो भैया! मैं तुम्हारी बात मानने को तैयार हू। महोबे की मिट्टी चौहान के रक्त की प्यासी है, तुम उसका लहू लाने के लिये मेरा खून तक ले जा सकते हो।

परमाल जो अब तक चुप बैठे थे क्रोध से फडफडाते हुए बोले— चाहे महोवा राख मे मिल जाये, पर यह कभी नही हो सकता कि इतिहास में महोबे का नाम देशद्रोहियो मे लिखा जाये। राजा परमाल अपनो के हाथ से मिटना पसन्द करता है पर गैरो के हाथ से अपनो का विनाश नही देख सकता। राजा परमाल सच्चा चन्देल है, उसके माथे पर देशद्रोही होने का कलक कभी नही लग सकता। चाहे कोई भी साथ न दे, मैं अकेला तलवार लेकर चौहान की सहायता करूँगा।

"यह कभी नही हो सकता" माहिल ने तलवार म्यान से निकालते हुए कहा।

परमाल यद्यपि बूढे और अस्वस्थ थे पर तलवार सामने तनी हुई देख कर उन्हे आवेश आगया। उनके रक्त मे उबाल आया और वे शैया से उठकर खडे हो गये। उन्होने एक झटके के साथ दीवार पर टॅकी हुई तलवार उतार म्यान से खीचकर कहा— 'असभ्य! तेरी यह

सामर्थ्य ! तूने मुझे बूढ़ा समझ कर तलवार म्यान से खींच ली ! मैं बूढ़ा अवश्य हो गया हूँ पर मेरी रगों में राजपूती रक्त है, तेरा लहू पीने को मेरी भवानी में आज भी बहुत शक्ति है।'

कहते हुए वृद्ध परमाल ने तड़पकर तलवार का वार माहिल पर कर दिया, बहुत बचने पर भी तलवार उछटती हुई उसके माथे पर लगी और लहू चमक आया।

सँभल कर माहिल उलट कर वार करने ही वाला था कि मालती बीच में आकर खड़ी हो गई और घबराती हुई क्रोध में बोली— 'इस अन्धे आवेश में ही तो राजपूतों का सदैव विनाश हुआ। आपे में रहो माहिल ! यह न भूलो कि महोबा नरेश तुम्हारी बहिन के सुहाग हैं, और राजपूतनी अपने सुहाग के लिये जीवित चिता में जल जाती है। कहीं ऐसा न हो कि अपने पति के लिये एक क्षत्राणी को अपने भाई का रक्त पीना पड़े। यदि अब एक पैर भी बढ़ाया तो मेरी तलवार तेरे वक्ष के पार होगी।'

बहिन के हाथ में तलवार देखते ही माहिल ने तलवार म्यान में डाल ली और सिर झुकाकर कहने लगा— मैं लज्जित हूं बहिन !

मालती— लज्जित मेरे सामने नहीं, लज्जित तुम्हें अपने जीजा जी के आगे होना है। उनके पैर छू कर उनसे क्षमा मांगो ! यदि उन्होंने क्षमा कर दिया तो ठीक है, नहीं तो तुम समझ लेना कि तुम्हारे लिये बहिन और बहनोई सदा को मर गये। मेरे दरवाजे पर कभी पैर न रखना !

लज्जित होकर माहिल परमाल के पैरों पर गिर पड़ा। राजा ने उसे उठाते हुए कहा— 'यदि तुम नहीं चाहते तो जैसी तुम्हारी इच्छा।'

माहिल— मैं जो कुछ चाहता हूं उसमें मैं कहीं का राजा बनने

नही जा रहा हूँ। मेरे हृदय मे आग लगी हुई है, ब्रह्मा और सामन्तो की आत्माएँ सोते जागते मेरे सामने रहती हैं। मैं जब तक चौहान को धूलि मे नही मिला लूगा तब तक मुझे शान्ति नही मिलेगी।

मालती— तनिक सोचिये तो सही महाराज! जिसने महोबे की नीव तक का नाश कर दिया आप उसकी सहायता करना चाहते हैं!

परमाल— तुम नही समझती रानी! हर बात ऊपर की आँखो से नही देखी जाती। आज तो अकेला परमाल रो रहा है, मुस्लिम साम्राज्य होने से घर घर मे बेटे के शव के आगे माँ और पति के शव के सामने पत्नी रोती होगी।

मालती— जब मेरे घर में आग लग गई तो मै चाहती हूँ कि धरती भर पर आग लग जाये। मैं अपने बेटे के हत्यारे का विनाश देखना चाहती हूँ।

परमाल— तुम्हारी यही इच्छा है तो जैसी हरि इच्छा।

चिन्तित होकर सोचते हुए राजा परमाल ने दूत से कहा— दिल्लीनरेश से कह देना कि हम तुम्हारी कोई सहायता नही करेंगे, और ना ही तुम्हारा विरोध करेगे। हम तन से तुम्हारे साथ नही हैं, पर मन से देश में हिन्दू राज्य बना रहे इसलिये मुस्लिम आक्रान्ताओ का विनाश चाहते हैं। यह हमारा अन्तिम निर्णय है।'

निर्णय सुनकर दूत निराश होकर चला गया, और राजा परमाल मूर्च्छित हो शैया पर गिर पडे।

महोवा नरेश के मूर्च्छित होते ही मालती चीख पडी और महल मे कोलाहल मच गया। हर ओर से सेवक और सेविकायें दौड पडी। राज-वैद्य ने तुरन्त आ उपचार किया, पर परिणाम कुछ भी नही निकला। राजा परमाल मूर्च्छा से नही जागे, उनकी दशा क्षण क्षण बिगड़ने लगी।

मूर्च्छा की दशा मे परमाल बार बार बहकने लगे। बहकते बहकते वे कहते, "इस देश का नाश तुमने ही किया है, तुमने! तुम इस देश के हत्यारे हो, तुम! तुमने ही ब्रह्मा को खाया है। तुमने ही ऊदल और मलखान के प्राण लिये हैं। तुम ही मेरे वीर सामन्तो को डस गये। तुमने ही महोबे के खजाने खाली किये हैं। हाथी घोडे रथ सब तुम्हारी ही भेंट चढ गये। तुमने महोबा स्वाह कर दिया। तुमने कन्नौज मे आग लगादी। तुम दिल्ली को डसवा रहे हो। और तुमने ही देश मे विदेशियो को बुलाया है। तुमने सारे देश के पैरों मे जजीरे डाल दी। तुमने जिस हाँडी में खाया उसी मे छेद किया। दूर हट जाओ मेरी आँखो के सामने से। मैं तुम जैसे विभीषण की शक्ल नही देखना चाहता।

हट जाओ मेरे आगे से। देखो, वे लुटेरे बढे चले आ रहे हैं। मेरी तलवार मुझे दो! मैं अकेला ही इन सब के सर उतार लूगा। मुझको ब्रह्मा और वीर सामन्तो की आत्माए पुकार पुकार कर कह रही हैं कि देश को विधर्मियो से बचाओ। मैं यवनो से युद्ध के लिये जा रहा हू।"

कहते कहते परमाल ने उठ कर दौडना चाहा पर सेवको और मालनी ने बलात् रोकते हुए कहा— "शान्त हो जाइये महाराज! यहा न यवन हैं न सामन्त, आप तो अपने महल मे हैं।"

परमाल— "नही, नही! जब देश पर सकट आया हुआ हो तब परमाल महल में कैसे रह सकता है! सेना तैयार करो, हाथियो पर हौदे रख दो, घोडो की कमर कसो! हरेक से कह दो कि अपने अपने हथियार उठा ले। मेरा हाथी सजाओ! परमाल युद्ध मे ताण्डव नृत्य करेगा। देखता हू देश मे विदेशियो का राज्य कैसे होता है। बाँधो जाओ, तलवार उतारो, भाला मुझे दो! साँग कहा है?

जागो शकर! आओ हनुमान! हर हर महादेव! वह देखो शहाबुद्दीन

इस बूढे की बात मान जाओ माहिल! अब भी समय है, अपने देश को बचा लो। सारे हिन्दू राजा मिलकर आक्रान्ता गोरी पर टूट पडो, और आक्रान्ताओ को जड से मिटा डालो! जयचन्द से कह दो कि गोरी के साथ पृथ्वीराज पर चढाई न करके पृथ्वीराज के साथ गोरी पर चढाई करे। राजपूत अपनी बेटियो का सुहाग बहुत लूट चुके, अब उन्हे बदल जाना चाहिये। लकीर का फकीर बने रहने मे रजपूती नही हे। आपस के रक्तपात मे बहुत कुछ खो चुके, अब जो कुछ शेष हे उसे तो मत खोओ!

राजा परमाल यह कह ही रहे थे कि सेवक ने आकर कहा, 'दिल्ली से एक दूत आया हे, वह इसी समय आप के दर्शनो के लिये हठ कर रहा है।'

राजा परमाल कुछ कहे उससे पहले ही माहिल ने अकडते हुए कहा—'राजा साहब का स्वास्थ्य ठीक नही हे, कह दो कुछ समय तक वे किसी से नही मिलेंगे।'

लेकिन बात बीच मे ही काटते हुए परमाल ने कहा— नही, हम दूत से मिलेगे। चौहान आपत्ति मे है तभी उसने दूत भेजा हे। वह स्वयम् हमारे द्वार पर जब आगया है तो हमारी सारी शत्रुता उससे समाप्त हो गई। वह हमे अपना समझता है तभी तो उसने यहाँ तक आने का साहस किया। घर आये को निराश करना क्षत्रियत्व के विरुद्ध है। जाओ प्रतिहारी! दूत को सादर लिवा लाओ।

आज्ञा मिलते ही प्रतिहारी चला गया और दूत को उल्टे पैरो साथ ले आया।

दूत ने आते ही सादर अभिवादन किया। राजा परमाल ने उसके लिये मूढा पहले ही बिछवा दिया था। सकेत पाकर वह इस पर बैठ गया।

जब दूत धीरज से बैठ गया तो राजा परमाल ने कहा— 'कहा चौहान ने क्या सन्देश भेजा है ?

दूत— "चौहान के साथ ही राजमन्त्री ने निवेदन किया है कि आपस की फूट के कारण हिन्दू राजाओं की शक्ति हर क्षण क्षीण होती जा रही है। यदि सारे हिन्दू राजाओं का कोई एक दृढ़ संगठन नहीं बना तो वह दिन दूर नहीं जब धीरे धीरे सारे हिन्दू राज्य नष्ट भ्रष्ट हो जायेंगे। मुस्लिम लुटेरे इस देश को घूर घूर कर देख रहे हैं। वे हमारे कितने ही मन्दिर नष्ट भ्रष्ट कर चुके हैं। रावी तक उनका राज्य हो चुका है। अब वे लोग फिर आगे बढ़ रहे हैं। इसलिये अब आप पुरानी सब बातों को भूल कर एक झण्डे के नीचे होने की कृपा करें। हम अपनी पहली भूलों पर लज्जित हैं।"

सुन कर परमाल कुछ देर के लिये मौन हो गये और फिर उन-उभारी हुई आँखों से देखते हुए बोले—'विचार उत्तम है, पर अब पछताये क्या बने जब चिड़िया चुग गई खेत। इस देश की दीवारें ढेरों से टूटी हुई पड़ी हैं। कौन है वह हिन्दू राजा जो आपस में लड़ लड़ कर मिट नहीं गया! टुकड़े टुकड़े होकर हम सब नष्ट हो चुके हैं। मैं बूढ़ा हो चुका हूँ। जवान बेटे और वीर सामन्तों की मृत्यु के बाद मुझ में रह ही क्या गया है! न जन बल है, न मन बल। जो कुछ था व[illegible] सब लुट चुका। ऐसी दशा में मैं क्या सहायता कर सकता हूँ ?'

दूत— 'यदि आपका मन हमारे साथ है तो देश को सब कुछ मि[illegible] गया। कौन कहता है कि आप बूढ़े हैं? राजपूत कभी बूढ़ा नहीं होता यदि राजपूत बूढ़े होने लगे तो जवानी की परिभाषा ही बदल जायेगी अपना खून्ना एक दीजिये दयालु राजा! और उस खिचड़ी में भारत [illegible] बना दीजिये। आपकी एक आवाज़ से सारे हिन्दू राजपूत राजा [illegible] [illegible]।'

परमाल— 'उत्साह तो नहीं है, लेकिन घर आये की सहायता करना राजपूत का धर्म है। इसलिये अपने महाराज से कह देना कि महोवे और दिल्ली का वैर तो तब तक रहेगा जब तक चन्देल वंश मे एक भी राजपूत जीवित है। और रही शहाबुद्दीन गोरी से हिन्दुओ के संगठित होकर युद्ध की बात, उसके लिये मैं तैयार हूँ। लुटे हुए महोबे मे जो कुछ भी धन-जन शेष है वह चौहान की सहायता के लिये हर समय उपस्थित है।'

सुनते ही माहिल ने क्रोध से गर्ज कर कहा— नही, यह नही हो सकता। महोवे से चौहान को कण भर भी सहायता नही मिलेगी। पृथ्वीराज महोबे का शत्रु है और महोबेवाले हर तरह से उसका नाश चाहते हैं। जीजाजी! आप अकेले ही चौहान की सहायता की घोषणा नही कर सकते। मै अभी बहिन को बुला रहा हूँ और सारे राज्य को इकट्ठा करूँगा। फिर देखता हूँ चौहान कैसे कालिंजर से सहायता लेता है। पृथ्वीराज के दूत ने चार चापलूसी के शब्द कहे कि राजा साहब कायरो की तरह पैरो में गिर पड़े! जैसे यह प्रतीक्षा ही कर रहे हो कि चौहान से किस प्रकार मित्रता की जाये।

परमाल — माहिल! मेरा राज्य है, मै जो चाहूँ करूँ। तुम रोकने वाले कौन होते हो? एक बार तो सब कुछ स्वाह करा चुके, क्या अब भी तुम्हारा पेट नही भरा? क्या तुम्हे तभी शान्ति मिलेगी जब भारत मे कोई भी हिन्दू राज्य नही रहेगा? तुम बिल्कुल न बोलो! मै जो चाहूँगा, करूँगा। देखता हूँ कैसे कन्नौज गोरी का साथ देता है!

माहिल— कुछ भी हो मैं पृथ्वीराज का साथ नही देने दूँगा। मै मौन क्यो नहीं होता! मेरी बहिन महोबे की रानी है। बहिन! बहिन! शीघ्र आओ। देखो, बुढ़ापे में जीजाजी क्या कर रहे हैं।

माहिल की आवाज सुनते ही रानी मालती वहां आ गई जहां जीजा-साले का महाभारत चल रहा था।

आते ही रानी ने गम्भीरता से कहा— 'क्या है भैया?'

माहिल— कुछ नहीं बहिन! तुम्हारा बेटा मरा था, वीर सामन्त स्वाहा हुए थे, नौलखा हार, हाथी घोड़े बहुत कुछ लुट चुके, अब तुम्हारा सुहाग भी लुटने को है। बुढ़ापे में जीजाजी की मति मारी गई है। जिसने तुम्हारे एकमात्र बेटे ब्रह्मा को और वीर सामन्तों को युद्ध में मार डाला उस पृथ्वीराज चौहान की वे उदारता से सहायता कर रहे हैं, हृदय खोल कर दिल्ली को जन धन दे रहे हैं। जैसे चौहान नहीं, उनका बेटा उनका शत्रु था। उनके लिये अच्छा हुआ जो वह मर गया! आश्चर्य है कि जिसने तुम्हारे इकलौते बेटे को मारा है उसकी मदद करने को राजा परमाल का हृदय कैसे मान गया! मैं साफ साफ कहे देता हूं कि यदि जीजाजी ने मेरे भानजे के हत्यारे की सहायता की तो मुझे लाचार होकर उनके सामने तलवार उठानी पड़ेगी।

मालती— नहीं, यह कभी नहीं हो सकता। महोबे से चौहान को रत्ती भर भी सहायता नहीं दी जायेगी। जिसने मेरी आंखों में जिन्दगी भर के लिये आंसू भरे हैं मैं अपनी गीली आंखों से उसका विनाश देखने को जीवित हूं।

माहिल— विनाश के सारे लक्षण बन चुके हैं बहिन! रोओ नहीं, बहुत ही शीघ्र दिल्ली वीरान होती दिखाई देगी। गजनी से गोरी चढ़ा चला आ रहा है और कन्नौज से जयचन्द चढ़ाई करेगा। राव समरसिंह को छोड़ कर कोई भी हिन्दू राजा पृथ्वीराज के साथ नहीं है। चौहान अकेला है और वह भी बहुत दुर्बल। इस बार तुम्हारी आंखें ठंडी जरूर होंगी बहिन!

मालती— तो क्या विदेशी दिल्ली पर राज्य करेंगे?

गोरी की सेना भाग रही है, चौहान ने उसे खदेड दिया। लेकिन यह क्या, हिन्दू सेना हिन्दुओ को तराम रही है! हिन्दू राजा यवनो के साथ चौहान के सामने आ डटे। अब क्या होगा? अकेला चौहान कब तक इतनी बडी सेना से लडेगा! हे ईश्वर! तू भी हम से क्यो रूठ गया? हिन्दुओ का ऐसा भी क्या बडा अपराध हुआ कि तूने विधर्मियो से अपने मन्दिर तक तुडवा डाले।

यदि तेरी ऐसी ही इच्छा है तो फिर मुझे इस जलती हुई दुनिया मे क्यो छोडता है? मैने इस देश मे हिन्दुओ का राज्य देखा है। मुझे यवनो का राज्य देश मे नही देखना है। कम से कम इतिहास मे यह तो नही लिखा जायेगा कि राजा परमाल के जीवित रहते भारतवर्ष मे मुसलमानो का राज्य हो गया था।"

बहकते बहकते राजा परमाल की दशा बिगडने लगी। मालती ने घबराते हुए कहा— "इनके तो हाथ पैर ठडे होने लगे, पुतलियाँ ऊपर चढने लगी। बचाओ बचाओ, कोई मेरे सुहाग को बचाओ! नही तो मै लुटी। मै चौहान की सहायता के लिये तैयार हूँ। तुमने यह क्या किया माहिल भैया! महाराज ने अपना विनाश देखा है, हिन्दुत्व की हत्या नही देख सकते। देश मे यवनो के राज्य की कल्पना से ही उनका जीवन मौत को पुकार रहा है। सचमुच तुमने ही मेरे घर मे आग लगाई है। तुमने ही मेरा सोने का ससार फूंका है। तुमने अपनी बहिन को बर्बाद कर डाला। अब तुम्हारे ही कारण मेरा सुहाग लुट रहा है। मेरा ब्रह्मा, मेरे लाडले सामन्त, तेरी ही चुगली की भेट चढे हैं। चला जा चुगलखोर मेरे सामने से, नही तो मैं तुझे नाखूनो से फाड डालूगी। हट जा, नही तो चण्डी बन कर मै तेरा रक्त पी जाऊँगी।"

उत्तर मे दाँत पीसता हुआ माहिल घोडे पर सवार होकर चल दिया। और राजा परमाल बेहोशी मे बहकते रहे।

१४

"ऐसा न करो, इससे हमारा देश हमारे ही हाथों में जल जायेगा। विधर्मी, विदेशी और लुटेरों की सहायता लेकर जो अपनी बेटी को विधवा बनाने की कामना करता है वह अपना नाश देखकर हँसना चाहता है। मेरी बेटी ने कोई पाप नहीं किया। उसकी जिससे इच्छा हुई उससे विवाह कर लिया। विवाह का सम्बन्ध प्रकृति से है, समाज से नहीं। और यदि आपकी दृष्टि में यह दोष भी है तो इसके लिये दूसरे निर्दोषों को क्यों सताते हो? सारे देश पर बिजली बनकर क्या गिरते हो? लौट जाओ स्वामी! मैं तुम्हें विधर्मी की मदद के लिये कभी नहीं जाने दूँगी। मैं इतिहास में आपका नाम देशद्रोहियों में लिखाना नहीं चाहती।

आपकी शत्रुता पृथ्वीराज से है, दिल्ली और देश से नहीं। यदि बदला लेने की लिप्सा है तो तलवार लेकर अकेले पृथ्वीराज का सामना करो।"

नागमती ने जाते हुए अपने पति जयचन्द के पैर पकड कर कहा। किन्तु जयचन्द ने झटका देकर अपने को छुडाते हुए कहा—"जो अवसर मिलने पर अपने शत्रु से प्रतिशोध नही लेता, वह मूर्ख है। इस समय चौहान मेरे हाथ मे है, मैं उसे मसल कर ही रहूँगा। जिस बेटी ने अपने बाप की बात बिगाड दी, आग मे जाये ऐसी पुत्री! मुझे उसके सुख से क्या लेना जो मुझे दु ख दे गई। माँ-बाप, भाई-बहिन सब स्वार्थ के हैं। यह दुनिया ईंट के जवाब मे पत्थर की है। बुराई का जवाब भलाई नही, बुराई है। इस जीवन मे जिसके साथ भलाई की वही सिर काटने को तैयार रहा। अब मैंने बुराई के बदले मे भलाई करना छोड दिया है। दुर्बल न बनो नागमती! आई हुई दिल्ली को हाथ से न जाने दो। तुम चाहे लाख कहना लेकिन मैं तुम्हारी एक भी न सुनूंगा।"

नागमती— मन्दोदरी ने भी बहुत कहा था, लेकिन लकापति ने भी एक नही सुनी थी। आप अन्त तक न माने, पर मैं अन्त तक कहती रहूँगी। मेरी दाईं आँख बार बार फडक रही है। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे कोई भयकर आग चारो ओर से दौडी चली आ रही हो। छोड दो यह हठ, और भूल जाओ पिछले वैर को!

जयचन्द— मैं तो समझता था कि नाग से अधिक नागिन के दाँतो मे विष होता है। प्रतिशोध की ज्वाला तुम्हारे हृदय मे अधिक होनी चाहिये थी। किन्तु मैं एक वीरागना को कायर देख रहा हूँ। चौहान मे यदि बल है तो तुम्हारे पति की नाडियो में भी गहडवाड वश का लाल रक्त दौडता है। हार का रुदन नही, जीत के मगल गीत गाओ भामिनी!

नागमती— एक ओर बेटी का विनाश है और दूसरी ओर अपना। मेरे लिये दोनो ही आखो मे आँसू हैं। किसके विनाश की कामना करूँ

बन जाये और किसी भी तरह अपनी कुशलता से दिल्ली की सेना में सेनानायक का स्थान प्राप्त कर लें। और फिर समय पर चौहान की तलवार और चौहान का ही सर कर दिखावे।

जयचन्द— किन्तु यह तो भयंकर अधर्म होगा। गहड़वाड़ों के माथों पर सदा सदा को कलंक लग जायेगा।

माहिल— युद्ध में जो धर्म अधर्म के गीत गाता है वह जीत नहीं सकता। जाने क्यों आपके मन में बार बार दुर्बल विचार आते हैं। धर्म की बातें छोड़ अर्थ की बातें करो कन्नौजपति! नहीं तो बना बनाया खेल बिगड़ जायेगा।

जयचन्द— तो फिर जय काली! जैसे भी हो चौहान को हड़प करो!

कहते हुए जयचन्द ने आज्ञा देकर सेनानायक धर्मसिंह, तेजसिंह, श्यामसिंह और हरपालसिंह को बुलाया।

आज्ञा सुनते ही चारों सैनिक सरदारों ने आकर अभिवादन किया। सामने ही देखते हुए जयचन्द ने संकेत-भरी दृष्टि से माहिलराज की ओर देखा।

माहिलराज ने गिद्ध-दृष्टि से सेनानायकों को देखते हुए कहा—'तुम्हें अपने महाराज के हित और कन्नौज की राज्य-वृद्धि के लिये दिल्ली जाना है। बोलो क्या तुम हर तरह से अपने राज्य और महाराज की सेवा के लिये तैयार हो? सफलता मिलने पर तुम्हें कितने ही गाँवों का राजा बना दिया जायेगा।'

सेनानायक पहले तो कुछ [illegible] पर राजा [illegible] की बात सुनकर [illegible] हो गये।

चारो को नतमस्तक देख माहिल ने आगे कहा— "तुम्हे वेश बदल कर दिल्ली मे रहना है। वहाँ किसी भी तरह चौहान के विश्वास मे आकर उनकी सेना मे अधिकारी वन जाना और फिर समय पर चौहान की नही गोरी की सहायता करना।"

लालच ने चारो सैनिको की आंखे वन्द कर दी। कुछ भी न कह कर सेनानायक दिल्ली जाने के लिये उत्सुक हो उठे।

और फिर दूसरे दिन चारो जवान दिल्ली चल पड़े। मानो शुक्र, शनि, राहु और केतु ने भारत की रानी पर एक ही साथ आक्रमण किया।

दिल्ली आकर चारो क्रूर ग्रह चारो कोनो मे वस गये, तथा आक्रमण के लिये अवसर की प्रतीक्षा करने लगे।

इतने पर भी दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान की नीद नही टूटी। वे मस्त आँखो की मदिरा पिये ऐसे खुर्राटे भर रहे थे जैसे सौदागर घोडा वेच कर सोता है।

चौहान गहरी नीद मे सो रहे थे और दिल्ली के हितैषी गहरी चिन्ता में थे। किसी को नीद आ रही थी और कोई अपने सारे सुख छोड पहरे पर जाग रहा था।

सामन्त चन्द्रवरदाई ने कृष्णवन्त के पास आकर कहा— वादल घिरते आ रहे हैं, पानी वरसने में वहुत देर नही है। विजलियाँ टूटेगी, प्रलय होगी, पर क्या महाराज की नीद नही टूटेगी?

कृष्णवन्त— लाचारी अनुभव हो रही है सामन्त! महल में जाकर वार वार दर्वाज़ा खटखटाते हैं पर ऐसा मूसला ठुका हुआ है कि द्वार नही खुलता। यहाँ हाहाकार मच रहा है और वहाँ चौहान के कानो पर जूँ तक नही रेंगती।

पहली हार

चन्द्रबरदाई— पता चला है कि शहाबुद्दीन गोरी ने हमले की पूरी तैयारी कर ली है। देशद्रोही जयचन्द उसे अन्दर से सहायता देगा। किसी भी दिन दिल्ली पर बिजलियां टूट सकती हैं।

कृपावन्त— बिजलियां क्या, आज तो बूंदें गिर कर भी दिल्ली को बहा सकती हैं। विनाश के समय महाराज की बुद्धि उल्टी हो चुकी है।

चन्द्रबरदाई— तो क्या मन्त्री जी भी साहस छोड़ चुके ?

कृपावन्त— साहस तो नहीं छोड़ा पर आशा छूट चुकी है। रावल समरसिंह जी बीमार होने के कारण अभी तक न आ सके और चौहान तक हम में से कोई पहुँच नहीं सकता। अब तो केवल एक ही कर्तव्य बाकी है कि अपनी दिल्ली के लिये अन्तिम श्वास तक लड़ते रहें। अपने जीते जी किसी को भी इस आत्र भूमि पर पैर न रखने दें।

चन्द्रबरदाई— इतने निराश क्यों होते हो मन्त्री जी, अभी भी [illegible] अपने हाथ में है। चौहान यदि जाग जायें तो वे अकेले ही [illegible] और देशद्रोहियों के लिये काफी हैं।

कृपावन्त— तो फिर एक बार महाराज तक पहुँचने का और प्रयत्न करें। सम्मानित नागरिकों, सरदारों और अधिकारियों के साथ [illegible] फिर महाराज का द्वार खटखटायें। शायद हमारे भाग्य [illegible] खुल जायें।

चन्द्रबरदाई और कृपावन्त प्रतिष्ठित [illegible] सहित महाराज [illegible] के द्वार पर पहुँचे [illegible]

[illegible]

कहा— 'दिल्ली के सभी प्रभावशाली नागरिक तथा अधिकारीगण हमारे साथ महाराज से मिलने आये हैं। महाराज से बहुत ही आवश्यक काम है। हमे जाने दो, रास्ता छोड दो ।'

द्वार पर खडी कामिनियाँ इस प्रकार हँसी कि जैसे किसी फूलो से लदे हुए तरु से पतझड की तरह फूल झड रहे हों। और फिर टेढे सीधे मुह बनाती हुई बोली— 'महाराज अस्वस्थ हैं। उनकी आज्ञा है कि चाहे कोई भी आये हमे बिल्कुल परेशान न किया जाये।'

कृणवन्त— बडा आश्चर्य है कि आज चन्द्रबरदाई और मन्त्री कृणवन्त तक महाराज से नहीं मिल सकते। देवियो ! हमे जाने दो। हमारे महाराज और दिल्ली इस समय घोर सकट मे हैं।

कामिनी— सकट मे हैं तो सकट-मुक्त कराने वाले आप हैं तो सही। महाराज को रुग्णावस्था मे तो चैन लेने दो !

चन्द्रबरदाई— सचमुच प्रणय से बडी बीमारी दुनिया मे दूसरी नही होती। और बीमारियो से तो मरणासन्न मनुष्य भी जी सकता है पर प्रणय का बीमार तो स्वस्थ से स्वस्थ भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता हैं। यह वह अमृत है जिसे विष की उपाधि दी जा सकती है।

कृणवन्त— यह समय प्रणय विवेचना का नहीं है। देखते क्या हो, इन नारियो को हटा कर बलात् महाराज के पास चले चलो !

कामिनी— आप जबरदस्ती जाने से पहले यह सोच ले कि हमारे वक्ष के ऊपर से ही आप जा सकते हैं।

चन्द्रबरदाई— रक्तपात करके जाने से बात और बिगडेगी मन्त्री जी, क्योकि महाराज की बुद्धि पर आज कल राहु और केतु सवार है। कहीं हमे भी वह फल न भोगना पडे जो कैमास और

रुदन संस्करण चल ही रहा था कि जैसे लक्ष्मण की मूर्च्छा पर राम दल की निराशा मे हनुमान जी आ पहुँचे थे वैसे ही राव समरसिंह जी ने कृणवन्त के कक्ष मे एकदम प्रवेश किया ।

राव जी को देखते ही सामन्त कवि और मन्त्री कृणवन्त उनसे चिपट कर ऐसे रोने लगे जैसे भरत मिलाप के समय राम और लक्ष्मण ने धारा बहाई थी ।

राव जी ने दोनो को धीरज देते हुए कहा— इतने अधीर क्यो होते हो ? वीर पुरुष होकर किसी भी दशा मे रोना कैसा !

चन्द्रवरदाई— हमारा धैर्य टूट चुका था राव जी ! आपके आने से कुछ साहस बँधा है ।

कृणवन्त— बचाइये राव जी, जैसे भी हो दिल्ली को बचाइये ! इस देश की देशद्रोहियो और विधर्मियो से कैसे भी रक्षा कीजिये ! हम सब इस समय विनाश के चौराहे पर हैं । इस घोर अँधेरे मे केवल आप ही का उजाला हमें मार्ग दे सकता है समरसिंह जी !

समरसिंह— दिल्ली तो मुझे प्राणो से भी अधिक प्यारी है । समरसिंह आज तक अपने राज्य के लिये नही, दिल्ली राज्य के लिये जिया है । नही तो कभी का सन्यास ले चुका था । चौहान इस समय कहाँ है ?

कृणवन्त— सयोगिता के महल मे सो रहे हैं ।

सुनते ही समरसिंह को क्रोध आगया । उन्होने धधकते हुए अगारे की तरह लाल होकर कहा— 'गोरी से पीछे, आज पहले चौहान से युद्ध होगा । या तो आज चौहान नही या समरसिंह नही । साले बहनोई की तलवार बजे बिना उस मदान्ध की नींद नही खुल सकती ।'

कहते हुए समरसिंह ने तलवार म्यान से खींची और सयोगिता के

महल की ओर चलने के लिये पैर उठाया। पर चन्द्रबरदाई ने रोकते हुए कहा— 'वहाँ हर द्वार पर कामिनियों का पहरा है। किसी भी पुरुष का महाराज तक पहुँचना असम्भव है।'

समरसिंह— "किसमें शक्ति है जो आज समरसिंह का उठा हुआ पैर रोक दे! आँधी, पानी और आग कोई भी मुझे चौहान तक पहुँचने में नहीं रोक सकती। मेरे मार्ग में जो भी आयेगा, मेरे हाथ की भवानी [illegible] उसी के टुकड़े कर डालेगी। यदि मेरे मार्ग में कोई नारी भी आई तो मैं धर्म और अधर्म का विचार किये बिना उसकी भी हत्या करने [illegible] रहूँगा। आज या तो चौहान बदलेंगे, नहीं तो मेरे ही हाथ [illegible] रक्त-स्नान करेगी।

चौहान के प्रति जितना प्रेम है वह सब का सब आज क्रोध में बदल [illegible]। उस मूर्ख ने सोने की दिल्ली को मिट्टी की दिल्ली बना डाला, [illegible] रहा। इस आँखों के अन्धे ने कामुकता के ओर में [illegible] नीतिकार को कैद कर दिया, और मैंने कुछ न कहा। [illegible] सुना है कि उसने चामुण्डराय को भी बन्दी कर के काल कोठरी [illegible]।

उतार देना चाहिये। राज्य के शत्रु राजा के वध मे कोई पाप नही। यदि देश के विनाश में अपने भाई और बेटे का भी हाथ हो तो उनके भी टुकड़े करना धर्म है। अपने हो या पराये जो दिल्ली की रक्षा मे रत नही हैं, वे शत्रु हैं, समरसिंह उनके रक्त का प्यासा है।

आओ देवी चण्डी! मेरे साथ साथ चलो और जो भी दिल्ली का शत्रु हो उसी का रक्त पीती चली जाओ!"

तरुणी ने मुस्कराते हुए कहा— सम्भव है आप के महाराज
हो।

समरसिंह— शिव होते तो कैलाश की चोटी पर दर्शन
नारी के नरक मे न सडते। अमृत के कुण्ड मे रह कर भी जो
पीता है वह अज्ञानी है। अति को ही गरल कहते हैं चतुर नारी
रास्ता छोड, नहीं तो मुझे एक अपवित्र नारी को छूने के दोष
कलंकित होना पडेगा।

तरुणी— महाराज की परमप्रिय महारानी संयोगिता की आज्ञा
है कि किसी को भी न आने दो।

'देखता हूँ कौन रोकता है' कहते हुए समरसिंह ने राह रोकने वाली
तरुणी को धक्का दिया और महल मे घुस गये।

समरसिंह का यह भयंकर आक्रमण देखते ही सब की सब सहम
कर जहाँ की तहाँ खडी रह गईं। सब देखती रहीं और भीषण तूफान
की तरह दौडते हुए राव जी उस कमरे में आगये जहाँ चौहान एक
हाथ संयोगिता के गले में डाल दूसरे हाथ से चिबुक पकड अधर चषक
से मदिरा पी रहे थे।

राव जी को देखते ही चौहान को जैसे लकवा मार गया। वे
हा के तहाँ जडवत् स्थिर रह गये। समरसिंह ने दांत पीसते हुए
हा— 'दिल्ली मे आग लग रही है और तू रँगरलियाँ मना रहा है।
पर अधर्मी चढे आ रहे हैं और तू ऐय्याशी में लगा हुआ है!
के अन्धे। तुझे नहीं दीखता कि तेरी और दिल्ली की मृत्यु चारो
मँडरा रही है। तेरी काली करतूतो को समरसिंह आज तक
आंखो मे पीता रहा है, आज तलवार से वह अपने आंसू सुखाने के
आया है। यदि राजतन्त्र मे राजा के लिये भी कोई न्यायालय

फेर दे ! चौहान के नाम की लाज बचानी है तो विधर्मियो को बता दे कि भारत का वीर अभी जीवित है। उठ और तलवार उठा ! तरुणी को छोड कर तलवार खींच !

गजनी से शहाबुद्दीन गोरी दिल्ली की ओर फिर बढा चला आ रहा है। इस बार उसका सिर दिल्ली के दर्वाजे पर लटका दे ! देशद्रोही बनकर जयचन्द विधर्मियो के साथ देश का विनाश और दिल्ली का राज्य चाहता है। यदि ला सकता है तो उसे सीधे रास्ते पर ला ! बचा अपनी दिल्ली को ! बचा अपनी शान को ! बचा अपने देश और धर्म को ! यदि तू जीवित है तो अपनी पवित्र सस्कृति की रक्षा कर !

पृथ्वीराज— जीवन भर तलवार से खेलते खेलते मन ऊब गया था। सोचा था शेष जीवन प्रणय की फुलवारी में बिता दू, पर राजधर्म कितना कठोर होता है ! प्रणय पर प्रहार के अतिरिक्त और कुछ नही होता। राजा का जीवन भी कितना दयनीय होता है, तलवार की धार हर समय उसका लहू पीने के लिये मुँह फाडे रहती है।

समरसिंह— अपने स्वार्थ के अनुसार मनुष्य कोई न कोई तर्क निकाल ही लेता है। लेकिन समष्टि के लिये व्यष्टि को अपनी बलि देनी ही पडती है।

पृथ्वीराज— यह दुनिया मनुष्य से बलि चाहती है, केवल बलि ! यहाँ मनुष्य को समाज की वेदी पर व्यक्ति की बलि देकर जीना पडता है।

समरसिंह— यदि समाज सुखी है तो व्यक्ति तो सुखी है ही, इसलिये समाज के लिये जियो और समाज के लिये मर जाओ। आखे खोल और देख क्या हो रहा है ! गजनी से शहाबुद्दीन गोरी पांच लाख जवानो को लेकर दिल्ली की ओर बढा चला आ रहा है। उसके साथ मार्ग के प्राय

चौहान को आज चाराहे पर सूली चढ़ाया जाता । किन्तु कोई ऐसा न्यायालय तेरे राज्य में नहीं है, इसलिये तलवार वनों ने पहले तुझे ही मार लूं या मर जाऊं । या तो अपनी ो विधवा बना दूं या तेरी बहिन को । देशघाती सभल !"

हान ने समरसिंह के आगे अपना सर करते हुए कहा— "काट न घाती का सर ! सचमुच मैंने अक्षम्य अपराध किया है राव ाहान राजजी के सामने कभी नहीं बोला और आज भी नहीं ारको जो उचित हो दण्ड दे दे ।"

फेर दे ! चौहान के नाम की लाज बचानी है तो विधर्मियों को बता दे कि भारत का वीर अभी जीवित है। उठ और तलवार उठा ! तरुणी को छोड़ कर तलवार खींच !

गज़नी से शहाबुद्दीन गोरी दिल्ली की ओर फिर बढ़ा चला आ रहा है। इस बार उसका सिर दिल्ली के दर्वाजे पर लटका दे ! देशद्रोही बनकर जयचन्द विधर्मियों के साथ देश का विनाश और दिल्ली का राज्य चाहता है। यदि ला सकता है तो उसे सीधे रास्ते पर ला ! बचा अपनी दिल्ली को ! बचा अपनी शान को ! बचा अपने देश और धर्म को ! यदि तू जीवित है तो अपनी पवित्र संस्कृति की रक्षा कर !

पृथ्वीराज— जीवन भर तलवार से खेलते खेलते मन ऊब गया था। सोचा था शेष जीवन प्रणय की फुलवारी में बिता दूं, पर राजधर्म कितना कठोर होता है ! प्रणय पर प्रहार के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। राजा का जीवन भी कितना दयनीय होता है, तलवार की धार हर समय उसका लहू पीने के लिये मुँह फाड़े रहती है।

समरसिंह— अपने स्वार्थ के अनुसार मनुष्य कोई न कोई तर्क निकाल ही लेता है। लेकिन समष्टि के लिये व्यष्टि को अपनी बलि देनी ही पड़ती है।

पृथ्वीराज— यह दुनिया मनुष्य से बलि चाहती है, केवल बलि ! यहाँ मनुष्य को समाज की वेदी पर व्यक्ति की बलि देकर जीना पड़ता है।

समरसिंह— यदि समाज सुखी है तो व्यक्ति तो सुखी है ही, इसलिये समाज के लिये जियो और समाज के लिये मर जाओ। आखें खोल और देख क्या हो रहा है ! गज़नी से शहाबुद्दीन गोरी पाँच लाख जवानों को लेकर दिल्ली की ओर बढ़ा चला आ रहा है। उसके साथ मार्ग के प्राय

सभी राजा हैं, और तुम्हारे ससुर साहब भी उनका साथ दे रहे हैं। यदि चौहान में बल है तो देश के इन दुश्मनों को मिट्टी में मिला दे! आज ही दरबार बुला, अपने रूठे हुए सामन्तों को मनाकर उनमें अपने और दिल्ली के लिये विश्वास पैदा कर! आज ही चामुण्डराय के पैरों की बेड़ियाँ काट और उनसे भरी सभा में क्षमा माँग! द्वार द्वार पर आवाज़ लगा, जिससे कि तेरे साथ साथ हर घर से जवान चल पड़े। अब भी समय है, उठ और मिटती हुई दिल्ली को फिर से नया जीवन दे!

अपनी भूल स्वीकार कर! अभी दिल्ली राज्य की प्रजा के हृदय मे चौहान के प्रति दुःख है, शत्रुता नही।

पृथ्वीराज— आज ही आपकी आज्ञानुसार राजसभा बुलाकर सबके समक्ष स्वय को अपराधी बनाकर खड़ा कर दूंगा।

लज्जा से झुके हुए से चौहान समरसिंह के साथ उठे और तत्काल ही घोषणा की कि तुरन्त राजसभा बुलाई जाये तथा स्वय दुर्ग के उस बन्दीगृह मे पहुँचे जिसकी काल कोठरी मे चामुण्डराय काले कम्बल पर कोहनी के सहारे मौन रो रहे थे।

चौहान दर्वाजा खोल कुछ पलो तक मौन खडे रहे, पर चामुण्डराय पीडा मे इतने अधिक डूबे हुए थे कि उन्होने चौहान को तब तक नही देखा, जब तक चौहान की रुँधी हुई वाणी 'सामन्त!' कहती हुई आँखो से बरस नही पडी।

चामुण्डराय ने जैसे ही चौहान को अपने सामने देखा वैसे ही निर्दोष दोषी की तरह दिल्लीपति को देखने लगे।

कुछ देर तक दोनो मौन रहे और फिर चौहान ने दौडकर चामुण्डराय को छाती से लगाते हुए कहा— मै अपराधी हूँ, जो दण्ड चाहो दे लो!

चामुण्डराय— अपराध सदा शासित का होता है, शासक का नही।

पृथ्वीराज— बीती बातो को भूल जाओ, तुम्हारा अपराधी तुम्हारे सामने खडा है, उसे जो दण्ड दोगे भोगने को प्रस्तुत है अपनी दिल्ली को बचा लो! जयचन्द और गोरी ने एक ही आक्रमण करने के लिये कूच कर दिया है। इस समय तो चौहान है या चामुण्डराय।

चामुण्डराय— क्षमा कीजिये महाराज!

रहा है! काल कोठरी मे पड़े पड़े बुढ़ापे की हड्डियों का एक ढांचा मात्र रह गया है। अब तो हृदय में आपका उपकार और वाणी पर राम नाम के अतिरिक्त इस बन्दी मे और कुछ भी शेष नहीं है। बन्दीगृह के इस [illegible] पर जितनी शान्ति है, उतनी उस जीवन मे कही भी नहीं मिली थी। मैं अब इस पाषाण मन्दिर को छोड़ और कही नही जाऊँगा।

दुर्लभराज— नहीं सामन्त! ऐसा न कहो, मैं यदि स्वयं मृत्यु के मुंह मे होता तो तुम्हारे सामने कभी न गिड़गिड़ाता। लेकिन इस समय तुम्हारी [illegible] [illegible] मे है। उसे विधर्मियों और देशद्रोहियों से बचा लो!

चामुण्डराय— नहीं महाराज! अब चामुण्डराय युद्ध के योग्य [illegible]। [illegible] सामन्तों का उपयोग कर लीजिये। चामुण्डा के [illegible] नहीं, राम-नाम की माला महकती है। मुझमें अब [illegible], [illegible]।

अपने पैरों तक आने दूं। नहीं रावजी! चामुण्डराय के लिये मृत्यु अच्छी है, पर यह पाप तो घोर नरक से भी दुखद है। आप जब यहाँ तक आये हैं तो मैं प्रस्तुत हूँ।"

कहते हुए चामुण्डराय ने अपने दोनों हाथों से अपने पैरों की बेडी इस तरह ऐंठी कि वे टूक टूक हो गई।

और फिर मुक्त होकर रावजी और चौहान के साथ वहाँ आगये जहा राजसभा में उपस्थित पारिषद महाराज और रावजी की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे।

महाराज और रावजी के साथ सामन्त चामुण्डराय को देख पारिषदों में हर्ष की लहरें दौड गई। सभी ने एक साथ तुमुल स्वर मे जयघोष शुरू कर दिया।

"महाराज पृथ्वीराज की जय! राव समरसिंह की जय! सामन्त चामुण्डराय की जय!"

बहुत दिनों बाद आज राज-परिषद् में महाराज और चामुण्डराय के दर्शन कर पारिषदों ने हर्षध्वनि की। तदनन्तर पृथ्वीराज ने राजसिंहासन पर बैठ विनीत वाणी मे कहा— "बहुत दिनों बाद आपके मध्य आया हूँ, आशा है आप क्षमा करेंगे। मैं सुबह का भूला नहीं, शाम का भूला हुआ था। आपने और राव समरसिंह जी ने मेरी आँखें खोल दीं। वास्तव में मैं राज्य का अपराधी हूँ, आप जो दण्ड देना चाहे दे सकते हैं।"

पारिषदों की आँखें गीली हो गई और चौहान ने आगे कहा— 'यह समय आँखें गीली करने का नहीं है। सीमा पर शत्रु हमें ललकार रहा है। विधर्मी और देशद्रोही दिल्ली की ओर बढे चले आ रहे हैं। टिड्डी दल लेकर शत्रु ने हमारे देश पर आक्रमण किया है।

अन्यायी ने शान्ति से बैठे हुए शेर को छेड़ा है। वह गोरी जिसकी बार बार रगड़ी हुई नाक का घाव शायद अभी तक न सूखा हो, जो हमसे दान में ली हुई जिन्दगी पर जी रहा है, आज देशद्रोहियों के बल पर दिल्ली पर दल-बल चढ़ा चला आ रहा है।

माना कि हमारी सेना की संख्या लुटेरे आक्रान्ताओं की सेना की [illegible] बहुत कम है। लेकिन हमारी तलवार की धार उनसे कहीं तेज है। बहुत दिन से म्यान में पड़े पड़े कहीं तुम्हारी तलवारों में जंग न लग गया हो! कहीं तुम्हारे भालों की नोक मोटी न हो गई हो! कहीं [illegible] न हो गये हों! इसलिये उन्हें तेज कर लो! और [illegible] कि [illegible] का बोझ [illegible] है! तुम में से एक एक [illegible]

कि आज देश में पृथ्वीराज जैसे देशभक्त दूसरे नहीं हैं। वे यदि फूलों की शैया के सोने के अभ्यासी हैं, तो लोहे के पत्थरों पर भी जिन्दगी बिता सकते हैं। कौन है हिन्दुस्तान में आज वह दूसरा जिसने यवनों के सीनों में भाले भोंक उनको क्षमा कर घर में घुसेड़ा है! महमूद ने सोमनाथ के मन्दिर जैसे कितने ही मन्दिर मिटा डाले, पर पड़ोस का कोई राजा भी तो उसे न रोक सका। यह चौहान की गरिमा है कि गज़नी सुल्तान शहाबुद्दीन गोरी से ख़िराज लिया। कल यदि महाराज को कुछ नींद भी आ गई थी तो आज वे तुम्हारे लिये तुम्हारे भिखारी बन कर खड़े हैं।"

सुनते सुनते सब की भुजायें फड़क उठीं और अश्रुपात होने लगा। एक साथ वीर हुंकार करते हुए सभी करुण वाणी में बोले— "हम अपने महाराज और दिल्ली के लिये प्राण दे देंगे। हम मिट जायेंगे, पर दिल्ली को नहीं मिटने देंगे।"

चौहान जो अब तक भीगे हृदय से आत्मग्लानि अनुभव कर रहे थे ज्वारभाटे की तरह उठे और गम्भीर घोष करते हुए बोले— "वीरो! चौहान का मस्तक आज तक किसी के आगे नहीं झुका, पर आज सामन्त चामुण्डराय के सामने ज़मीन में गड़ा जा रहा है। हम सामन्त से बार बार क्षमा माँगते हैं और सेनापति पद की वह तलवार जिसे छीन कर हमने हथकड़ियाँ पहनाई थीं आज हम फिर से सामन्त चामुण्डराय को देते हैं।"

कहते हुए चौहान सिंहासन से उठकर उधर घूमे जिधर सामन्त चामुण्डराय धरती देख रहे थे। महाराज ने उन्हें प्रेम से उठा तलवार दे गले लगाते हुए कहा— 'अब चौहान और दिल्ली की लाज तुम्हारे हाथ है।'

अन्यायी ने शान्ति में बैठे हुए शेर को छेड़ा है। वह गोरी जिसकी बार बार रगड़ी हुई नाक का घाव शायद अभी तक न सूखा हो, जो हमसे दान में ली हुई जिन्दगी पर जी रहा है, आज देशद्रोहियों के बल पर दिल्ली पर सदल-बल चढ़ा चला आ रहा है।

माना कि हमारी सेना की संख्या लुटेरे आक्रान्ताओं की सेना की अपेक्षा बहुत कम है। लेकिन हमारी तलवार की धार उनसे कहीं तेज है। बहुत दिन से म्यान में पड़े पड़े कहीं तुम्हारी तलवारों में जंग न लग गया हो! कहीं तुम्हारे भालों की नोकें मोटी न हो गई हों! कहीं तुम्हारे हृदय कुण्ठित न हो गये हों! इसलिये उन्हें तेज कर लो! और शत्रुओं को बता दो कि दिल्ली का लोहा कैसा है! तुम में से एक एक सौ सौ को बहुत है।"

महाराज बैठ गये और समरसिंह ने नीची गर्दन कर बहुत ही गम्भीरता से कहा— "अपने महाराज की नींद से कहीं तुम्हारी भी आखें मिच न गई हों, इसलिये युद्ध तुम्हारे दर्वाजे पर हुंकार रहा है। आपके महाराज का आपके प्रति घोर अन्याय है, पर अपने महाराज के प्रति आपका जो प्रेम है उससे तो कलंक भी स्वच्छ हो सकता है। आपकी सबसे बड़ी खूबी यह है कि आप घर की लड़ाई में गैरों को लाभ नहीं उठाने देते। जो अपने बुरे से बुरे को भी गैरों के आगे बुरा बनाता है वह एक न एक दिन स्वयम् भी नष्ट हो जाता है। अपने पत्थर भी अच्छे और दूसरों के मोती भी साप है। देशद्रोही जयचन्द अपनों का विनाश और गैरों की श्रीवृद्धि के लिये युद्ध के बाजे बजा रहा है। गोरी भारत के दर्वाजे पर खड़ा हिन्दुस्तान को इस्लाम की तलवार से तराशने के स्वप्न देख रहा है। यह समय अपनों पर आंसू बहाने का नहीं है, अपितु शत्रुओं के सर काटने का है। अपने महाराज की भूलों को भूल जाइये! वे स्वयम् लज्जित हैं। किन्तु मैं गर्व से यह भी कह सकता हूं

कि आज देश मे पृथ्वीराज जैसे देशभक्त दूसरे नही हैं। वे यदि फूलो की शैया के सोने के अभ्यासी हैं, तो लोहे के पत्थरो पर भी जिन्दगी बिता सकते हैं। कौन है हिन्दुस्तान मे आज वह दूसरा जिसने यवनो के सीनो मे भाले भोंक उनको क्षमा कर घर मे घुसेडा है! महमूद ने सोमनाथ के मन्दिर जैसे कितने ही मन्दिर मिटा डाले, पर पडौस का कोई राजा भी तो उसे न रोक सका। यह चौहान की गरिमा है कि गजनी सुल्तान शहाबुद्दीन गोरी से खिराज लिया। कल यदि महाराज को कुछ नीद भी आ गई थी तो आज वे तुम्हारे लिये तुम्हारे भिखारी बन कर खडे हैं।"

सुनते सुनते सब की भुजायें फडक उठी और अश्रुपात होने लगा। एक साथ वीर हुकार करते हुए सभी करुण वाणी मे बोले— "हम अपने महाराज और दिल्ली के लिये प्राण दे देंगे। हम मिट जायेंगे, पर दिल्ली को नही मिटने देंगे।"

चौहान जो अब तक भीगे हृदय से आत्मग्लानि अनुभव कर रहे थे ज्वारभाटे की तरह उठे और गम्भीर घोष करते हुए बोले— "वीरो! चौहान का मस्तक आज तक किसी के आगे नही झुका, पर आज सामन्त चामुण्डराय के सामने जमीन मे गडा जा रहा है। हम सामन्त से बार बार क्षमा माँगते हैं और सेनापति पद की वह तलवार जिसे छीन कर हमने हथकडियाँ पहनाई थी आज हम फिर से सामन्त चामुण्डराय को देते हैं।"

कहते हुए चौहान सिंहासन से उठकर उधर घूमे जिधर सामन्त चामुण्डराय धरती देख रहे थे। महाराज ने उन्हे प्रेम से उठा तलवार दे गले लगाते हुए कहा— 'अब चौहान और दिल्ली की लाज तुम्हारे हाथ है।'

चामुण्डराय ने आँखों के अर्घ्य से महाराज के चरण पखारते हुए गर्ज कर कहा— जब तक चामुण्डराय का एक भी श्वास बाकी है तब तक महाराज और दिल्ली पर आँच तो क्या पानी की बूंद भी नहीं आ सकती। इस बार उस यवन भेड़िये को बता दूँगा कि विश्वासघात का क्या परिणाम होता है।

समरसिंह— जिस दिल्ली में चामुण्डराय जैसे योद्धा हों, उस दिल्ली का एक गोरी क्या हजार गोरी और जयचन्द भी कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। हाँ तो सामन्त! सेना का संगठन, व्यवस्था तथा मोर्चेबन्दी अब तुम्हें करनी है। यहाँ तक कि मैं और महाराज भी तुम्हारे अन्तर्गत हैं। चित्तौड़ के दो हज़ार सिपाही यहाँ पहुँचने ही वाले हैं। चामुण्डराय जैसे चाहें और जहाँ चाहें उनका उपयोग कर लें।

चामुण्डराय— अब अधिक सोचने का अवकाश ही कहाँ है! प्रत्येक सैनिक को समरांगण के लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये। प्रयाण का शंख बजने में अब देर कैसी! हर बूढ़े और जवान के लिये राजाज्ञा है कि वह तलवार कमर से बाँध ले। सामन्त चन्द्रबरदाई! आप अपने किसी विश्वस्त सेनानायक के साथ सेना सहित आपत्ति काल में महाराज की सहायतार्थ छिपे रहेंगे तथा जब महाराज 'सिंह शंख' बजायें तो प्रकट होकर शत्रु सेना पर टूट पड़ेंगे।

महाराज अपने एक सहस्र सैनिकों के साथ पश्चिम दिशा में शहाबुद्दीन गोरी की गति रोकेंगे। सबसे आगे मैं और मेरे पीछे राव जी की मोर्चेबन्दी रहेगी। और उनके बाईं ओर मेरा छोटा भाई देवीसिंह जो अभी केवल पन्द्रह वर्ष का है पर तलवार गज़ब की चलाता है, अपने दो सौ साथी सैनिकों के साथ शत्रु सेना को गाजर मूली की तरह तराशेगा। मेरे बन्दी जीवन में और भी जो जो सेना-नायक आगे आये हों उनको तनिक सामने करो चन्द्रबरदाई!

कर उसकी गति को रोके।

चामुण्डराय— जैसी आपकी इच्छा! बन्दी जीवन में [illegible] गतिविधि रही है उससे मैं परिचित नहीं हूँ। [illegible] पीछा आप सोच लीजिये, क्योंकि समय पर यदि [illegible] पड जाता है तो सारी जीत हार मे बदल जाती है।

चन्द्रवरदाई— राजपूत की यदि सबसे बडी शान है तो यह [illegible] कि उसने पीछे से छुरा कभी नही भोका। वह प्राण तज देता है, पर प्रतिज्ञा से विमुख होना नही जानता।

समरसिंह— यदि युद्धक्षेत्र मे किसी ने भी आँख बदली तो मै वहाँ उपस्थित होकर आँख बदलने वाले की आँखे निकाल लूंगा।

चामुण्डराय— "तो अपनी अपनी तलवार उठाकर प्रतिज्ञा करो कि प्राण दे देंगे पर दिल्ली नही देंगे। चाहे बार बार मरना पडे, पर महाराज पृथ्वीराज पर आच नही आने देंगे।

वीरो! आज माँ के दूध की लाज रखनी है, आज तुम्हे यशस्वी महाराज पृथ्वीराज के नाम पर विधर्मियो और देशद्रोहियो की बलि देनी होगी। शत्रु समझ बैठे हैं कि दिल्ली खाली पडी है, वहाँ वीर नहीं रहे, उनमे आपस मे फूट है।

लेकिन तुम शत्रुओ को बता दो कि शेर सोता रहता है, पर जब जागता है तो दूर दूर तक उसकी गर्जना से शत्रुओ के प्राणो का अन्त हो जाता है।

जिसे अपने प्राणो का मोह हो, जिसे महाराज पृथ्वीराज के प्रति कोई उपालम्भ हो, जिसको पत्नी और बच्चो की चाह पकडती हो, वह अभी से चूडियाँ पहन कर घर में बैठ जाये।

और जिसे महाराज और दिल्ली से प्रेम हो वह प्राणो का मोह तज हमारे साथ चले।

म्यान से तलवार खीचलो और सौगन्ध खालो, दिल्ली नही देंगे, दिल्ली नही देंगे, दिल्ली नही देंगे।"

चौहान की तलवार के साथ साथ सामन्तो और सैनिको की तलवारें खिच गई और एक गगनभेदी प्रतिज्ञा गूंज उठी, "प्राण रहते दिल्ली नही देंगे।"

१६

चौहान के विशाल दृढ दुर्ग के सामने दूर तक फैले बड़े मैदान मे प्रयाण के लिये सेना सुसज्जित खडी है। प्रत्येक सैनिक उत्साह से वक्ष ताने ज्वार की तरह उमडा खडा है। महाराज पृथ्वीराज चामुण्डराय, चन्द्रवरदाई, समरसिह, कृष्णवन्त के साथ शिविर के मध्य एक डेरे मे बहुत ही धीरे धीरे बाते कर रहे हैं।

पृथ्वीराज ने आवेश से किन्तु धीमी वाणी मे कहा— एक एक पल भारी हो रही है। सुना है शत्रु काफी आगे आ चुका है। तराइन के मैदान तक पहुचने मे अब देर नही होनी चाहिये।

कृष्णवन्त— जय में तो कोई सन्देह नही, पर शत्रु की सेना के सामने हमारी सेना बहुत ही कम है। जब तक एक एक सैनिक बीस बीस आक्रान्ताओ को नही काटेगा, तब तक विजय मे बाधा ही बनी रहेगी।

चामुण्डराय— प्रयाण के समय हारी कल्पना करना उचित नही मन्त्री जी ! आप देखते रहिये कि हमारा एक एक सैनिक सौ सौ को भारी होगा ।

समरसिंह— आज अजेय सेना के उन सैनिकों की याद आ रही है जो आये दिन के गृहयुद्ध मे खपा डाले, जो व्यर्थ की शान के पीछे बलिदान कर दिये गये, जो डोलियो की राह में दबे पड़े हैं ।

चामुण्डराय— मन छोटा न करो राव जी ! आज भी हमारा हर सैनिक अजेय है ।

कृणवन्त— राजपूतो में आज भी वीरता की कमी नही । कमी यदि हुई है तो विश्वास की हुई है । जब अपने ही शत्रु बन जाते हैं तो अमृत भी विष बन जाता है ।

पृथ्वीराज— अब इस समय बीती कहानी के पन्ने उलटने मे क्या होगा ! प्रयाण का शख बजाओ राव जी ! जैसे सुबह होने से पहले अँधेरा घिर आता है वैसे ही अब दिल्ली की सुबह होने वाली है । तलवार म्यान से निकलते ही प्रत्येक राजपूत यमराज बन जाता है । अब देर कैसी, प्रयाण घोष हो !

आज्ञा होते ही समरसिंह, महाराज, चन्द्रवरदाई तथा कृणवन्त सेनाध्यक्ष चामुण्डराय के साथ युद्ध के बाने मे शिविर से बाहर निकले और अपने अपने अश्व पर सवार होगये ।

एक बार सेना को चारो ओर देख चामुण्डराय ने शख का तुमुल घोष किया ।

प्रयाणनाद होते ही अश्वो ने उत्साह मे गर्दन उठाई और हवा से बातें करने लगे । झूमते हुए हाथी दौड़ती हुई आँधी की तरह आगे बढ़े । युद्ध-गीत गाते हुए नौजवान ऐसे बढ चले जैसे मृत्यु मर चुकी है ।

यवनों से युद्ध के लिये सेना जा रही थी और स्त्रियाँ विदा [illegible]
रही थी। हर घर से दिल्ली तथा पति, भाई और पिता के लिए [illegible]
की राह ईश्वर से प्रार्थना निकल रही थी। [illegible]
बहिन, हर पत्नी और हर माँ प्रयाण करते हुए अपने भाई, पति और
पुत्र को निहार निहार कर कह रही थी, "प्राण दे देना पर महाराज
का मान न देना! जिस दिल्ली में तुम आज तक [illegible]
दिल्ली की अपने अन्तिम श्वास से भी रक्षा करना!"

महल के वातायन से आँसू बहाती हुई संयोगिता और चन्द्रागदा
भी अपने पति को तब तक देखती रहीं जब तक कि दुर्ग के [illegible]
से सेना सहित पृथ्वीराज आँखों से ओझल नहीं हो गये।

चन्द्रागदा ने संयोगिता को और संयोगिता ने चन्द्रागदा को भीगी
आँखों से देखा तथा दोनों एक दूसरे से चिपट कर रोने लगीं।

दुःखातिरेक में शकुन भी बुरा प्रतीत होने लगता है। संयोगिता ने
रोते हुए कहा— मेरी दायीं आँख फड़क रही है बड़ी बहिन! शकुन
अच्छे नहीं हो रहे।

चन्द्रागदा— अब रोने से क्या होगा बहिन! जो होना था सो हो
चुका। ईश्वर से प्रार्थना करो कि वह हमारे महाराज और हमारी
दिल्ली की रक्षा करे।

संयोगिता— न जाने मेरा मन डर क्यों रहा है।

चन्द्रागदा— क्षत्राणी होकर डरती हो! वीराङ्गना का धर्म रोना
नहीं, तलवार लेकर शत्रु का सर काटना है। साहस है तो अपनी दिल्ली
को सँभाल और तलवार लेकर महाराज की अनुपस्थिति में दुर्ग की
रक्षा कर! यदि सच्ची पतिभक्ति है तो दुर्ग के द्वार पर चाहे तुम्हारा
पिता ही आक्रान्ता क्यों न हो उनका भी उसी के लहू से तर्पण करना
होगा।

संयोगिता— मुझे महाराज से प्रेम है। उनके जीवन के मार्ग में यदि मेरे पिता भी आयेंगे तो वे भी मेरे शत्रु हैं। जब तक महाराज यवनों से लड़ेंगे तब तक मैं क्षत्राणियों सहित दुर्ग पर पहरा दूंगी।

तलवार खींच खींच कर दुर्ग के द्वार पर क्षत्राणियां अड़ गईं और उधर तराइन के मैदान में चौहान की सेना ने शंख बजाया।

चामुण्डराय ने तेजी से सामने की ओर देखते हुए गर्ज कर कहा— "अमावस्या की कालिमा की तरह यवनों की सेना बढ़ी चली आ रही है। सूर्य की तरह अन्धकार फाड़ने के लिये तैयार हो जाओ।

महाराज! आप अपनी सेना सहित यहीं ठहरें! मैं सब से आगे जाता हूँ। देवीसिंह! तुम बाईं ओर जाओ। कविराज! आप महाराज की रक्षा के लिये उस सामने वाली पहाड़ी की ओट में रहिये। तेजसिंह! तुम महाराज से दो सौ कदम दूर उन पेड़ों के पीछे छिप जाओ और जैसे ही महाराज की प्रच्छन्न ध्वनि हो उनकी सहायता के लिये निकल आना।

शत्रु सेना बहुत निकट आ पहुँची है। अब देर कैसी? भारत माता के वीर पुत्रो! दिल्ली के अजेय सैनिको! आज तुम्हारी परीक्षा का यह अन्तिम अवसर है। यदि इस बार जीत गये तो काल भी तुम्हें पराजित नहीं कर सकता।

आज एक एक राजपूत से महाचण्डी सौ सौ यवनों की बलि चाहती है। शपथ है तुम्हें गौ और ब्राह्मणों की, इस देश की गंगा-यमुना और मन्दिरों की! मृत्यु या जय दो में से एक ही को वरण करना है।"

"जय महाकाली! जय शम्भो! हर हर महादेव!" युद्ध का शंखघोष करते हुए चामुण्डराय आग की लपटों की तरह आगे बढ़े।

उधर से यवन सेना भी "नाराये तदबीर, अल्लाहो अकबर !" का घोष करती हुई टीडीदल की तरह दिल्ली की सेना पर टूट पडी। और काटने लगा मनुष्य मनुष्य को।

युद्धभूमि मे न दया रहती है, न धर्म। वहां केवल रक्त और तलवार की धार मात्र होती है। भूखे नरपशु मनुष्यो को गाजर मूली की तरह तरासते और भीषण अट्टहास करते हैं।

असंख्य यवन सेना पर दिल्ली के वीर सिपाही शेरो की तरह झपट पडे। वे प्लेग के कीडो की तरह शहाबुद्दीन गोरी की सेना को बात की बात मे मौत के घाट उतारते और कभी यहाँ तो कभी वहाँ फैल जाते। एक एक राजपूत सौ सौ जवानो की तरह दीखने लगा। उसकी तलवार कभी इस यवन की गर्दन पर होती तो कभी उस जवान के सीने मे होती। अभी यह इस को मौत के घाट उतार कर चुका था तो अभी इसने उसका सर काट डाला।

आक्रान्ता दिल्ली के भीषण आक्रमण से घबरा उठे। अपनी फौज के पैर उखड़ते देख यवन सेना के दो बहादुर सरदार मल्लू खाँ और फैज़खाँ चामुण्डराय के सामने आ डटे और गर्ज कर बोले— "तुम्हारी कुर्बानी देने के लिये हम आ गये हैं। काफिर कही के ! तेरी भी कोई शान है ! कल तक जिस मालिक ने तुझे कैद में डाल रखा था आज उसी के लिये मरने को आ गया ! लानत है तुझ पर !"

चामुण्डराय— "लानत तो तुम पर है, जो हमारे मालिक से दान मे मिली हुई जिन्दगी से जी रहे हो। भूल गये वह दिन, जब शहाबुद्दीन गोरी ने दांत में तिनका दबाकर माफी माँगी थी। ऐसे दानी पृथ्वीराज पर धरती को गर्व हो सकता है, लेकिन तुम जैसे कायरो पर धर[illegible] [illegible]भी विश्वास नही करेगी। तुम जिस हांडी मे खाते हो [illegible]

हो। हम अपने महाराज को पितातुल्य मानते हैं। वे हम पर नाराज़ होकर कैद तो क्या, शूली पर भी चढा सकते हैं। हम उस धर्म और जाति के मनुष्य नही हैं जो राज्य के लिये अपने माँ बाप को भी कत्ल कर दे। हम अपनी दिल्ली के सदा वफादार रहे हैं और रहेंगे। तुमने समझ लिया होगा चौहान अकेले हैं, किन्तु जब तक चामुण्डराय जीवित है तुम जैसे करोडो भी महाराज का कुछ नही बिगाड सकते।"

फैज खाँ— "यह काफिर ऐसे नही मानेगा मल्लू खाँ! टुकडे टुकडे कर डालो इस पाजी के!"

कहते हुए फैज खा और मल्लू खाँ ने एक ही साथ चामुण्डराय पर वार पर वार किये। पर वाह रे देश-भक्त! वाह रे तलवार के धनी! दोनो हाथो मे तलवार ले चामुण्डराय दोनो से दुर्ग की तरह युद्ध करने लगे। मल्लू खा ने जब देखा कि महायोद्धा वस मे नही आता तो दूर से भाले का एक भरा हुआ वार चामुण्डराय पर किया।

किन्तु चामुण्डराय ने अपनी भारी साग से भाले को बीच से काट दो टुकडे कर दिये, और उसी साग का भरा हुआ हाथ मल्लूखाँ के सर पर इस ज़ोर से मारा कि मल्लूखा को सर से सीने तक चीर अपनी साग खीच ली, और दूसरे हाथ की तलवार से फैज़ खा की गर्दन धड से अलग कर दी।

दोनो सरदारो के मरते ही चामुण्डराय के सामने के मोर्चे वाली फौज के पैर उखड गये। कुतुबुद्दीन ने जब देखा कि फौज पीछे हट रही है तो अपने चुने हुए सैनिको के साथ वे आगे बढ आये।

इस समय चामुण्डराय का विकराल रूप देखने योग्य था। देवी दुर्गा की तरह जैसे उनकी आठ भुजायें हो! भगवान शकर की तरह जैसे उन का तीसरा नेत्र खुल गया हो!

चामुण्डराय की पैतरेबाजी और तलवार की फुर्ती देख गजनी के बहादुर सिपहसालार कुतुबुद्दीन काप उठे। राजपूतो की तलवार से अपनी फौज की कयामत बरपा देख कुतुबुद्दीन ने मन ही मन मे सोचा कि इन लासानी बहादुर को ऐसे वश मे नही किया जा सकता।

तब उनने अपनी हाथियो की फौज को आगे बढाया और गजनी के खूनी हाथी को चामुण्डराय की ओर धकेल दिया।

अपने सामने असख्य सेना और हाथियो को देख चामुण्डराय को दिल्ली के पत्तावत हाथी की याद आ गई। पर हाथियो के इस भयकर झुड से भी सामन्त विकम्पित नही हुए।

क्रुद्ध सामन्त ने अपने एक हाथ की तलवार हाथी के मस्तक मे मारी और दूसरी पैतरा बदलकर तुरन्त कमर मे घुसेड दी।

किन्तु हाय रे दुर्दैव! चामुण्डराय की तलवार हाथी की हड्डी के बीच मे फसकर टूट गई और खूनी हाथी पागल हो उठा।

उधर चामुण्डराय पर चारो ओर से वार हो रहे थे, इधर इनके हाथ मे केवल एक तलवार शेष रह गई थी। सामन्त ने चारो ओर से अपने को घिरा देख जीवन की आशा तज तलवार का एक अकाट्य वार खूनी हाथी पर किया।

वार हाथी की पसली मे लगा और वह लहू मे लथपथ चिघाड मारता हुआ चामुण्डराय पर पिल पडा।

चामुण्डराय तुरन्त अश्व से कूद हाथी की सूड के सामने आ गये, और उसकी सूड ऐंठते हुए उसे घुटनो के बल से नीचे गिरा दिया तथा तलवार से उनके दो टुकडे कर डाले।

पर जैसे ही हाथी को मार दिल्ली के इस अद्भुत योद्धा ने चाहा वैसे ही भाले, बरछी और तलवारे उन पर बरस पडी, इस प्रकार दिल्ली के ये अमर महावीर वीरगति को प्राप्त हो गये।

पहली हार

वीर सामन्त चामुण्डराय का अन्त होते ही कुतुबुद्दीन अपनी सेना वहाँ ले आये जहाँ राव समरसिंह अपनी सेना सहित बेशुमार फौज से मोर्चा ले रहे थे।

यवन सेना के दो बड़े सरदार नूरुद्दीन और फजलुलहक कुतुबुद्दीन को अपनी मदद के लिये देख मरते मरते जी उठे। पर समरसिंह के सामने तो इस समय चाहे सारे असुरगण भी इकट्ठे होकर आ गये होते तो भी समरसिंह के साहस को नहीं जीत सकते थे। उँगली उँगली में कवच पहने राव जी कर्ण की तरह अजेय थे। शान्त प्रकृति के महा योद्धा का रुद्र रूप आज इतना विकराल था कि उनकी आँख से आँख मिलते ही आक्रान्ता मिट्टी में मिल जाता था।

कुतुबुद्दीन ने समरसिंह पर शमशीर का वार करते हुए कहा—"चामुण्डा मर चुका, अब तू भी हथियार डाल दे।"

समरसिंह ने शमशीर का वार रोक उसी हाथ पर अपनी तलवार का का वार करते हुए हुंकार कर उत्तर दिया— "तेरे जैसे कायर की क्या ताकत है कि समरसिंह से हथियार डलवा ले।"

समरसिंह की तलवार से कुतुबुद्दीन की उंगली का अग्रभाग कट गया। जब उसने देखा कि समरसिंह को जीतना भी सहज नहीं है तो उसने बिगुल बजाकर अपनी दूसरी ओर खड़ी हुई सेना को भी बुला लिया तथा राव जी को चारों तरफ से घेर लिया।

समरसिंह पर एक ओर से हक वार कर रहे थे, दूसरी ओर से दीन, और सामने से कुतुबुद्दीन प्रलय की बिजली की तरह उन पर टूट टूट पड़ता था।

पर जैसे भयंकर काली घटाओं में चपला चमक चमक उठती है, वैसे ही कभी इस तो कभी उस यवन के मस्तक पर समरसिंह की बिजली सी तलवार तड़क तड़क उठती थी।

पर प्राण बचने की आशा राव जी को भी अब न थी। 'मरता क्या न करता' के अनुसार वे सुदर्शन चक्र की तरह यवनो को तरासने लगे। रोष से उबलकर वे भूखे शेर की तरह फजलुलहक और नूरुद्दीन को खा गये, अपने पैने पजो से उन्होंने दोनो को फाड डाला।

लेकिन कहाँ एक और कहाँ हजार, आखिर वे कब तक टीडीदल से लडते ! जब जब भी उन्होने यवन सेना को पीछे धकेला तभी तब यवनो की कुमुक आ गई।

इस बार भी यवन सेना भागने को ही थी कि राव जी के सामने बहुत बडी सख्या मे हिन्दू सेना मोर्चे पर आ डटी। राव जी ने देखा कि सिन्ध से लेकर लाहौर तक की हिन्दू सेना मुसलमानो की ओर से लड रही है। यह देखकर भयकर क्रोध-काल मे भी उनकी आँखो से आँसू निकल पडे। करुणा और क्रोध के इस सगम मे समरसिह ने मन ही मन मे कहा, "हम परायो से नही, अपनो से हार रहे हैं।" और फिर काल की तरह दुश्मनो पर टूट पडे।

लगभग एक घण्टे तक राव जी अपनी थोडी सी सेना के साथ बेशुमार हिन्दू और मुस्लिम सेना से लडते रहे, यहाँ तक कि उनका रोम रोम क्षत विक्षत हो गया। फिर लडते लडते दिल्ली की ध्वजा के नीचे इन महान् वीर ने अपने प्राणो के पुष्प अर्पित कर दिये।

ढूँढने से शायद इस मिट्टी मे वे फूल आज भी कही पडे मिल जाये जिससे खोये हुए इतिहास का वह पृष्ठ युगयुगान्तर तक उज्ज्वल रहेगा और रोता रहेगा।

आज की रात इसलिये हुई कि भारत के अद्वितीय वीर राव समरसिंह के शोक मे पृथ्वीराज चौहान की आँखे बरस रही थी। अँधेरा हो गया और रात भर के लिये दोनो ओर के वीर अपने अपने मोर्चो पर मौन हो गये।

पृथ्वीराज ने अपनी छाती पर मौन मुक्का मारते हुए हृदय विदारक आह भरी और आप ही आप कहने लगे, "चौहान के दायें और बायें हाथ कट गये। राव जी और चामुण्डराय दोनों ही अपने रक्त की अन्तिम बूंद तक दिल्ली पर चढ़ा गये। ऐसे देशभक्त और वीर धरती पर बार बार नहीं आते।"

आप ही आप कहते हुए चौहान की हिचकियाँ भर आईं। पर तभी चुपचाप सैनिक सकेत करते हुए चन्द्रवरदाई चौहान के पास आकर उनसे चिपट गये और रोते हुए कहने लगे— "अब क्या होगा महाराज! राव जी और चामुण्डराय अपनी दो सहस्र सेना से शत्रु की बीस सहस्र सेना समाप्त कर वीर गति को प्राप्त हो गये। इन दोनों महावीरों ने असंख्य यवनों के बार बार पैर उखाड़े, पर हिन्दुओं की कुमुक आने से हारते हुए विधर्मी भागते भागते फिर आगे बढ़ आये।

कटते कटते भी यवन और देशद्रोही बढ़ते ही जा रहे हैं। मुझे ऐसा लग रहा है जैसे हम लड़ाई हार चुके।"

पृथ्वीराज— "राव जी और सामन्त चामुण्डराय की मृत्यु से साहस न छोड़ो सखे! लोकानिरेक से चौहान ने शस्त्र नहीं डाल दिये हैं। कल धरती पर वह प्रलयकारी युद्ध होगा कि एक भी विधर्मी जीवित बचकर नहीं जा सकता। यह समय हिम्मत हारने का नहीं है। सामन्त और राव जी के शव प्राणों पर खेल कर हमारे वीर सैनिक रात के अंधेरे में युद्ध भूमि से उठा लाये हैं। मैं नहीं चाहता कि किसी भी विधर्मी का हाथ उन पवित्र वीरों के शव को छुवे। सूर्योदय से पूर्व दोनों के देह संस्कार करने का साहस है कविराज!"

चन्द्रवरदाई— "चार सैनिकों के साथ मैं राव जी और सामन्त के शव संस्कार के लिये ले जा रहा हूँ और अरुणोदय से पूर्व ही आ जाऊँगा।"

पृथ्वीराज— "चलो, रावजी और सामन्त की अन्तिम झांकी देख लें।"

कहते हुए महाराज पृथ्वीराज उस स्थल पर आ गये जहाँ वीर राजपूतों के पहरे में राव जी और चामुण्डराय के शव ध्वजावेष्टित रखे थे।

पृथ्वीराज ने धीरे से चिर निद्रा में सोये राव जी और सामन्त के मुँह से पल्ला हटाया और जैसे पहाड फट पडता है वैसे ही फूट पड़े।

रोते ही रोते चौहान ने कहा— "क्षमा करना राव जी! तुम ऐसे क्यों रूठ गये सामन्त! चौहान अब किसके सहारे जियेगा?"

चन्द्रवरदाई— 'यह विलाप का समय नहीं है महाराज! राव जी और सामन्त की मृत्यु का प्रतिशोध लेना है।"

कहते हुए चन्द्रवरदाई ने घोड़ों पर दोनों वीर देश-भक्तों के शव रखे और नदी की राह पकडी।

दिवगत राव जी और सामन्त को अभिवादन कर चौहान अपने मोर्चे पर आ गये। वे रात भर यही सोचते रहे कि कब सुबह हो और कब शत्रु सेना का नाश करूँ।

सोचते ही सोचते लाल सुबह आ गई। ललकारते हुए चौहान ने कहा— "कृष्णवन्त! तुम दाई ओर से शत्रु सेना पर टूट पड़ो। देवीसिंह! तुम उधर से घूमकर दुश्मनों को दलो। मैं सामने से आक्रमण करता हूँ। देखता हूँ आज कौन विधर्मी बचकर जाता है।"

"हर हर महादेव! हर हर महादेव!" करते हुए चौहान सेना सहित विधर्मियों को चीरते हुए उनके बीच में घुस गये। प्रलय की बाढ जैसे गाँव को डुबा देती है, वैसे ही चौहान ने पहले ही तूफानी आक्रमण में शत्रु सेना का एक भाग यमपुरी पहुँचा दिया, और फिर आक्रांताओं का अन्धाधुन्ध हनन करने लगे।

शत्रुओं को चीरते चीरते वे वहाँ आ गये, जहाँ अपने बलवान

सरदारो के साथ शहाबुद्दीन गोरी मोर्चे पर था। भूखे शेर को अपने सामने देख गोरी के आधे प्राण तो तुरन्त ही उड गये। किन्तु जब उसने देखा कि कुतुबुद्दीन, बख्तियार तथा और बडे बडे बहादुर बडी बडी फौज के साथ उसकी रक्षा और जीत के लिये लड रहे हैं तो वह भी ज़ोरो से हथियार चलाने लगा।

किन्तु चौहान की तेज़ी के सामने सब के हौसले पस्त थे। बख्तियार ने आगे बढ कर चौहान पर वार किया और साथ ही कुतुबुद्दीन ने भी। पर चौहान ने दोनो का वार बचा दोनों के घोडे घायल कर दिये।

कुतुबुद्दीन और बख्तियार पीछे हट कर अपने दो अन्य फौजियों के घोडों पर सवार हो फिर मुकाबले पर आ गये। पर किस मे साहस था जो चौहान को जय कर सके।

चौहान के साथ मानो समस्त रुद्र और उनचासो पवन हों। भयकर तूफान के सामने जो भी आता, वही मौत के घाट उतर जाता था।

दिलेरखा आगे बढा, पर चौहान की तलवार तुरन्त उसे चाट गई। शमशीर बहादुर आगे आये और वे भी पहले ही वार मे साफ हो गये। तनशीरखां ने कदम बढाया, पर उनको भी यमराज ले गया।

पृथ्वीराज की महामारी से गोरी की हिम्मत टूटने लगी। पर कुतुबुद्दीन ने दिलासा देते हुए अपना कदम न रोका। कुतुबुद्दीन ने बख्तियार को जोश के शब्द कहते हुए आगे बढाया और खुद भी जीत या मौत के मझधार मे कूद पडा।

मुसलमानो के इन आक्रमण से चौहान की सेना मे खलबली सी

मची। पर ठीक उसी समय देवीसिंह जयघोष करते हुए उसी मोर्चे पर आ पहुंचे जहाँ चौहान की सेना हिम्मत हार रही थी। उचित समय पर कुमुक देखकर राजपूतो के साहस फिर चौगुने हो गये।

देवीसिंह ने गर्जते हुए कहा— "महाराज पृथ्वीराज की जय हो! उस तरफ से यवनो की फौज भाग गई। तूफान का एक धक्का लगा तो सामने से भी दुश्मन भागते दीखेंगे।"

फिर क्या था, देवीसिंह और चौहान दोनो ही अड्डा कर टूट पडे। किन्तु कुतुबुद्दीन की बहादुरी के भी क्या कहने थे! एक कदम भी पीछे नही हटा और देवीसिंह का सामना रोक लिया।

कहाँ वीर बालक देवीसिंह और कहाँ सुलझा हुआ बहादुर कुतुबुद्दीन! पर सिंह ने दीन के छक्के छुडा दिये, मानो अभिमन्यु ने सप्त महारथियो को जीत लिया।

दीन ने जब देखा कि सिंह आसानी से वश मे नही आयेगा तो उसने दाँत पीसते हुए सामने से तलवार का भयकर वार किया।

क्योंकि ठीक इसी समय बराबर मे आकर एक दूसरे यवन ने सिंह पर भाले का वार कर दिया था, इस से सिंह की दृष्टि चूक गई और कुतुबुद्दीन की तलवार से सिंह स्कन्ध से पेट तक कटते चले गये।

इधर सिंह चले, उधर से सूचना मिली कि कृपावन्त भी लडते लडते मर गये। यवनो के सामने अब केवल चौहान ही मौत की तरह थे।

अड्डा कर हिन्दु और मुसलमान पृथ्वीराज पर टूट पडे। पृथ्वीराज ने जब अपने सामने बेशुमार सेना देखी तो उत्साह से उनकी छाती इतनी फूली कि कवच तक मे तरेड आ गई।

पहली हार

चौहान घोड़ा छोड़ कर हाथी पर सवार हो, धनुष बाण ले तीरो की वर्षा करने लगे। कमाल था उनके तीर चलाने मे! एक एक तीर बीस बीस सैनिको के सीने चीर कर निकल जाता था, इतनी फुर्ती थी उनके तीर चलाने मे।

जब चौहान के तूणीर मे तीर नही रहे तो उन्होने ढाई मन का भाला उठाया। भाला घुमाते हुए वे ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानो भीम गदा चला रहे हो। लगभग एक घण्टे तक वे शत्रुओ का नाश करते रहे। अन्ततोगत्वा उनका भाला एक हाथी की हड्डी मे घुस गया और वह हाथी चिंघाड़ मारता हुआ ऐसा भागा कि पृथ्वीराज को भाला छोड़ना पड़ा।

भाला छोड़ कर पृथ्वीराज ने साँग उठाई, और इस प्रकार घुमाने लगे मानो कृष्ण सुदर्शन चक्र चलाने लगे। एक हाथ मे साँग और दूसरे हाथ मे खाँडा, मानो पेट भर कर बकरीद मनाने पर तुले हुए है।

चौहान की भयंकर मार से गोरी की फौज भाग खड़ी हुई। अपनी फौज को भागते देख कर कुतुबुद्दीन और बख्तियार ने एक विशेष प्रकार का ढोल बजाया जिसके सुनते ही छिपी हुई मुस्लिम फौज आँधी की तरह आ निकली।

कितने ही बलवान सरदारो ने एक साथ चौहान पर हमला कर दिया। यह देखकर चौहान ने भी अपना गुप्त शंख बजाया। पर उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा कि जब उन्होने देखा कि तेजसिंह चौहान की नहीं, सुलतान की मदद के लिये निकल कर आया। वह उल्टा चौहान की सेना पर ही पिल पड़ा।

यह देख कर चौहान जीवित मर से तो गये, पर क्रोध और भी भड़क उठा। इतने ही में चन्दबरदाई उनकी सहायता के लिये आ पहुँचे और कहते हुए बोले— 'तेजसिंह धोखेबाज निकला। वह

जयचन्द का भेजा हुआ कपटी था। जयचन्द भी सेना लेकर गोरी की मदद को आ पहुँचे हैं।"

माथे का पसीना पोंछते हुए चौहान ने कहा— "तो अब कुछ नहीं हो सकता। तुम दिल्ली चले जाओ चन्द ! और मैं यवनों और देशद्रोहियों को दलता हूँ। महल में रानियों से कहना कि वे यवनों के पैर महल में आने से पहले ही जौहर कर लें।"

चन्द्रबरदाई के आँसू निकल पड़े। उन्होंने रोते हुए कहा —"आपको इस अवस्था में छोड़कर मैं कैसे जा सकता हूँ !"

पृथ्वीराज— "नहीं सखे ! यह समय आँसू बहाने का नहीं है। राज्य तो जा रहा है पर अस्तित्व तो बचा लो ! कम से कम दिल्ली के इतिहास में यह तो लिखा रहे कि चौहान ने अन्त समय तक दिल्ली और सतीत्व की रक्षा की। जाओ चन्द्र, आज्ञा का पालन करो !"

चन्द्रबरदाई दिल्ली की ओर चल पड़े और चौहान फिर यवनों पर भयानक भूकम्प की तरह पिल पड़े ।

यवनों ने एक साथ हल्ला बोला। बड़े बड़े बाँके बहादुर अकेली जान पर झपट पड़े। तातारखाँ ने तलवार का वार किया, पर चौहान ने बायें हाथ से उसकी कलाई मोड़ तलवार छीन उसी की तलवार से उसके दो टुकड़े कर दिये। कयामत ने हौसला किया, पर उसकी तलवार उठी भी नहीं थी कि चौहान ने उसे यम के हवाले कर दिया।

इसी तरह चौहान ने जो भी सामने आया उसको मौत की भेंट चढ़ा दिया। कुतुबुद्दीन और बख्तियार चौहान के बिजली से वारों से बार बार काँप उठते थे।

आखिर बख्तियार, दीन और गोरी तीनों ने कितने ही सरदारों के साथ चौहान पर वार पर वार शुरू कर दिये।

चोहान प्रत्येक का वार रोकते और अपने वार से उसे मिटा डालते थे। बराबर लडते लडते उनकी साँग टूट गई, खाडा न रहा और तलवार की भी मूठ ही मूठ उनके हाथ मे रह गई। चोहान को निहत्था देख बख्तियार ने गर्ज कर कहा— "अब क्यो बेकार कोशिश कर रहा है, कैद हो जा और हार मान ले!"

"तेरी यह मजाल कि चौहान से हार मनवा ले!" कहते हुए चौहान ने एक भयकर घूसा बख्तियार की नाक पर मारा।

बख्तियार की नाक से नकसीर टूट पडी और वह पीछे हट गया।

बख्तियार पीछे हटा कि जालिमखा और हनीफ खा ने चौहान को पकडना चाहा, पर चोहान ने हनीफ को एक हाथ मे उठा ऐसे फेका जैसे कोई बच्चा गेद को फेकता है। और फिर अगले ही क्षण जालिमखा को उसके घोडे से अपने हौदे मे खीच पैर पर पैर रख टाग पकडकर उसे बीच से चीर फेका।

शहाबुद्दीन गोरी ने निहत्थे पृथ्वीराज की मार देख घबराकर कहा— "इस शैतान को पकडो, नही तो यह थोडी ही देर मे मुझे और तुम सबको खा जायेगा कुतुबुद्दीन! यह यमराज ऐसे वश मे नही आयेगा, इसे हाथी के ऊपर फदा डालकर पकडो, नही तो जो भी इसे पकडने जायेगा उसी को यह निहत्था होते हुए भी अपनी भुजाओ मे भीचकर मार डालेगा।"

कुतुबुद्दीन— "ठीक कहते हो मालिक! यह मलिकुलमौत ऐसे नही मरेगा, इसे किसी तरह से गिराना चाहिए। इसके हाथी के पैर मे लोहे की जजीरो का फदा डालकर इसे गिरा लिया जाये और फिर इसकी मुश्के बाध दी जाय।"

कहकर कुतुबुद्दीन ने हाथियो के झुड आगे धकेले और धोखे से चोहान के हाथी के पैर मे जजीर डालकर भारत के एकमात्र योद्धा पृथ्वीराज चौहान को नीचे गिरा दिया।

और फिर रस्सो से बाँध क्षत-विक्षत यह अद्वितीय महायोद्धा बन्दी बना लिया गया।

१७

पृथ्वीराज चौहान को बन्दी बना कर शहाबुद्दीन गोरी ने मुस्कराते हुए कहा— बोलो क्या चाहते हो, मौत या माफी ?

पृथ्वीराज— माफी, और उसने जो बार बार नाक रगड़ कर मुझसे माफी माँग चुका है, जो मुझसे भीख में ली हुई जिन्दगी पर जी रहा है।

गोरी— अगर हमारे गुलाम बन कर जिन्दा रहना चाहो तो हम इस हालत में भी तुम्हें माफ कर सकते हैं।

पृथ्वीराज— बहादुर है तो अब भी तलवार हाथ में लेकर सामने आना! और फिर देखें कौन किससे माफी माँगता है।

गोरी— रस्सी जल गई पर बल अभी बाकी है।

पृथ्वीराज— चौहान लड़ाई हारा है, हिम्मत नहीं हारा। ये आँखें जो तुझे घमण्ड से घूर रही हैं, मेरे पैरों को बार बार आँसुओं से धोने वाली निगाहें हैं।

इतने ही मे जयचन्द ने आकर अट्टहास करते हुए कहा— "मुबारिक है सुलतान साहब ! कहिये चौहान साहब ! कैसे मिजाज हैं ?"

पृथ्वीराज ने अपनी आंखे मीचते हुए कहा— "बहुत अच्छा हूँ ससुर साहब ! लेकिन एक देशद्रोही के मुंह से अच्छा उस विधर्मी का मुख है, जो तुम्हारे पाप से आज भारत पर पहली बार विजयी हुआ है। हट जाओ मेरी आंखो के सामने से, मैं तुम्हारा मुंह देखना नही चाहता।"

जयचन्द क्रोध से उबल उठा। उसने सुलतान की ओर देखते हुए कहा— "इसकी आँखे निकलवा दो !"

गोरी— "बहुत अच्छा राजा साहब ! जो आपका हुकुम !"

और फिर दो जल्लादो को हुकुम दिया कि भाले गर्म करके चौहान की आँखे फोड डालो।

गर्म भालो से चौहान की आँखे दाग दी गईं। भीषण अट्टहास होता रहा, और इधर भारत के इस पराक्रमी वीर पर मनमाने अत्याचार हो रहे थे।

जिसकी आँखें देखते ही शूरमाओं की आँख बन्द हो जाती थी, आज वही लाचार था। जयचन्द से अधिक अभागा आज और [illegible] होगा, जो अपने देश के दीपक बुझाकर गुलामी के दीपक की [illegible] उल्लास की श्वासें ले रहा था।

जयचन्द ने आनन्द की लम्बी श्वास लेकर गोरी की ओर देखते हुए कहा— "अब वायदा पूरा कीजिये सुलतान साहब ! की हुई [illegible] के अनुसार दिल्ली हमारी है और दिल्ली की लूट आपकी।"

गोरी— "कैसी दिल्ली ! किसकी दिल्ली ! [illegible]"

था? हजारों कोस की खाक छानता हुआ, लाखों जान मिटाता हुआ यहां तक मैं आया, और दिल्ली तुम्हें दे दूं!"

जयचन्द— "तो क्या दिल्ली मुझे नहीं देंगे?"

गोरी— "दिल्ली तो क्या, अब तो कन्नौज भी हमारा है।"

सुनकर भयानक पीड़ा में भी चौहान को हँसी आ गई, और साथ ही वे फूटी आंखों से रो भी पड़े। खून के आंसू बहाते हुए उन्होंने कहा— "देख लिया देशद्रोह का परिणाम! अपने से धोखा कर जो दूसरों की मदद करते हैं उनकी यही दशा होती है। हिम्मत है तो अब भी तलवार उठा और इन विधर्मियों से बदला ले! बचा सकता है तो अब भी दिल्ली को बचा ले!"

जयचन्द जो अब तक दांत पीस रहा था गर्जता हुआ बोला— "यह न समझना सुलतान साहेब! कि चौहान को बन्दी बना लिया है। जयचन्द अभी जीवित है, और उसके जीते जी किसकी ताकत है जो दिल्ली को छू सके।"

गोरी— "ओह हो, चींटी के भी पर निकलने लगे! बख्तियार, कुतुबुद्दीन! देखते क्या हो, कैद कर लो इस काफिर को भी।"

पर जयचन्द ने तुरन्त अपने घोड़े को एड़ लगाई और अंगरक्षकों सहित वहां आ पहुंचे जहां उनकी सेना खड़ी थी। आते ही उन्होंने भयंकर लड़ाई का शंख बजाया।

यह शोर सुनकर सैनिक अभी उद्यत भी नहीं हुए थे कि बख्तियार और कुतुबुद्दीन अपनी फौज लेकर वहां आ पहुंचे। कुछ देर तक जयचन्द और गोरी की सेना में भयंकर युद्ध हुआ। अन्ततोगत्वा जब जयचन्द ने देखा कि जीतना असम्भव है, तो वह भाग निकला।

तब कुतुबुद्दीन और बख्तियार ने भागते हुए जयचन्द का पीछा

किया। कोसो दूर निकलने के वाद गगा किनारे आकर जयचन्द को रुकना पडा और फिर परम पावनी गगा के तट पर विधर्मियो और देशद्रोही की तलवारे टकरा गई।

पर जयचन्द के पास कुमुक कहाँ थी! वख्तियार और दीन की तलवारो से वह लहूलुहान हो गया। जव उसने देखा कि विधर्मियो के हाथ से वचने का कोई उपाय नही है, तो वह वेग से वहती हुई पतित-पावनी गगा मे डूब मरा।

जो अपनो को मिटाना चाहता है, उसका परिणाम आज जयचन्द के रक्त से लिखा गया। गैर की दोस्ती मे भी ज़हर होता है, और अपने की शत्रुता मे भी विप है। आज भारतमूमि रो रही थी, क्योकि यवनो के घोडे उसकी छाती पर दौडते जा रहे थे। चौहान वन्दी थे, जयचन्द मर चुका था, तथा शेप राजा वहुत दूर से सुख से सोये स्वप्न में यह सव देख कर प्रसन्नता से काँप रहे थे।

जयचन्द के मरते ही माहिल ने अपना सर पत्थरो पर फोडते हुए कहा, "यह क्या हो गया! तेरे ही पापो से इस देश का ध्वस हुआ हे माहिल! तूने ही इस देश मे यवनो को वुलाया है देशद्रोही! तेरी ही चुगलियो ने हिन्दुओ को मिटा डाला चुगलखोर! अव तू ही इस जग मे जीकर क्या करेगा!"

× × × ×

दस्युराज शहावुद्दीन गोरी कुतुवुद्दीन और वख्तियार के साथ दिल्ली लूटने के लिये आगे वढा। जो भी मन्दिर सामने आया, उसी की सोने की मूर्तियाँ उसने उखाड ली और मन्दिरो को हरमो मे वदल दिया।

डाकुओ की तरह गजनी के लुटेरे दिल्ली मे वडे। जो भी सामने

आया उसी का कत्ल, जो भी मिला उसी को लूट लिया, न बूढ़े को देखा न बालक को।

जो भी औरत आभूषण पहने दिखाई दी, सैनिकों ने उसी के आभूषण उतारे और मनचाही की। बहू बेटियों पर जो बलात्कार हुए वे इतिहास में चाहे न हों पर जिनको पहचान है उनकी आँखों से नहीं हट सकते।

गोरी ने अपने सैनिकों की ओर देख अट्टहास करते हुए कहा—'घर घर में घुस जाओ और जो भी हाथ लगे लूट लो।'

दिल्ली त्राहि त्राहि पुकार उठी, पर ऐसे हाहाकार में कौन बिचारी की सुनता! वह दिल्ली जिसके लोहे से बड़े बड़े बहादुर थर्राते थे ऐसे रौंदी जा रही थी जैसे कुम्हार मिट्टी को रौंद रहा हो।

× × ×

महल में विलाप करती हुई संयोगिता ने चन्द्रांगदा को देखा और चन्द्रांगदा ने दिल्ली को। तथा फिर संयोगिता फूटती हुई बोली—'यह क्या हो गया बड़ी बहिन!"

चन्द्रांगदा— "विनाश! अब क्यों रोती हो संयोगिता! हँसो, जोर जोर से हँसो! गजब कत्ल हो रही है, मन्दिर तोड़े जा रहे हैं, दिल्ली लूटी जा रही है, साधु सन्तों को मिटाया जा रहा है। गाओ, अब तो गाओ! तुम्हारे पिता के शत्रु दिल्ली के महाराज मिट गये।"

संयोगिता— "जो चाहो कह लो बहिन! आज मैं अपराधिनी हूँ। मेरे ही कारण दिल्ली की यह दुर्दशा हुई है।"

सहसा एक साधु ने चुपचाप प्रवेश करते हुए कहा— "किसी के रोने से कुछ नहीं होता, होता वही है जो होनी चाहती है। देश के पैरों में सदा सदा के लिये बेड़ियाँ पड़ गईं, चाहे कभी मुक्त भी हो

जाये किन्तु हिन्दू धर्म और सस्कृति के गले की सूली तो हमेशा के लिये टाँग दी गई। अव रोने से क्या होता हे ! दिल्ली गई, धर्म गया, स्वतत्रता गई, तुम्हारा सुहाग गया और साथ ही देशद्रोही जयचन्द को भी यवनो ने मार डाला। अव कन्नौज भी दास है। लेकिन महल की रानियो की लाज तो वची रहे। तुम्हारे सतीत्व पर तो आँच न आये !

देखो, वे लुटेरे लूटते हुए महल की ओर आ रहे हैं। वे तुम्हे अपने हरमो की लौंडी वनाना चाहते हैं। वे तुम्हारे शरीर को हाथ लगाये इससे पहले तुम इस पञ्चभौतिक देह को भस्मसात् कर लो, जीवित चिता मे जल जाओ !"

रानियो ने ध्यान से साधू की ओर देखते हुए तडप कर कहा — "कौन, राजकवि सामन्त चन्द्रवरदाई ! तुम्हारी यह क्या दशा हो गई कविराज ! जो दिल्ली के राजसिहासन के वरावर मे पूर्ण सज्जा से सुशोभित होते थे, आज फकीरी धारण किये खडे हैं !"

चन्द्रवरदाई— "समय का फेर है, कभी गाडी नाव मे तो कभी नाव गाडी मे होती है। और कोई घडी ऐसी भी होती है जव नाव मँझधार में डूव जाती है।

अव अधिक सोचने का समय नही है। लुटेरो का घोप पुराने पाण्डव दुर्ग पर सुनाई दे रहा है, यहाँ तक आने मे उनको अव अधिक देर नही लगेगी।"

चन्द्रागदा— "चिन्ता न करो साधु ! चौक मे चिता तैयार हे। पर इच्छा यह हे कि जलने से पहले लुटेरो के रक्त का उन वीरो पर पर अर्घ्य तो चढा ले जो जान दे गये पर दिल्ली का मान नही दिया।"

चन्द्रवरदाई— "ईश्वर तुम्हारी इच्छा पूरी करे ! मेरे हृदय मे अ लगी हुई ह। जव तक उस गोरी के प्राण नही ले लूंगा, [illegible] की यह गति की है, तव तक अन्न नही खाऊँगा। अ

कहकर चन्द्रवरदाई पिछले द्वार से निकल यमुना तट पर दूर निकल गये। और यवन राक्षसों की तरह लूटते मारते महल पर आ पहुचे।

लाट पर खडी हुई सेविका ने खतरे का शख बजाया और महल मे चिता की अग्नि धधक उठी।

रानियो ने जब देखा कि यवन सेना बहुत है, उनसे लोहा लेकर अपने ही सतीत्व पर आँच आ सकती है, तो वे महल की मिट्टी अपने अपने माथे से लगा जलती हुई चिताओ मे कूद पडी।

यवन जब महल मे पहुँचे तो क्षत्राणियो के जौहर देखकर चकित रह गये। गोरी ने माथे पर हाथ रखते हुए कहा— "हिन्दुस्तान की औरतें वाकई देवी हैं देवी! जो जीवित जल सकती हैं, पर अपनी इज्जत नहीं दे सकती। उनका नाम तवारीख मे चाद और सूरज की रोशनी से लिखा रहेगा। हिन्दुस्तान सोने और चाँदी का ही घर नहीं, इसमें वह पाक खुशबू भरी हुई है, जिससे हर बदन् को सुगन्ध लेनी चाहिये। हम इन देवियो की मिट्टी अपने सर से लगाते हैं।"

कहते हुए गोरी ने चिता की राख माथे मे लगाई और फिर [illegible] के किले पर टूट पडा।

यवनों ने देवताओं की वे मूर्तियाँ मिटा डाली जो शिल्पकारो की कल्पना से चट्टान के हृदय में बोल रही थी, खोद डाले गीता और वेद के वे श्लोक जो [illegible] की दीवारो पर खुदे हुए थे, नोच कर निकाल लिये वे हीरे और जवाहरात जो चारो ओर जडे पडे थे, काट कर फेंक दिये वे [illegible] निर्माण जिनसे हिन्दू संस्कृति की सुगन्ध [illegible] थी।

[illegible] यवन उस गोरी के निकट आये, [illegible] और [illegible] के बाद [illegible] और

जिसे फिर एक सन्देहात्मक बुद्धि ने पुन उखडवाकर अपना आत्म-सन्तोष किया था।

गोरी ने कीली को देखते हुए कहा—"यह क्या है कुतुबुद्दीन!"

कुतुबुद्दीन—"यह कोई हिन्दुओ का निशान जान पडता है बादशाह सलामत!"

गोरी—"तो इसे उखाड फेको! दिल्ली मे हिन्दुओ का कोई निशान बाकी न रहे, जिससे कभी यह पता चल सके कि यहा कभी हिन्दुओ का राज्य था। ईंट ईंट पर कुरान की आयतें खुदवा दो! मन्दिर मन्दिर को मस्जिद मे बदल दो! तोड फोड कर फेंक दो हिन्दुओ का हर निशान!"

हुक्म होते ही बडे बडे योद्धा लोहे की उस कीली पर टूट पडे, जो ब्राह्मणो के हाथो से गडी हुई थी। पर ज़मीन ने कीली को ऐसा पकडा कि हिलाये न हिली।

हार कर यवनो ने कीली उसी प्रकार छोड चौहान की उस मीनार को देखा जिस पर हिन्दू राज्य का झडा अभी तक गर्व से फहरा रहा था और सबसे ऊँचे शिखर पर नगी तलवार लिये एक बारह वर्ष का बालक और उसकी मॉ यवनो की असख्य सेना को चुनौती दे रहे थे।

गोरी ने कॉप कर पीछे हटते हुए कहा—"यहॉ कोई खतरा मालूम होता है कुतुबुद्दीन, होशियार!"

कुतुबुद्दीन—"जब ओखली में सिर दे दिया तो मूसलो से क्या डरना! जो भी खतरा सिर पर आयेगा उसके लिये कुतुबुद्दीन तैयार है।"

कहते हुए वह फौज लेकर उस मीनार के दर्वाज़े मे घुसा जिसकी ऊँचाई आज भी आकाश से होड ले रही है।

"आपकी जान इतनी सस्ती नही है सिपहसालार! आगे हमें जाने दीजिये।" कहते हुए दो सरदार आगे और पीछे पीछे कुतुबुद्दीन ऊपर चढ़ते चले गये।

जैसे ही यवनो ने ऊपर की सीढी पर पैर रखा वैसे ही वीर बालक और वीर क्षत्राणी ने सबसे आगे आने वाले दोनो यवनो के सर उतार लिये। और फिर कुतुबुद्दीन की तलवार से घायल हो दोनो माँ बेटे मुसलमान के हाथ से मरने से पहले ही मीनार से नीचे कूद पडे।

१८

हिन्दू राज्य का झण्डा काट कर नीचे फेंक कुतुबुद्दीन ऐबक ने मुस्लिम राज्य का झण्डा मीनार पर गाड दिया और उसी समय एक भयकर आवाज़ सारे हिन्दुस्तान में गूंज उठी कि आज हिन्दुओं की पहली हार और मुसलमानो की भारतवर्ष मे पहली जीत है।

पृथ्वीराज चौहान के किले पर मुस्लिम राज्य का झण्डा फहरा कर जब कुतुबुद्दीन मीनार से नीचे उतरा तो शहाबुद्दीन ने उसे गले लगाते हुए कहा— इस जीत का सेहरा तुम्हारे सिर है कुतुबुद्दीन! हमने दिल्ली का राज्य तुम्हे दिया। खुदा तुम्हे सारे हिन्दुस्तान का बादशाह बनाये! अब हम गजनी जाते हैं और तुम दिल्ली में राज्य करो!

कुतुबुद्दीन— मुझे खुशी है कि आज मालिक की मुराद पूरी हुई। वह घाव भर गया जो रिसता हुआ नासूर था। दिल्ली आपकी है और पृथ्वीराज आपकी कैद मे है। ऐबक तो आपका गुलाम है। उसे जो हुकुम देंगे, बजाने को तैयार है। मेरा कदम सिर्फ दिल्ली मे ही रुकना नही चाहता। दिल्ली मे सल्तनत सँभलते ही अजमेर और फिर बिहार को जीतूंगा। जब तक सारे हिन्दुस्तान पर मुस्लिम राज्य का झण्डा नही फहरेगा, तब तक कुतुबुद्दीन की उम्मीद अधूरी ही रहेगी। अब आप वतन जाकर आराम की जिन्दगी बसर कीजिये और यह गुलाम हिन्दुस्तान में आपके नाम का झण्डा ऊँचा करेगा।

गोरी— हम तुमसे बहुत खुश हैं ऐबक! तुम जो मागो वह हम तुम्हे दे सकते हैं।

कुतुबुद्दीन— मालिक का दिया मेरे पास सब कुछ है। सिर्फ यह चाहता हू कि सारा हिन्दुस्तान इस्लाम मजहब मे आ जाये। मैं राज्य के साथ साथ इस्लाम मजहब को भी बढाऊगा और अपनी औलाद से कह कर मरूंगा कि मुस्लिम राज्य और इस्लाम मजहब के लिये जीना।

गोरी— खुदा तुम्हे कामयाबी दे! लेकिन हम भी तुम्हे कुछ देना [illegible] है और वह यह कि पृथ्वीराज चौहान की यह ऊंची लाट अब से [illegible]मीनार के नाम से पुकारी जायेगी। यह ऊंची मीनार हमेशा [illegible] की जीत के नगमे गाती रहेगी। जो भी बशर दिल्ली [illegible] वह तुम्हारे इस जीते हुए किले मे आकर तुम्हारा नाम जरूर [illegible]। आज से पृथ्वीराज चौहान का नाम मिट गया और कुतुबुद्दीन [illegible] नाम कयामत तक रोशन रहेगा।

पृथ्वीराज— अच्छा हुआ तूने यह देखने से पहले ही मेरी आँखे फोड दी। मैंने दिल्ली का उत्थान देखा है, पतन नही, और आज भी मै गौरव से कह सकता हूँ कि दिल्ली तुम नही जीते, हमारी फूट जीती है। यदि अपने ही गद्दार न बनते तो किसकी ताकत थी कि जो मेरी दिल्ली को छू पाता!

गोरी— घमण्ड अभी तक जैसे का तैसा है! पर कट चुके, पर उडने की कोशिश अब भी कर रहा है। दीन! इसे पैदल दिल्ली की हर सडक पर घुमाओ, जिससे इसका नशा उतर जाये। जब यह उस दिल्ली मे जिसमें लाखो के बीच सर उठा कर चलता था, आज कैदी बन सर झुकाये चलेगा तो यह रास्ते मे ही नदामत से मर जायेगा।

पृथ्वीराज— शर्म से जब वह गोरी नही मरा जिसकी नाक का घाव अभी तक हरा है तो चौहान को क्या शर्म आयेगी जिसने गोरी को बार बार कैद करके छोड दिया। चौहान ने लडाई हारी है, वीरता नही हारी। वह बन्दी है, पर उसके माथे पर माफी माँगने का कलक नही। पृथ्वीराज की ज़बान है, चमडे का झूठा टुकडा नही। दुनिया और इतिहास ने तुझे नफरत की निगाह से देखा जायेगा।

गोरी— अब कोसने से क्या होता है! नफरत मुझसे नही, तुमसे होगी जिसने अपनी नालायकी से वैभवशाली दिल्ली को हार दिया, जिसने इस देश में दूसरे धर्म की बेल फैला दी। एक तरफ मै हूँ जो अपने बुलन्द इरादे लिये हुए हार को जीत मे बदलने के लिये जीवित रहा, एक तरफ तू है जिसने जीत भी हार मे बदल दी। तुझे तेरे कर्मो का फल मिल रहा है। चल अन्धे, चल!

बेदर्दी से धक्के देकर चौहान को दुर्दशा से दिल्ली की सडको पर घुमाया। बिचारे नागरिक महाराज की दशा देखते और हिचकी भर भर कर रो पडते।

पहली हार

कौन कह सकता है कि आज जो राजा है, कल वह बन्दी भी हो सकता है। आज जिसकी पूजा होती है, कल वह पैरों से ठुकराया भी जा सकता है। जिनके आगमन की सुनते ही दिल्ली के बाजार हीरे और जवाहरात से जगमगा उठते थे, आज वही पशुवत् घुमाया जा रहा है। जिनके चरणों की धूलि माथे से लगाने के लिये नागरिकों की भीड़ उमड़ पड़ती थी, आज वे ही नागरिकों को देख तक नहीं सकते। समय की गति बड़ी बलवान होती है। विधाता की लीला अपरम्पार है। हाय रे दुर्दिन!

दिल्ली रोती रही और यवन चौहान को बन्दी बना कर गजनी ले गये।

गूजा करता था, आज बूढा ब्राह्मण नन्दराम गाय की सानी करता हुआ आँखो मे आँसू बहा रहा था। वह सानी कर भी न पाया था कि पन्द्रह बीस यवन तलवार लिये वहाँ आ पहुँचे, और बेचारे ब्राह्मण की गाय खूटे से खोलने लगे।

नन्दराम ने उनको रोकते हुए कहा— "इतना अत्याचार क्यो करते हो ज़ालिमो! तुमने सब कुछ तो छीन लिया, अब कम से कम निरीह प्राणियो पर इतने ज़ुल्म तो न करो! मेरी गाय क्यो लिये जा रहे हो ?"

एक हट्टे कट्टे फौजी ने अकडते हुए कहा— "फौजियो को खाने के लिये मास चाहिये। हमे हुकुम है कि जहाँ भी जो जानवर बँधा हो, उसी को खोलकर खा लो। हम इस गाय को काटेंगे। मास के बिना हमारा पेट नही भरता।"

नन्दराम— "लेकिन मै गाय का वध नही होने दूगा, पहले मै मरूगा, बाद मे मेरी गाय।"

फौजियो ने ठहाका मारते हुए कहा— "देखते क्या हो, इसकी आखो के सामने पहले इसकी गाय काटो और फिर इसके भी टुकडे कर डालो।"

कहते हुए चार पाँच यवनो ने बेचारे नन्दराम को पकड लिया और फिर उस सुन्दर गाय की गर्दन पर छुरी चला दी जिसका बछडा पास ही खडा रम्भा रहा था। गाय को मार कर विधर्मियो ने नन्दराम को भी मार दिया, तथा अट्टहास करते हुए इसी तरह खून पर खून करने लगे।

मुस्लिम राज्य मे जिसने भी हिन्दुत्व की बात कही उसी का सर क़लम कर दिया गया। हिन्दुओ के रक्त से वह ईद मनी कि कोई इतिहासकार जिसे लिख भी न सका।

इसी रक्तरंजित दिल्ली मे साधू-वेश-धारी चन्द्रबरदाई गीली आँखे लिये हुए एक दिन अपने घर के द्वार पर आये और अलख जगाई।

आवाज़ पहचानी सुनकर जल्हण द्वार पर आया और पिता की यह दशा देखकर आँखो से एडी तक भीग गया।

साधू ने दाता को छाती से लगाते हुए कहा— मै आँसू देखने नही, भीख मागने आया हूँ।

जल्हण— अपने द्वार पर आप ही भीख माँगने! यह कैसा आश्चर्य है पिता! आज्ञा कीजिये मै क्या सेवा करू!

चन्द्रबरदाई— हर भिखारी अपने ही दरवाज़े पर भीख मागता है। मेरी इच्छा भटक रही है वत्स! मै महाराज के गौरव के लिये गजनी जा रहा हूँ और तुम महाराज पर मेरा अधूरा महाकाव्य पृथ्वीराज रासो पूरा करना! बस यही साधू तुमसे भीख चाहता है।

जल्हण— मै यही कर रहा था पिता! दिल्ली मे जो अत्याचार निरीह हिन्दू जनता पर हो रहे हैं वे देखे नही जाते। मन्दिरो के घटे काट डाले गये हैं। किसी भी मन्दिर मे आरती का स्वर नही गूजता। हर बाजार में मास की दुकानें खुल गई हैं। हर गली मे बहिन बेटियो पर मन-मानी होती है। कभी कभी तो जी चाहता है कि तलवार लेकर अकेला ही मार कर मर जाऊ।

चन्द्रबरदाई— नही, तलवार के दिन बीत चुके हैं वत्स! अब तो केवल रामनाम का ही सहारा शेष है। बुद्धि और भक्ति से अपने साहित्य और धर्म की रक्षा करते रहो, इसी में इस देश का कल्याण है। यदि सस्कृति जीवित रही तो हम मरे हुए भी एक न एक दिन फिर जी जायेंगे, और यदि साहित्य एव सस्कृति भी मिट गई तो फिर भारत कभी भी स्वतत्र नही हो सकता। अच्छा, अब चलते हैं।

अलख जगा कर बाबा चले गये और नरपराज ले जल्हण काव्य-रचना में लीन हो गये।

× × ×

यवनों के दमन से वीर भावना खँडहरों में सो गई। मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित हो जाने पर हिन्दू जनता के हृदय में गौरव, गर्व और उत्साह की चिता जल कर राख शेष रह गई। तलवारों की झनकार भूली सी कहानी मात्र रह गई थी। बड़े बड़े अस्त्र-शस्त्र अब केवल अजायबघर में ही सुशोभित होते थे।

बिचारे हिन्दू के सामने उसके देव मन्दिर गिराये जाते थे, आराध्यों की मूर्तियाँ तोड़ी जाती थीं, पूज्य देवताओं का अपमान होता था और वह लाचार था।

मुस्लिम प्रहारों ने परस्पर लड़ने वाले हिन्दू राजाओं की ही हत्या नहीं की, अपितु हिन्दू संस्कृति और धर्म को जिस निर्दयता से कुचला, वह आपत्ति काल के कारण वाणी से कह भी न सके। अपने पौरुष में हताश भारतीयों के लिये केवल भगवान का ही भरोसा रह गया था। ईश्वर की शक्ति और करुणा का सहारा ही जीने के लिये आधार था।

बिचारे लुटे पिटे हिन्दू या तो दास थे या साधू। उनके पास गा गा कर भगवान से भीख माँगने के अतिरिक्त रह ही क्या गया था!

धूनी पर बैठे बाबा रामदेव जी से उनके शिष्य नामदेव ने कहा—"मुसलमानों के अत्याचारों से हिन्दू जनता त्राहि त्राहि पुकार रही है। बधिकों के वीभत्स हाहाकार में कोई किसी की नहीं सुनता। गऊ, ब्राह्मण और दुर्बलों की रक्षा करने वाले हिन्दू राजा परस्पर लड़ लड़ कर मुसलमानों से कटे पड़े है। कोई उपाय बताइये परम पूज्य!"

गोविन्दराम— हाँ गुरु जी, अब देखा नही जाता। जिन गलियो मे दूध घी की नदियाँ बहती थी आज उन गलियो मे गोधन काट काट कर खाया जा रहा है। जिन मन्दिरो मे शिव और विष्णु भगवान् की पूजा हुआ करती थी आज उन मन्दिरो में मनुष्य का रक्त चढा कर नमाज पढी जा रही है। जिन विद्यालयो में देवभाषा में शाश्वत शिक्षा दी जाती थी आज उनमें यवन भाषा के माध्यम से हिन्दुओ के विनाश की शिक्षा दी जा रही है। बचाओ गुरुदेव ! इस घोर विनाश से हिन्दुओ को बचाओ।

रामदेव— धर्मात्मा जब अधर्म के पथ पर चलने लगते हैं, कर्मठ जब कर्त्तव्य से विमुख हो जाते हैं, तब पिशाचो को देवताओ पर राज्य करने का अवसर मिल जाता है। हिन्दुओ ने अपना भाग्य अपने आप फोडा है। होनी जीत गई और हिन्दू रो रहा है। अभी क्या रोया है, अभी तो शताब्दियो तक रोयेगा। वह दिन भी आयेगा जब देश में मुसिलम सस्कृति हिन्दू सस्कृति के नाम से पुकारी जायेगी। हम नाम से हिन्दू होगे और काम से मुसलमान। धर्म, शिक्षा, सभ्यता सभी पर यवनो के प्रहार होगे। हम जीवित होगे, पर मृतक की तरह खण्ड खण्ड होकर खडहरो मे।

नामदेव— तो अँधेरे मे भटकने वाले देश को दीपक दिखाइये पूज्य गुरुवर ! हिन्दुओ की गर्म राख आपको चीख चीख कर पुकार रही है। अब धूनी पर तपने मे दम घुटता है तपवन्त !

रामदेव— राम राम राम ! अब हाथ मे झोली और मुह मे राम नाम के अतिरिक्त और रह ही क्या गया है ! द्वार द्वार पर राम नाम की अलख जगा कर ही अब हिन्दू धर्म को बचाया जा सकता है। उठो वत्स ! भक्ति की वीणा लेकर घर घर मे राम नाम का राग सुनायेंगे। हारे को हरि नाम ही एकमात्र आधार होता है।

सम्भव है क्षीरोदधि में सोने वाले के कानों तक हमारी करुण पुकार जा पहुँचे। प्रभो की कृपा से कभी न कभी तो वह दिन आयेगा ही जिसे हम खो चुके हैं।

बाबा ने धूनी छोड दी। वे रामनाम की रट लेकर निकल पडे। वे जहा भी जाते निराश जनता उनको आँसू बहाती दिखाई देती थी। जिस मन्दिर पर भी गये वहीं से मुल्ला की बाँग सुनाई देती थी। कोसों निकल गये किन्तु कहीं से भी घंटे की ध्वनि नहीं आई। मानो भगवान की मौत हो गई हो और मन्दिरों के सारे देवता मातम मना रहे हों।

बहुत दूर पहुँचने पर गोविन्दराम ने कहा— "भूख लगी है बाबा जी! जहाँ जाते हैं, वहीं आमिषभक्षी मिलते हैं। निरामिष भोजन कहाँ मिलेगा?

रामदेव— जबरदस्ती मांस खिलाने का आदेश देकर यवन प्रत्येक हिन्दू को मुसलमान बनाना चाहते हैं। पर यह नहीं हो सकता। धीरज धरो वत्स! कोई न कोई धर्मात्मा मिलेगा ही।

चलते चलते बाबा रामदेव अपने शिष्यों सहित दिल्ली के निकट गुलटर नामक गाँव के किनारे आये। गाँव में प्रवेश कर बाबा जी ने एक द्वार पर राम नाम की अलख जगाई।

राम नाम का गीत सुनकर घर में से एक बूढा दर्वाजे पर आया और बाबा जी को नमस्कार कर हाथ जोडता हुआ बोला— कहिये, मैं आपकी क्या सेवा करूँ?

रामदेव— निरामिष भोजन करेंगे, सज्जन पुरुष!

वृद्ध— गाँव के कुएँ कुएँ को गऊ का मांस डालकर अपवित्र कर डाला। ऐसी दशा में शुद्ध भोजन कैसे बनाया जाये बाबा जी! मैं स्वयम्

फल फूल खाकर जीवित हूँ। आप भी जो कुछ फल फूल इस बूढे ब्राह्मण के श्रम से उपार्जित हुए हैं उनको ग्रहण कर लीजिये। आपकी वाणी मे निकले रामनाम मे तो अमृत है महात्मा जी! यह सेवक उपस्थित है। मेरी कुटिया में कुछ दिन विश्राम कीजिये, आनन्दपूर्वक फल फूल खाकर तथा दूध पीकर मुझे कृतार्थ कीजिये तथा राम नाम के गगाजल से मुक्ति प्रदान करने की कृपा करो रामभक्त! यज्ञ और पूजा तो कर नही सकते, केवल राम नाम का ही सहारा शेप रहा है तेजवन्त!

रामदेव—यह कोई रामभक्त ब्राह्मण जान पडता है नामदेव! अच्छा है कुछ दिन इसी सज्जन पुरुप की कुटी पर आसन जमाया जाये।

वृद्ध—बडी कृपा होगी आपकी!

ब्राह्मण के द्वार पर साधुओं ने आसन जमा दिया और राम नाम की कथा कहने लगे।

बाबा जी की राम कथा मे न जाने कैसा रस था कि श्रोताओं की भीड लगने लगी। दुखी जन आ आ कर राम नाम का रसामृत पान करने लगे।

धीरे धीरे वह भीड बढने लगी। हिन्दुओं के साथ साथ मुसलमानो को भी रामकथा मे रस आने लगा। बाबा जी की प्रेम भरी वाणी सुनने के लिये दूर दूर से हिन्दू मुसलमान आ आ कर बीन पर नागो की तरह झूमने लगे।

बाबा जी राम कथा कहते और साथ ही साथ सत्य, प्रेम और प्रभु भक्ति का वह मोहक सन्देश देते कि प्रत्येक उनका भक्त हो जाता।

परम सत्य राम नाम का ऐसा ज्ञान और प्रेममय प्रचार भारत मे फैलने लगा कि तलवारो की झनकार राम नाम मे बदलने लगी। हिन्दू ही नही, मुसलमान भी प्रेम और ज्ञान तत्व के गीत गाने लगे।

नष्ट होगा ही।
ने हो।
ेर न

पहुँचते पहुँचते दिल्ली सुलतान कुतुबुद्दीन के कानों पहुँची। कहने वाले ने बाबा जी की राम कहानी व॰ थी, तथापि दीन के कान में राम नाम शूल की तरह चुभा।

सुलतान ने तिलमिलाते हुए आज्ञा दी— "राम नाम लेने वाले जी को उनके साथियो सहित कैद करके हमारे सामने पेश ?"

हुकुम हुआ कि बाबा रामदेव शिष्यो एव बूढे ब्राह्मण सहित पकड दिल्ली सुलतान के दर्बार मे तलब कर दिये गये।

और बाबा जी के साथ ही साथ दर्बार के आसपास रामभक्तो की ड लग गई। भीड मे हिन्दू भी थे और मुसलमान भी।

"बाबा जी को छोड दो, राम और रहीम एक हैं, हम जुल्म नही गे, खून खराबा बन्द करो, किसी के भी धर्म पर अत्याचार करना प है, सुख से रहो और सुख मे रहने दो, जियो और जीने दो!"

किले के दर्वाज़े पर उमडती हुई भीड का शोर सुनकर कुतुबुद्दीन गुस्से से कहा— "आवाज़ बन्द हो। जब तक हम फैसला न कर दे ब तक कोई न बोले।"

हुकुम होते ही सरदारो ने फौज से शोर बन्द करा दिया और दीन बाबा जी को घूर कर देखते हुए कहा— "तुम कौन हो?"

रामदेव— ईश्वर का बन्दा एक मनुष्य, जो हैवान को इन्सानियत का पाठ पढाना चाहता है, जो शैतान को सत्य और प्रेम के रास्ते से मनुष्य देखने का इच्छुक है।

कुतुबुद्दीन— क्या तुम्हे पता नही कि मुस्लिम राज्य मे ईश्वर का नाम नहीं, अल्लाह का नाम लिया जाता है।

रामदेव— ईश्वर और अल्लाह एक ही रूप के दो नाम हैं

फल फूल खाकर : दिन की जिन्दगी के लिये इतने जुल्म न करो! सब के श्रम से उपार्जित पैदा हुए हैं और एक ही धूलि मे सो जायेंगे। जो निकले राम के सोना है, जमीन उसे सदा याद रखती है। और जो मेरी अत्याचार करता है धरती पर उसका नाम घृणा से लिया जाता है। मनुष्य का धर्म प्रेम करना है। भक्ति, ज्ञान और कर्म के सयोग से मनुष्य धर्मात्मा बनता है। खुदा और ईश्वर प्रेम का रूप है। प्रेम करो, राम तुम्हे यश देगे, इन्सान तुम्हारी पूजा करेंगे। अपने दामन पर लगे हुए खून के दाग धोना चाहते हो तो प्रेम के गगाजल से नहाओ। धरती पर प्रेम ही सत्य है। राम, राम, राम!

कुतुबुद्दीन— जान पडता है तुम्हारी मौत ही तुमसे यह सब कहला रही है। छोड दो यह राम-राम की रट और मुसलमान हो जाओ नही तो तुम्हे कत्ल कर दिया जायेगा।

रामदेव— तलवार से आदमी की गर्दन उतारी जा सकती है पर उसका दिल नहीं बदला जा सकता। जालिम बादशाह हमारे प्राण ले सकता है पर हमसे हमारा धर्म नही छीन सकता। धर्म का स्थान भावना में है, अत्याचार मे नही। धर्म कोई कानून नही है, ज्ञान-बुद्धि ही धर्म है। राम और रहीम मे कोई भेद नही। तुम राजा हो तो इसका यह अर्थ नही कि हिन्दू और मुसलमान को अलग अलग आंखो से देखो, मुसलमान को बेटा समझो और हिन्दू को दुश्मन! राजा के लिये तो सारी प्रजा पुत्रवत् है।

कुतुबुद्दीन— काफिर के उपदेश और कुतुबुद्दीन की सल्तनत मे! दीन दुनिया से हिन्दू नाम तक को मिटा कर रहेगा। जल्लादो! देखते क्या हो, इस बुतपरस्त के टुकडे टुकडे कर डालो और साथ ही साथ जो भी इसका अनुयायी हो उसे भी कत्ल कर दो!

रामदेव – शरीर को मारने से आत्मा नही मरेगा! आत्मा अमर

है और शरीर नाशवान। यह तो आज नही तो कल नष्ट होगा ही। दीन! व्यर्थ ही अपनी तलवार को तकलीफ देकर पापी बनते हो।

कुतुबुद्दीन—मौत सामने देखते ही गिडगिडाने लगा। देर न करो जल्लादखां! काफिर को फौरन दोजख मे भेजो।

जल्लाद तलवार लेकर झूमता हुआ आगे बडा और अपने खूनी हाथो से राम-नाम रटते हुए रामदेव का सर धड से अलग कर दिया। सर ज़मीन पर गिरते ही हिन्दू और मुसलमानो मे अशान्ति फैल गई। चारो ओर से "राम-नाम सत्य है" की आवाज़ उठ खडी हुई। हरेक तुमुल घोष मे चीख उठा, "साधू रामदेव का वध क्यो किया? इन्सान सब एक हैं, हम सब प्रेम से रहेंगे। हम ज़ालिमो की तलवार पारस्परिक सत्य के प्रेम से तोड डालेगे।"

किन्तु हाहाकार मे कौन किसकी सुनता है! कुतुबुद्दीन ने हुकुम दिया कि किले का फाटक बन्दकर दो और जो भी ज़बान खोले उसे कैद मे डाल दो।

उत्तर में गैब से आवाज़ आई—"साधु पुरुषो के रक्त की जितनी भी बूंदे धरती पर गिरती हैं, वे क्रान्ति की चिन्गारी बनकर सदा सुलगती रहती हैं। निर्दोषो के लहू मे आग होती है। सताये हुओ के आसू बेकार नही जाते। अत्याचारो की उम्र पानी के बुलबुलो से भी कम होती है।"

१९

जुल्म जितने अधिक बढते हैं, धरती पर ईश्वर भक्तों की पीड़ा से क्रान्ति उतनी ही सहज हो उठती है। मुसलमानों ने हिन्दुओं को जितना दबाने का यत्न किया, जन जन मे राम नाम उतना ही मुखर होने लगा। राम नाम की महिमा ऐसी बढी कि कवियो की वाणी लोहे की धार को तज भक्ति की गंगा मे नहाने लगी।

—"राम राम महात्मा!"

"राम राम पथिक!" सिन्धु नदी के तट पर सामने से आते हुए एक राही ने इधर से जाते हुए एक साधु से राम राम की और राम राम ली।

और फिर बिल्कुल पास आने पर आगन्तुक ने साधु को ध्यान से देखते हुए कहा— "कौन, राजकवि चन्द्रबरदाई और साधु वेश में! यह मैं क्या देख रहा हूं ?"

चन्द्रबरदाई— वही जो अयोध्यावासियों ने वन जाते समय राम को फकीरी वेश में देखा था। राम रावण को मारने गये थे और मैं भी किसी राक्षस का वध करने जा रहा हूं। पर तुम इतने दिनों तक कहां रहे जयानक!

जयानक— पहाडो पर पर्यटन करने के वाद नदी नदी का पानी
ीता फिर रहा हूँ। जब से मेरी प्रिया कुसुमाजलि मुझे ससार सागर
क मँझधार मे छोडकर परलोक सिधार गई तब से जहाँ तहाँ सुख
एव शान्ति की खोज मे भटकता हुआ घूमता रहता हूँ। वहुत घूमा
पर आधार कही भी नही मिला। वन, नदी, पहाड, जहाँ भी गया
वही अतृप्ति साथ रही।

चन्द्रवरदाई— तुम अपनी एक कुसुमाजलि को रो रहे हो पर आज
तो देश की कली कली कुचली पडी है। व्यक्तिगत पीडा से सामूहिक
आपत्तियो का स्थान वडा होता है। भारत के कोने कोने मे चिताये
धधक रही हैं, और तुम कवि होकर वनो मे भटकते फिर रहे हो।
साधु वन कर जगल मे भटकने से तुम्हारी प्रिया तो वापिस नही आयेगी
जयानक! कहाँ गई तुम्हारी शख से भी तुमुल हुकार, किस श्मशान
मे सुला दी तुमने अपनी वीणा को? रोना छोडो कवि! और भारत
की हार को जीत मे वदलने के लिये शाश्वत गीत गाओ।

जयानक— वहरे कानो मे कवि के गीतो की आवाज़ कहाँ पहुँचती
ह कविराज! हाहाकार मे कवि की कौन सुनता है! हर्ष के समय से
हिन्दुओ का जो पतन शुरू हुआ था वह आज गोरी की विजय के
रूप मे हमे धिक्कार रहा है। न जाने कितने कवियो ने गाया पर
हिन्दुओ की आँखें न खुली। अव तो रोओ और तव तक रोओ जव
तक हिन्दुओ का इतिहास तक न मिट जाये। हिन्दू फकीर वन कर
झोली लिये फिर रहा ह और मुसलमान गद्दी पर वैठे अट्टहास कर रहे
हैं। अभी क्या, अभी तो पतन आरम्भ ही हुआ है, जव पराकाष्ठा पर
पहुँचेगा तव देखना। सभ्यता रक्तस्नान करेगी, वहिन वेटियो को
जवरदस्ती उठा उठा कर ले जाया जायेगा, वूढो और वच्चो के कत्ल
होंगे।

चन्द्रबरदाई— बस बस जयानक ! अपनी पीडा का विस्फोट और अधिक न करो ! आँसुओ को आँखो मे रोको और देश की डूबी हुई नौका को फिर से प्राण दान दो ! मैं अन्तर मे ज्वाला लिये गजनी जा रहा हूँ और तुम वाणी पर आर्तनाद लेकर द्वार द्वार जाओ। सम्भव है सौ दो सौ वर्ष बाद कोई ऐसा दिन आ जाये जब देश के पैरो की बेडियाँ टूट कर गिर पडे।

जयानक— परतन्त्रता की जजीरें तोडने के लिये न जाने कितने स्वर अलापने पडेगे और कितना रक्त बहाना होगा। हिन्दू राज्य शताब्दियो मे विष उगलते चले आ रहे थे। आज उनका विष उनको ही डस गया। तुम ही बतलाओ चन्द्र ! अब किस के द्वार जाकर काव्य सुनाये। हिन्दू और हिन्दी के लिये दर्वाजे बन्द हो चुके हैं। जयानक अपनो के द्वार पर जा सकता है, गैरो के राजदरबार में नही। अब तो वह समय है जब भारतीय साहित्य और भारतीय काव्य की होली जलाई जायेंगी। अब क्या करेंगे काव्य रचना करके, गगा किनारे बैठ कर राम नाम लेगे। किसी दिन राम नाम से इस देश का उद्धार होगा। हिन्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तान के भाग्य जागेगे।

राम राम चन्द्रबरदाई ! जाओ गजनी, ईश्वर तुम्हारी इच्छा पूरी करे !

जयानक चल दिये और चन्द्रबरदाई ने गजनी की राह पकडी। वनो की खाक छानते हुए, नदियो को पार करते हुए, पहाडो पत्थरो और चट्टानो पर होते हुए, कही भूखे और कही प्यासे, कही थकते और कही गिरते हुए चन्द्रबरदाई गजनी मे आये।

गजनी पहुँच कर चन्द्रबरदाई ने एक पेड के नीचे पडाव डाला। वहा आकर उन्होंने अपना नाम बरदाई प्रसिद्ध किया और गा गा कर गजनी वालो को रिझाने लगे।

अरबी में बना बना कर चन्द्रवरदाई ने मुसलमानों के वे गीत गाये कि मुसलमान लट्टू हो गये। गज़नी वाले उनको घेर घेर कर बैठ जाते और रात रात भर तरह तरह की तर्जें सुनते रहते।

चन्द्रवरदाई ने गज़नी जैसे ही पहनावे और गजनी जैसी ही बोलचाल से अपने आपको गज़नी वालों का हमदर्द बना लिया। चन्द्र की गद्दी पर हर समय दस-बीस की भीड रहने लगी।

पहुँचते पहुँचते गजनी सुलतान शहाबुद्दीन गोरी के कानों तक भी चन्द्रवरदाई की तारीफ पहुँची। बादशाह सलामत ने हुकुम दिया कि वरदाई को हमारे सामने पेश किया जाये।

दूसरे दिन वरदाई अपनी गद्दी पर कविता अलाप रहे थे, कोई उनकी तान पर झूम रहा था तो कोई शराब के नशे में गर्दन हिला रहा था, कोई गान पर मुग्ध था तो कोई सुलफे की लपटों में, कोई राग पर सो रहा था तो कोई अफीम के अटे में सोया हुआ था।

वरदाई अपने आसन पर ऐसे हरफन मौला बने हुए थे कि जो भी आता वही वहाँ जम जाता। जिसने एक बार भी वरदाई का रंग सुना वह सारे रंग भूल उसी रंग में रंग गया।

गज़नी में वरदाई पुजने लगे। वे मांस तो खाते नहीं थे, इसलिये उन्होंने कहा हुआ था कि हम केवल फल और मेवा खाते हैं।

दुनिया में अन्धभक्त और सट्टा पूछने वालों की कमी नहीं। किसी को दुग्गी और किसी को चव्वा बताकर दस के दस हरफ बताओ और गद्दी पर बैठे बैठे फल और मेवा पर हाथ साफ किये
लड़का दो, किसी को लड़की दिलाओ, किसी के
[illegible] सच्ची बताओ, एक दो तो ठीक [illegible] लगी
दिन में ही बाबा जी के गहरे हैं

इस तरह अन्तर मे आग लिये बरदाई तरकीब और गायन मे गज़नी वालो पर जादू कर ही रहे थे कि सुलतान के सैनिकों ने आकर बाबा जी की खुशामद करते हुए कहा— 'आपको गजनी के रहमदिल सुलतान शहाबुद्दीन गोरी ने याद फरमाया है। हम आपके लिये गाड़ी लेकर आये हैं, आप किले मे चलने की तकलीफ गवारा करने की मेहरबानी करे।'

बरदाई— कौन सुलतान, किसका सुलतान, यहाँ तो सब मिट्टी के पुतले हैं। हमारे लिये हर इन्सान बराबर है। क्या फकीर क्या सुलतान, हमारे लिये सब खुदा के बन्दे हैं। हम तो फकीर ठहरे, जहा बैठ गये, बैठ गये। हम किसी सुलतान के दरवाजे पर नही जायेंगे। अगर तुम्हारे बादशाह का हुकुम हो तो हम यहाँ से चले जाते हैं।

एक सरदार ने बरदाई की मिन्नत करते हुए कहा— नही, ऐसा न कीजिये! हमारे मालिक शायरो और फकीरो के बड़े मुरीद हैं। वे तुमसे सुलतान की हैसियत से नहीं, बल्कि एक इन्सान के रिश्ते से मिलना चाहते हैं।

बरदाई— अगर बादशाह सलामत मिलना चाहते थे तो खुद यहा पर तशरीफ ले आते। शायर फकीरो का फकीर होता है। उसे बादशाह से नहीं, इन्सान से मुहब्बत होती है। जाओ, हम नही जायेंगे।

सरदार— ऐसा न कीजिये शहशाहे शायरी! हमारी इल्तिजा मान लीजिये। बादशाह सलामत आपको निहाल कर देंगे।

बरदाई की बड़ाई करते हुए और भी दो चार ने जो बरदाई के रात दिन के चेले बन गये थे कहा— चले जाओ, उस्ताद चले जाओ! सुलतान की रहमत हो गई ना हमारी भी किस्मत खुल जायेगी। इनाम दे तो तुम कुछ मत लेना, लेकर सब हमें दे देना।

बरदाई के मुंह मे पानी तो बहुत देर से आ रहा था, पर अब अपने रात दिन के चेलो का आग्रह सुनकर तो वह पानी बह ही निकला।

बरदाई ने नखरा दिखाते हुए कहा— अच्छा तो हम कल चलेंगे। हमारे लिये गाडी लाने की जरूरत नही है। हम आप ही दुपहर को पहुँच जायेंगे।

'हाँ' सुनते ही सुलतान के सिपाही खुशी मे भरे हुए चले गये और बरदाई ने हृदय मे दुर्गा की मूर्ति प्रतिष्ठित कर रात भर शक्ति की उपासना की। वे रात भर प्रार्थना करते रहे, "माँ, तुमने असुरो का संहार किया है। तुम्हारी भुजाओ ने दैत्यो से देवताओ का उद्धार किया है। अपने पुत्र को इतनी शक्ति दे दो कि वह हिन्दूपति पृथ्वीराज चौहान को विधर्मी के हाथ से मरने से बचा सके। मुझे इतना बल दे दो माँ! कि शहाबुद्दीन गोरी को अपनी आँखो मरा देख सकूं। मैं तुम्हारी शरण मे आया हूँ जननी! मुझ हतभागे की पूजा स्वीकार कर लो अम्बे! मैंने यवनो के हाथो दिल्ली की दुर्दशा देखी है, हिन्दुओ का कत्ल देखा है। अब चौहान के हाथ से गज़नी सुलतान का वध भी दिखा दो! सैकडो कोसो की खाक छानता हुआ गज़नी तक इसी आशा से आया हूँ माँ! राजकवि से फकीर बन कर दर दर की ठोकर इसी भावना से खा रहा हूँ भवानी! इस असहाय पुजारी की पुकार तो तुम्हें सुननी ही पडेगी सिंहवाहिनी!"

इस प्रकार चन्द्रबरदाई रात भर जागरण कर शक्ति की अर्चना करते रहे, रजनी भर आँखो से अर्घ्य चढा और हृदय के दीपक जला जला कर फकीर अपनी माँ से भीख माँगता रहा।

सभा जागते ही जागते जब सबेरा हो गया तो बरदाई ने गज़नी सुलतान शहाबुद्दीन ग़ोरी के दरबार में जाने की तैयारी की।

पहली हार

दूर जंगल में जाकर पेड़ों के पीछे कवि ने नीचे राजपूती बाना कस कटार और तलवार छिपा कर बांधी, और फिर ऊपर से लम्बी अलफी पहन माला हाथ में ले मन से शिव शिव और जबान से अल्लाह और इस्लाम के गीत रटते हुए सुलतान के दरबार की राह पकड़ी।

रास्ते में मुरीदों की भीड़ बरदाई के साथ लग ली। मजीदगी में देखते हुए और अदा में चराते हुए बरदाई नियत समय पर गजनी सुलतान के दरवाजे पर आ धमके।

बरदाई के आते ही दरबार में चहल-पहल मच गई। बड़े स्वागत से दरबारियों ने बरदाई को हाथों-हाथ उठाया। इतनी इज्जत की बरदाई की कि कोई कच्चा-पक्का होता तो शायद अपना इरादा ही बदल देता।

फूलों के हार और झुक झुक कर सलाम से मुसलमानों ने बरदाई पर वे मन्त्र फूंके कि बरदाई खो से गये। पर फिर तुरन्त ही संभल कर मन ही मन में कहने लगे, 'इसे कहते हैं मुंह में राम और बगल में छुरी। लेकिन मैं भी छुरी को छुरी से ही काटने आया हूं। पर यदि मनुष्य खोजना चाहे तो उसे विष में भी अमृत मिल सकता है। मुस्लिम तहजीब और इस्तकबाल ने तो मुझ पर जादू कर दिया है।'

विचारते विचारते बरदाई गजनी सुलतान के सामने आगये। सुलतान ने नीचे से ऊपर तक बरदाई को देखा और दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए मुस्कराकर बोले— 'सुना है आपने गजनी को रोशन कर दिया है।'

बरदाई— रोशनी वहां की जाती है जहां अंधेरा होता है। गजनी में तो खुदबखुद आफताब जगमगाता है, चारों तरफ बादशाह का ... हुआ है। हर गरीब और अमीर सुबह उठकर खुदा से

पहले शहाबुद्दीन गोरी का नाम लेता है। मुल्क मुल्क घूमता हुआ आ रहा हूँ। हर जगह गजनी सुलतान का नाम है।

अपनी तारीफ सुनकर सुलतान की खुशी से छाती फूलने लगी। बरदाई की तारीफ करते हुए उन्होने कहा— 'तुम कोई पहुँचे हुए शायर जान पडते हो। दर हकीकत तुम सच्चे फकीर हो। सुना है तुम नजूमी भी हो, जफर बडा अच्छा जानते हो ?

बरदाई— मै केवल खुदा का नाम जानता हूँ और कुछ नही जानता। उसी का नाम लेकर जो कुछ कह देता हूँ वही सच हो जाता है।

गोरी— तुम सच्चे मुसलमान हो। हमारा इरादा है कि तुम गज़नी मे ही रहो। तुम्हे किसी तरह की तकलीफ नही होगी, आराम से शायरी करो, हीरे जवाहरात जो कुछ चाहियें गज़नी मे भरे पडे हैं।

बरदाई— हमारे लिये सब पत्थर हैं। फकीर को तो सिर्फ दो रोटी चाहिये, वे खुदा दे देता है। हम चाहते हैं तुम भी अब खुदा का नाम लो। ताक़त से तुमने बहुत कुछ लूट लिया, अब मालिक का नाम लेकर कुछ आगपत के लिये भी तो लूट लो। रात-दिन खाक छान, खून मे नहा कर जो तुम चाहते थे वह तुम्हे मिल गया। अब कुछ और उम्मीद बाकी हो तो बताओ, खुदा की मेहरबानी से वह भी पूरी हो जायेगी।

गोरी— तुम्हारी तो बात बात मे कमाल है फकीर! तुम तो दुनिया और आगपत की दौलत लिये फिरते हो। ज़र, जोरू, ज़मीन सब कुछ तुम अपनी झोली मे लिये फिरते हो। तुम्हारे पास तो वह दौलत है जो शाही खजानो मे भी नही।

बरदाई— तो ऐसी दौलत आप भी क्यो नही बटोरते ?

गोरी— अब बाकी ज़िन्दगी खुदा के नाम पर बिताना चाहता हूँ।

मुझे रास्ता बताओ फकीर! जिससे मैं भी तुम्हारी जैसी दौलत पा सकूं। लाखों खून किये, बेहद दौलत लूटी, लेकिन तसल्ली बिल्कुल नहीं है। हमने सब कुछ जीत लिया, लेकिन पृथ्वीराज चौहान को नहीं जीत सके। हमने उसका राज्य जीत लिया, उसकी आँखें फोड़ डाली, उसे बेहद तकलीफ दे रहे हैं, लेकिन जमी जुम्बिश न जुम्बिश शेरे दिल्ली। चौहान हिलाये नहीं हिलता। हमने लाख कोशिश कर ली, पर वह एक बार भी माफी नहीं माँगता। हमने यह तक कह दिया कि माफी माँग लो, तुम्हारी दिल्ली तुम्हें दे देंगे। लेकिन उसने नफरत से गर्दन फेर ली। हमने उससे कहा कि हम तुम्हें हिन्दुस्तान भर का बादशाह बना देंगे, पर वह नहीं बदला। हमारी सारी जीत अपनी इस हार के आगे बेकार है। हमने दिल्ली जीती मगर चौहान का दिल न जीत सके। हमने चौहान से बार बार माफी माँगी पर उसने मौत को सामने देखकर भी हमसे एक बार भी माफी नहीं माँगी, यह घाव हमारे सीने में रिसता हुआ नासूर है। यह दाग कब्र में भी हमारे साथ रहेगा।

बरदाई यह दर्द भरी कहानी सुन रहे थे और मन ही मन में प्रसन्नता के आंसुओं की गंगा बहा रहे थे। जितनी तारीफ सुलतान ने चौहान की की उससे हजार गुने छन्द बरदाई ने चौहान की तारीफ में बनाये और हवा में उड़ा दिये।

जब कहते कहते सुलतान का गला भर आया तो बरदाई ने दिलासा देते हुए कहा— 'उम्मीद न छोड़ो बादशाह सलामत! खुदा तुम्हारी उम्मीद पूरी करेगा। चौहान हकीकत में बहादुर है। मैं उसे बचपन से जानता हूँ। जब वह छोटा सा था तो एक बार हम रमते हुए हिन्दुस्तान गए थे। [illegible] उसकी तकदीर पूछने आई थी। हमने [illegible] बताया था कि यह बड़ा बहादुर और बादशाह

होगा, और यह भी बताया था कि यह अपनी आखिरी उम्र मे अन्धा कर दिया जायेगा।

उसी वक्त जब हम यह बता रहे थे तो एक शेर दूर से गुर्राया। बालक ने फौरन अपने कन्धे से धनुष उतार एक ही तीर से शेर को मार डाला। हम बालक की इस बहादुरी से बहुत खुश हुए।

तभी उसकी मां ने बताया था कि पिथौरा बड़ा शरारती है, हर वक्त लडता कटता रहता है। पता नही कहां से यह एक खेल सीख आया है कि आवाज पर तीर का निशाना मार देता है। इसी खेल खेल मे यह कितने ही बच्चो को घायल कर चुका है।

मैंने बालक की कमर पर हाथ फेर कर कहा कि क्या तुम्हारी मां सच कहती है, क्या तुम आवाज पर निशाना मार सकते हो।

बालक ने उछल कर कहा कि हा, आप मेरी आँख पर पट्टी बाँध दीजिये, और किसी भी आवाज पर मुझसे निशाना लगवा लीजिये।

मैंने ऐसा ही किया और अपनी आँखो से देखा कि बालक ने आवाज पर सही निशाना लगाया। यह कमाल देखकर मैं दग रह गया। आप खुशकिस्मत हैं कि वह बहादुर आज आपका कैदी है।'

गोरी-- मगर हम ऐसा महसूस कर रहे हैं जैसे हम उसके कैदी हैं। लडाई हार जाने से ही कोई हार नही जाता, हार तब होती है जब कोई दिल से हार जाये। चौहान की बहादुरी के गीत हमारा दिल भी गाता है। जब तक वह हमसे माफी नही मांगता तब तक हम अपनी हार ही समझते हैं। आप जफर से बताइये कि क्या वह हमसे माफी मांगेगा। क्या हमारे दिल को तसल्ली होगी? क्या हिन्दुस्तान का शेर उवर हमारे पैरो पर गिर सकता है?

बरदाई गोरी से चौहान की भूरि भूरि प्रशसा सुन मन ही मन मे

उमड पडे, और फिर कागज और कलम ले सुलतान के सवालों का हिसाब लगाने लगे।

बहुत देर तक कागज पर कीनम काटे करने के बाद बरदाई ने बनावटी खुशी से कहा— कोई सूरत नज़र नही आती थी, मगर एक तदबीर बर आ सकती है।

गोरी— वह क्या! जल्दी बताइये दुनिया और जन्नत के बादशाह!

बरदाई— हिसाब से तदबीर यह निकलती है सुलतान! कि पृथ्वीराज चौहान की एक बहुत खूबसूरत बीवी सयोगिता थी। कैद में जाकर चौहान से कहा जाये कि सयोगिता को हम अपने हरम मे गजनी ले आये है, मगर वह किसी भी कीमत पर बेगम बनने को तैयार नही है, उसे बहुत तकलीफे दी पर वह अपने चौहान के ही गीत गाती है। जब उस हिन्दुस्तान की हूर को बहुत तग किया तो वह इस बात पर राजी हो गई है कि एक बार मुझे मेरे महाराज से मिला दो, इसके बाद मैं अपना फैसला करूंगी।

चौहान को यह सुनकर बहुत तकलीफ होगी और गुस्सा भी आयेगा। तब हम चौहान से कहेंगे कि हम तुम्हें तुम्हारी बीवी से मिलवा सकते हैं पर इस शर्त पर कि तुम उससे कहो कि तू गजनी की बेगम बन जा। इस पर चौहान को और भी गुस्सा आयेगा। तब हम दूसरी शर्त यह रखेंगे कि हम तुम्हारी बीवी को छोड सकते हैं लेकिन तब जबकि तुम आवाज पर तीर का सही निशाना लगा दोगे। अगर तुमने आवाज पर तीर का सही निशाना लगा दिया तो हम तुम्हारी बीवी को रिहा कर देंगे और अगर तुमसे सही निशाना नहीं लगा तो तुम्हें हार माननी पड़ेगी और अपनी बीवी सयोगिता को बेगम बनने के लिए राजी करना होगा।

चौहान वडा घमण्डी हे, वह आपको नीचा दिखाने के लिये शर्त वद लेगा। मगर इस कमज़ोरी मे वह अन्धा आवाज पर निशाना नही लगा सकता। इसलिये उसे शर्मिन्दा होकर हारना पडेगा। उस वक्त शर्म से वह ज़िन्दा ही मर जायेगा और सुलतान की उम्मीद वर आ जायेगी।

गोरी— तुम्हे अपनी तदवीर पर पूरा यकीन है फकीर!

वरदाई— जितनी मौत मे सच्चाई हे उतनी ही मेरी इस वात मे सच्चाई है। चौहान आपके सामने शर्मिन्दा होगा और माफी माँग लेगा।

गोरी— तो हम तुम्हारे वहुत एहसानमन्द होगे, वादशाह एक फकीर का गुलाम हो जायेगा।

वरदाई— नीली छत वाले की मेहरवानी से ऐसा ही होगा, चौहान आपके सामने झुक जायेगा।

गोरी— तो कैद में चौहान के पास भी तुम ही जाना हमारे हमदर्द! तुम्हारी ज़वान मे जादू है। जो तुमसे वात करता हे वह तुम्हारा मुरीद हो जाता हे। चलाओ अपना जादू और हमारी उम्मीद वर करो।

वरदाई— वादशाह की तकलीफ से हमारा दिल पिघल गया हे। फकीर आपकी उम्मीद वर लाने के लिये कैद मे चौहान के पास जायेगा, और अपने जादू से चौहान को अकेले में वश मे कर लेगा। आप ऐसा इन्तज़ाम कराइये कि मै कैद में तसल्ली से तन्हाई मे चौहान पर जादू चला सकूं।

गोरी— आपकी हाँ की देर थी, अभी सारे इन्तज़ाम कराये देता हूं।

कहते हुए सुलतान ने हुकुम दिया कि 'कैदखाने के बगीचे वाले कमरे में चौहान से फकीर की तन्हा मुलाकात का इन्तजाम किया जाये।'

मुलाकात का इन्तजाम होने लगा और इधर मन ही मन बरदाई ने ठण्डी साँस ली। पता नहीं फकीर इस समय अपनी मौत से लड़ रहा था या चौहान की बदकिस्मती से जूझ रहा था, अथवा सुलतान की मौत उसे यहाँ ले आई थी।

वह आग में छुप आग से खेल रहा था। कौन जानता है कि इस आग में कौन जलेगा!

२०

जमीन सो रही थी और आकाश जागता जा रहा था। नीडो को छोड छोड कर पक्षी पृथ्वी को जगाते हुए उड रहे थे। फूलो पर आकाश के मोती बिखरे पडे थे, ऐसे ही जैसे किसी निर्दोष अपराधी के आंसू पलको पर बिखरे रहते हैं, ऐसे ही जैसे किसी पखकटे की आँखे गीली रहती है।

पीडित के साथ मनुष्य चाहे न रोवे पर प्रकृति फूट फूट कर रोती है। तडप जब चीत्कार करती है तो पत्थरो से भी आग निकल पडती है। तपते हुए आंसुओ से अगारे निकलते हैं। चाहे आग के वे पत्थर दबे पडे रहे पर ठण्डे नही होते।

गर्म आंसू आँखो मे छिपाये वरदाई गर्म सुबह की ठण्डी हवा में सोचते हुए पत्थरो के उस पिंजरे की तरफ चले जिसमें दिल्ली का दन्तहीन शेर पृथ्वीराज चौहान वन्दी था। वरदाई की आँखो में आँसू थे, हृदय मे ज्वाला थी, और पैरो में उत्साह था। देश का वह फकीर मृत्यु और जिन्दगी के रास्ते पर चला जा रहा था।

पहली हार

पथरीले पहाडी रास्तो को पार कर वह पत्थरो की उस चारदीवारी के पास आया जिसमे पृथ्वीराज चोहान कैद था। पहाडो मे घिरे हुए गजनी के इस कैदखाने की बनावट भी बडी जल्लादी थी। मजबूत चारदीवारी के अन्दर पत्थरो की छोटी छोटी ऐसी काल कोठरियां बनी हुई थी जिनमे कि एक कोठरी मे एक ही आदमी कैद रह सकता हो। ढाई गज लम्बी और दो गज चौडी यह कोठरी तीन तरफ से बिल्कुल बन्द थी। कोई सुराख तक ऐसा न था जिसमे से हवा या रोशनी की एक झलक भी आ सके। सामने की तरफ लोहे के मोटे सीकचो का केवल एक इतना छोटा दर्वाजा था जिसमे से कोई कैदी दब भिच कर काल कोठरी मे ठुस जाये। इस कोठरी के चारो तरफ करीब तीन तीन गज की दूरी पर भालो की नोको से जडी हुई ऊंची ऊंची दीवार थी।

इस तरह यह कैदखाना हर तरह से सख्त था, और चारो तरफ सख्त ही पहरा था।

इसी पहरे और कारागृह की अंधेरी काल कोठरी मे पृथ्वीराज चौहान को बेडी मे जकड कर डाल रक्खा था। सिर्फ शौच के लिये बाहर निकाला जाता था और फिर उसी पिंजरे मे डाल दिया जाता था।

दिन मे एक वक्त तीन रोटी और दो वक्त पानी देने के अतिरिक्त चौहान को जबरदस्ती जीवित रखने के लिये और कुछ नही किया जाता था।

आज चौहान को देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि यह वही चौहान है कि जिसकी तलवार ने गोरी को सत्रह बार हराया [illegible] जिसके तीर ने बडे बडे पानी वालो को पानी मंगवा दिया, या जिसकी [illegible] ने [illegible] होते थे।

पहली हार

विधि की विडम्वना भी कैसी विचित्र है! कल जिसके लोहे से विधर्मी काँपते थे आज वही विधर्मियो की कैद मे ज़मीन कुरेद रहा है। बढी हुई हजामत और बहुत दिनो की बढी हुई दाढी से चौहान बिल्कुल रीछ से लग रहे थे।

वह गौर वर्ण, वह उन्नत वक्ष, वह लम्बी ग्रीवा सब पत्थर के आसुओ से मौन थी। उन बडी बडी आँखो के निकाल लेने पर वे गड्ढे अब भी आग की तरह लाल थे, पर लाचार! देखते ही पत्थर को भी रुला देते थे।

जिसे यमुना की निर्मल धारा स्वयम् अपनी कोमल लहरो से नहलाती थी, आज उसकी देह पर मैल की तह जमी हुई थी। जिसके शरीर से इत्रो की सुगन्ध उडा करती थी, आज उसी के चारो ओर दुर्गन्ध है।

चक्षुहीन चौहान इस नरक कोठरी मे पडे प्राणो का पिँजरा टूटने की प्रतीक्षा मे थे। वे रह रह कर आप ही आप कह रहे थे, "हे ईश्वर! अब तो दया कर, अब तो अपने पास बुलाले। बहुत सह चुका, अब नही सहा जाता। तूने मुझसे मेरे देश की मिट्टी तो छीन ली, अब ऐसा तो न कर कि विधर्मी के हाथ से मेरी मृत्यु हो, मुसलमान के हाथ से तेरे द्वार पर आये हुए की हत्या हो। मेरी इच्छा थी कि मैं अपनी दिल्ली की ज़मीन पर मरूँ। पर तेरी सजा ने मेरी वह इच्छा तो पूरी नही होने दी, अब इतना तो कर दे कि यवन के हाथ से न मरूँ। अपने ही हाथो से मेरा गला घोट दे मेरे ईश्वर!"

चौहान अपने ईश्वर के आगे रो ही रहे थे कि ... दर्वाज़ा खुला, और फकीर वरदाई ने उस... प्रवेश किया जिसमे फूटी आँखो मे सूखे आँसू ज...

चौहान को देखते ही बरदाई का रोम रोम फूट पड़ा। पर
पहरेदारों के साथ होने के कारण वे सिसके तक नहीं।

पहरेदारों के अफसर ने चौहान से कहा— "ये एक पहुँचे हु
फकीर आप से मुलाकात करने आये हैं। ये बहुत ऊँचे महात्मा हैं
सुलतान गजनी तक आपके मुरीद हैं। उन्होंने इनको आप से तन्हा
में मिलने की इजाजत दे दी है। आप बाहर बगीचे में चलिये। वह
इन महात्मा से मिलकर बातचीत कर लीजिये। खुदा ने आप को य
खुशकिस्मती बख्शी है।"

फँसे ? अच्छा होता वहीं कहीं गगा यमुना मे डूब कर जीवन लीला समाप्त कर देते। कम से कम यवनों के हाथ से हलाल तो न होते।

वरदाई— आज मैं अपने महाराज से जीवन मे पहली बार हारे शब्द सुन रहा हूँ। धीरज रखिये महाराज! ईश्वर अवश्य हमारी सहायता करेगा।

पृथ्वीराज— जब बुरा समय आता है तो ईश्वर भी आँखे फेर लेता है। आज चौहान की बिगड गई तो कीडे मकोडे भी उसे चूट चूट कर खा रहे हैं। अब कोई आशा बाकी नही रही चन्द्र! केवल मृत्यु की प्रतीक्षा है। सुना है आठ दिन बाद बकरा ईद पर सुलतान मुझे सरे बाजार कत्ल करेगा, इससे वह पहले हर तकलीफ मुझे दे देना चाहता है। पर चौहान को चाहे सूंइयो से नोच डाला जाये किन्तु उसका सर गोरी के आगे कभी नहीं झुक सकता। चाहे उसके रोम रोम को जलाया जाये पर वह अपना धर्म कभी नहीं छोडेगा।

वरदाई— चौहान का सर कभी नही झुकेगा। उसका धर्म कभी नही छूट सकता। चन्द्रवरदाई तभी मरेगा जब पहले गोरी को मार डालेगा।

पृथ्वीराज— अब यह स्वप्न इस जीवन मे पूरा नही हो सकता चन्द्र! इसके लिये चौहान के दूसरे जन्म की प्रतीक्षा करो!

वरदाई— दूसरे जन्म में नहीं, इसी जन्म मे गोरी की मौत चौहान के हाथों लिखी है। मैंने सारा चक्र रच लिया है। देवी दुर्गे मुझे स्वप्न ने सारा उपाय बता गई हैं। चण्डी माँ शहाबुद्दीन का रक्त पीने के लिये खाली खप्पर लिये खडी है। हिम्मत न हारो चौहान-कुलोज्ज्वल! जब तक श्वास है, तब तक आशा है। भूल गये भगवान कृष्ण की वह लीला जब अर्जुन को चिता मे जलते जलते बचा लिया

पवित्र दिल्ली मे चारो ओर गोवध होते हैं। हर हिन्दू को लूट लूट कर लुटेरे नवाब बने बैठे हैं। बहिन बेटियो को ज़बरदस्ती हरमो मे ले जाया जा रहा है। कबायली, पठान, गजनी और मकसूदी जितना भी जुल्म कर सकते हैं कर रहे हैं। हर तरफ हाहाकार मचा हुआ है। बिचारे हिन्दू की कोई सुनने वाला नही। मुसलमानो का ऐसा आतक छा गया है कि कोई राजपूत नहीं रहा।

पृथ्वीराज— हे ईश्वर! जहाँ तूने आँखे छीनी थी वहाँ कान भी छीन लेता, जिससे यह हृदय-विदारक कहानी तो न सुनता। हाँ, यह तो बताओ कि हमारे बाद महल मे क्या बीती?

बरदाई— जीत के बाद गोरी ने महल पर चढाई कर दी। वह चाहता था कि रानियो को भी कैद करके गज़नी ले चलूँ, पर उसकी यह आशा पूरी न हो सकी। रानी सयोगिता और चन्द्रागदा ने बडे पराक्रम से काम लिया। वे आशा रहते तलवार ताने खडी रही, लेकिन जब लाचार हो गई तो महल मे जितनी भी देवियाँ थी सबको लेकर अग्नि-माता की गोद मे सती हो गई। मुसलमान जब महल में पहुँचे तो उन्हे राख की ढेरी मात्र मिली।

पृथ्वीराज— धन्य है देवियो! तुमने हिन्दुत्व एव क्षात्र-धर्म की लाज राख ली। तुमने सती होकर चौहान के देश की मर्यादा बचा ली। अब वह दिन दूर नहीं है जब स्वर्ग मे मैं तुमसे मिलकर सुख की प्राप्ति करूँगा।

बरदाई— लेकिन गोरी आपसे कहेगा कि सयोगिता जीवित है। यह मेरा और उसका रचा हुआ एक कुचक्र है। वह आपसे कहेगा कि हम तुम्हे तुम्हारी बीबी सयोगिता से मिला सकते हैं पर तुम्हे उससे यह कहना होगा कि तुम सुलतान की बेगम बन जाओ।

इस पर आप गुस्से मे आगबबूला हो जाना। तब गज़नी सुलतान

गोरी आपसे कहेगा कि अच्छा यह शर्त रही कि अगर तुमने आवाज़ पर तीर का सही निशाना लगा दिया तो हम तुम्हारी बीवी को तथा तुम्हे तुम्हारी दिल्ली सहित छोड देगे और अगर तुमसे निशाना नही लगा तो तुम्हे अपनी बीवी को हमारी बेगम बनाना पडेगा और तुमको माफी माँगनी पडेगी तथा तुम्हे शूली पर लटका दिया जायेगा ।

आप यह शर्त मान लेना और मेरी साकेतिक विद्या मे अपने शब्दवेधी बाण द्वारा उल्टा गोरी का काम तमाम कर डालना । उसके बाद अपने अपने खड्गो से हम अपने सर माँ चण्डी के चरणो मे चढा देगे ।

पृथ्वीराज— लेकिन अब मै शब्दवेधी बाण कैसे चला सकूंगा ! अभ्यास छूट चुका है, शरीर मे शक्ति नही रही । चौहान अब केवल शवमात्र है, हवा से हिलती हुई लाश से क्या तुम्हारी आशा पूरी हो सकेगी सखे !

बरदाई— सन्देहात्मक नाश को प्राप्त होता है चौहान ! जिसे स्वयम् पर विश्वास है उसे तो मृत्यु भी नही मार सकती। राज्य गया, जीवन गया, अब इतिहास के पृष्ठो पर अपना अमर गौरव तो छोडते चलो ! माँ भगवती का स्मरण कर विश्वास से शक्ति को जगाओ सखे ! कलक धुल कर ससार मे ऐसे ही रह जायेगा जैसे आकाश के चांद में स्याही दीखती है । साहस और शूरता को जगाओ धनुर्धर ! राम तुम्हे अपने तीर की शक्ति देगे ।

पृथ्वीराज— बल तो नही है, लेकिन फिर भी यदि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो यत्न कर लो, फल जो भी कुछ निकले ।

बरदाई— विश्वास दृढ होना चाहिये। फल वही निकलेगा जो कुछ हम चाहते हैं ।

पृथ्वीराज— ईश्वर तुम्हारी इच्छा पूरी करे! महाकाली! मुझे शक्ति दे कि मैं दुश्मन को उसके घर मे करोडो के होते हुए अकेला और अन्धा मार सकूं।

वरदाई— निस्सन्देह निश्चित मारेंगे। मेरा आत्मा पुकार पुकार कर कह रहा है कि शहाबुद्दीन की मौत चौहान के हाथ से होगी। अब बहुत देर हो गई है, कही ओहदेदारो को कुछ शक न हो जाये। यदि मेरा यकीन जाता रहा तो सब कुछ किया कराया मिट्टी मे मिल जायेगा। अब आप यह भूल जाइये कि मैं आपका बचपन का सखा चन्द्रबरदाई हूँ। गज़नियो के सामने आप मुझसे ऐसा ही व्यवहार करे जैसा दुश्मन के आदमी से किया जाता है। लो, वे आ ही रहे हैं। अब मै अपना रुख बदलता हूँ।

पृथ्वीराज— लेकिन मैं शब्दवेधी बाण अपने ही धनुप पर चला सकता हूँ, हर धनुप पर सही तीर नही चला सकता। दूसरे धनुप पर हो सकता है निशाना चूक जाये। किसी भी तरह वही धनुष मुझे मिलना चाहिये जो मेरा हो।

वरदाई— यत्न करूँगा। अच्छा, अब सँभलिये!

पृथ्वीराज— अकेली औरत पर जुल्म करते हुए शहशाहे गज़नी को शर्म नही आती। वह चाहे मुझे ज़िन्दा जलादे, पर मैं सयोगिता के बारे मे कुछ सुनना नही चाहता।

वरदाई— तो फिर मान जाइये सुलतान की बात! तुम्हे तुम्हारा खोया हुआ राज्य वापिस मिल जायेगा।

पृथ्वीराज— पृथ्वीराज ने शेर की ज़िन्दगी बिताई है, गीदड की नही। उसने जो चाहा है तलवार ने लिया है, अपनी बहिन, बेटी और पत्नियो को बेच कर नही।

बरदाई— अगर तुम्हे अपनी ताकत का इतना ही घमण्ड है तो दिखाओ अपनी ताकत ! यदि तुमने शब्दवेधी बाण से आवाज़ पर नही सही निशाना लगा दिया तो सुलतान हार मान लेंगे, और तुम्हे तुम्हारा राज्य वापिस दे दिया जायेगा। और अगर निशाना ठीक नही लगा तो तुम्हे सयोगिता शहशाहे गज़नी को देनी होगी।

पृथ्वीराज— गोरी के कौलोक़रार का कोई यकीन तो है नही, फिर भी हम शर्त स्वीकार करते हैं।

बरदाई— तो फिर चाँद से अगले दिन गज़नी के किले मे तुम्हे मौका दिया जायेगा। अच्छा अब हम चले, जय भूतनाथ !

गज़नियो के साथ बरदाई जेल से बाहर निकल आये और चौहान लोहे के सीकचो से सिर चिपका कर सोचते रह गये।

अकेले मे जब पूर्व स्मृतियाँ जाग उठती हैं तो बहादुर से बहादुर आदमी भी रो पड़ता है। चौहान को आज बहुत सी बाते एक साथ याद आ गई। जो बचपन और जवानी वर्षों की कहानी मे लिखी हुई थी वह स्मृति की पलको पर पलो मे नाच उठी।

"हा चन्द्रबरदाई ! आज तुम्हारी यह दशा ! सामन्त से फकीर बनना पड़ा। मेरे लिये तुम कितनी ठोकरे खा रहे हो ! यह सब तुम्हे मेरे ही पापो के कारण भोगना पड़ा है। मै आँखे रहते हुए अन्धा हो गया था, तभी तो आज सचमुच अन्धा होना पड़ा। कहाँ गया वह बचपन जब हम और तुम साथ खेला करते थे ! कहाँ है वह जवानी जो पागल बन बैठी थी ! कहाँ है धनुष और तलवार जिससे धरती पर भूकम्प आ जाते थे ! चन्द्रागदा और सयोगिता का वह रूप किधर छिप गया जिस पर भौंरा बना हुआ था ! आज दिल्ली के ऊचे सिहासन के स्थान पर पत्थरो का यह पिजरा है। आज उस गर्व के स्थान पर आखो

मे लाचारी रो रही है। सच है, होनी बडी बलवान होती है। समय की शिला के नीचे जीवन के सहस्रो मधुर और दुखद इतिहास दबे मरे रहते हैं और शिला पर लाचार मनुष्य रोता रहता है। शायद लाचारी का ही दूसरा नाम जिन्दगी है।"

पीडा के उद्रेक मे मनुष्य घण्टो तक कहानी याद करके रोता रहता है, और फिर रोता ही रोता स्वप्न से मे सो जाता है।

यदि जीवन मे नीद न हो तो मनुष्य रोता रोता ही मर जाये। सोने ने मनुष्य की पीडा कुछ देर के लिये सो जाती है।

रोते रोते चौहान सीकचो के सहारे ही सो गये। नीद हर दुखी को अपनी गोद मे आश्रय देती है। पर ये दुनियावाले रोतो का सोना भी नही देख सकते।

चौहान अभी रोते रोते सोये ही थे कि हट्टे कट्टे जेल-जमादार ने आकर जगा दिया।

पृथ्वीराज को उठा जमादार ने कहा— ओ कैदी नम्बर बारह! उठ, रोटी खाले।

चौहान का स्वप्न टूट गया। वे उठे और धीरे से बोले— रोटी तो मै नही खाऊँगा जमादार!

जमादार— तो फिर क्या पत्थर खायेगा?

पृथ्वीराज— पत्थर तो खा ही रहा हूँ। आज जिसकी जो इच्छा होती है वह जाता है। जबान के पत्थर पहाडो के पत्थरो से सख्त होते है जमादार!

जमादार— शहशाह का हुक्म है कि चौहान को जितनी भी तकलीफें दे सको, दो।

पृथ्वीराज— तुम्हारे शहशाह से बडा भी कोई बादशाह है। ईश्वर से बडा हुकुम किसी का नही होता। वहाँ तुमसे तुम्हारे जुल्मो का जवाब पूछा जायेगा।

जमादार— कहाँ है तेरा ईश्वर? होता तो क्या तुझे कैद से छुड न लेता। ले, रोटी खानी है तो खा ले, नही तो भूखा पडा पड सडता रह!

पृथ्वीराज— मै किसी मुसलमान के हाथ की रोटी नही खाऊँगा।

जमादार— अभी क्या, अभी तो वह दिन आने वाला है जब दुनिय मे कोई हिन्दू नही होगा। कल तेरे लिये गाय का मास लाया जायेगा नही खाया तो जबरदस्ती मुँह मे ठूसना पडेगा।

कहते हुए जमादार अकडता हुआ चला गया, और चौहान आप ह आप कहने लगे— 'वाह रे अभागे हिन्दू! आज तेरी यह दुर्दशा चौहान! इस सबका उत्तरदायित्व तुझ पर है। पवित्र भारतभूमि वह बीज तूने ही बोया जिससे नाम से चाहे नही पर काम से स विधर्मी हो जायेंगे। हे ईश्वर! तू मुझ एक का दण्ड सब को न दे।'

चौहान चारो ओर से निराश दुःख के सूखे आँसू उबाल रहे थे कि दर्वाजे के बूढे जमादार रहमत ने कहा— "खुदा की कैसी अजीब कुदरत है! दिल्ली का इतना बडा बादशाह आज इस हाल मे! हे परवरदिगार! तू अपने बन्दो पर रहम कर। आपने रोटी नही खायी राजा साहब! अगर कोई एतराज न हो तो मै अपनी माँ से रोटी पकवा लाऊँ। मै खुदा की कसम खा कर कहता हूँ, उसने जिन्दगी मे कभी मास नही खाया।"

रहमत की बात सुन कर चौहान की सूखी आँखो में भी पानी छलछला आया। उन्होने रुँधे कण्ठ मे कहा— दुनिया मे इन्सान

हर जगह होते हैं भाई, हैवानो की दुनिया मे तुम तो कोई फरिश्ते जान पडते हो।

रहमत— दुनिया मे हर आदमी खुदा का बन्दा है, उसका फर्ज है इन्सान की इमदाद करना। आप मेरी तारीफ न कीजिये। अगर आप मेरे हाथ की रोटी खाना पसन्द नही करते तो मै कुछ सूखे मेवे और सब्जी ले आऊंगा। इसमे तो आपको कोई एतराज नही होना चाहिये।

पृथ्वीराज— तुम्हारा प्रेम देखकर तो मुझे तुम्हारे हाथ का जहर खाने मे भी कोई एतराज नही। लेकिन अगर मेहरबानी करना ही चाहते हो तो सामने के पेडो से पत्ते तोड कर ला दो। पेट की आग बुझाने के लिये वे काफी हैं।

रहमत— आप नही मानते तो मै पत्ते तोड कर ले आता हूँ। लेकिन जब तक आप पत्ते खायेगे, तब तक मै भी पत्ते ही खाकर गुजारा करूँगा।

पृथ्वीराज— नही, यह नही हो सकता। भला मेरी वजह से आप पत्ते क्यो खाये।

रहमत— दुनिया मे जो इन्सान दूसरे की तकलीफ से दुखी नहीं होता, वह इन्सान नही है। यह कैसे हो सकता है कि दिल्ली का इतना बडा बादशाह पत्ते खाये और रहमत आराम से रोटी खाता रहे। अब आप दुश्मन नही, हमारे मेहमान है।

पृथ्वीराज— गजनी मे अब तक भी तो पत्ते खा कर जिन्दगी चलाता रहा हूँ।

रहमत— लेकिन तब पहरे पर रहमत नही था। रहमत के रहते दिल्ली का बादशाह और हमारा मेहमान पत्ते [illegible] [illegible]

सच्चे मुसलमान हैं राजा साहब ! हमारा मजहब हम से नहीं कहता कि आपस में वैर करो, या किसी पर जुल्म करो। चार दिन की ज़िन्दगी में कोई चाहे जितने अत्याचार कर ले पर फिर तो उसे खुदा के यहाँ अपने गुनाहों का हिसाब देना ही पड़ेगा। बादशाह हो या फकीर, हरेक के लिये मिट्टी ही माँ है। साँस पूरे करके सब को एक ही ज़मीन पर सोना है।

पृथ्वीराज— तुम्हारे इतने ऊँचे विचार हैं, तुम तो देवता जान पड़ते हो रहमत ! इतने नरपिशाचों में तो तुम्हें दाँतों में जीभ की तरह रहना पड़ता होगा।

रहमत— काँटों में फूल भी तो खिलता है महाराज ! हम सब के बीच में रहते हुए भी सब से अलग हैं। पेट भरने के लिये नौकरी ज़रूर करते हैं पर हमने ईश्वर की नौकरी नहीं छोड़ी है।

पृथ्वीराज— हम तुम से बहुत खुश हैं रहमत ! तुम्हें पाकर हमें नरक में भी स्वर्ग का अनुभव होता है। आज से तुम हमारे दोस्त हुए, लेकिन हम तुम्हें तुम्हारे फर्ज़ से अलग नहीं करेंगे।

रहमत— मेरे शानदार दोस्त ! फर्ज तो मैं खुद भी नहीं छोड़ूँगा। एक ईमानदार पहरेदार और सच्चे दोस्त की तरह मैं अपना कर्त्तव्य पालन करूँगा।

इतने में ढोल बज गया और रहमत की जगह दूसरा जमादार आ गया। घर जाकर रहमत को कुछ अच्छा नहीं लगा। न उसने खाया, न किसी से बोला। तमाम रात पड़ा पड़ा रोता रहा और अपने खुदा से इलतजा करता रहा— "ओ खुदा ! तू अपने बन्दों पर रहम कर। तू दूसरों की तकलीफें मुझे दे दे और मेरा सुख सब को बाँट दे ! दुनिया में जितने भी दुखी हैं, सब को सुखी कर मेरे मालिक ! तू मेरे दोस्त के गुनाह माफ कर दे।"

रात भर खुदा से प्रार्थना कर दूसरे दिन रहमत ने विना खाये ही कुछ सूखे मेवे और कुछ फल अपनी अचकन की थैले जैसी भीतर की जेबो मे भर लिये, तथा मालिक का नाम लेते हुए कैदखाने पर पहरे के लिये आ गये।

चौहान को देखते ही रहमत को रोना आ गया। उसने पास जा कर रुँधे कण्ठ से कहा— उठो दोस्त! मैं कुछ मेवा और फल लाया हूँ।

पृथ्वीराज— नही रहमत! यह नहीं हो सकता। मैं अपने दोस्त का नाम उन गद्दारो में नही लिखवाऊँगा जो अपने मालिक के साथ नमकहरामी करते हैं।

रहमत— नमकहरामी तव होती जव मैं कानून के खिलाफ करता। हमारे कानून में यह नही है कि सियासी कैदी से इखलाकी कैदी जैसा सलूक किया जाये।

पृथ्वीराज— फिर भी तुम्हारे मालिक का हुकुम तो यह नही है। तुम्हारे वादशाह का हुकुम तो यह है कि चौहान को सुइयो से नोचा जाये।

रहमत— यह हुकुम गजनी के वादशाह का हो सकता है, पर हम सव के मालिक का नहीं। मुझे उस अपरम्पार मालिक का हुकुम नहीं होता तो मुझे आपसे प्रेम क्यो होता! उसी के हुकुम से मेरे दिल मे आपके लिये दर्द है। आप नहीं खायेगे तो मैं भी तव तक नहीं खाऊँगा जव तक आप नही खायेगे।

पृथ्वीराज— तो क्या तुमने कल सारा दिन कुछ नही खाया?

रहमत— खुदा का हुकुम है कि भूखे को खिला कर खाओ। मेरे घर मे मेरा मेहमान भूखा रहे और मैं खाकर सो जाऊँ, लानत है मुझ पर। ऐसे आदमी पर खुदा की मार हो।

पृथ्वीराज की सूखी आखे यह सुनते ही डबडबाने लगी। उन्होंने टटोल कर सीकचो मे मे रहमत का हाथ पकडते हुए कहा— तुम हिन्दू से भी बड़े हो, मैं तुम्हारे हाथ से अवश्य खाऊंगा। तुम्हारे हाथ की रोटी खाने मे मुझे कोई आपत्ति नहीं।

रहमत— तो मैं कल अपने हाथ मे दोस्त के लिये रोटी बनाकर लेता आऊँगा। अब तो ये मेवा खालो!

पृथ्वीराज— कल किसने देखा है रहमत! कल क्या होगा, यह ईश्वर ही जानता है। इसलिये आज को क्यो खोये! थोडा सा पानी ले आओ, फिर हाथ धोकर तुम्हारे साथ सुदामा के चावल अर्थात् दोस्त की मुहब्बत मिठाई खाऊँगा।

रहमत डिब्बे को सात वार माँज और सात ही बार मिट्टी मे अपने हाथ धो पानी लेकर चौहान के पास आया। चौहान ने हाथ मुँह धो रहमत के साथ मेवा खानी शुरू की।

रहमत ने चौहान को अपने हाथ से मेवा खिलायी ही थी कि कुछ बडे अधिकारियो के साथ जेलर वहाँ आ धमका।

पर रहमत बिल्कुल नही घबराया। वह उसी तरह मेवा और सब्जी चौहान को खिलाता रहा।

यह देख जेलर ने उसके बेत मारते हुए कहा— नमकहराम! जेल के कानून के खिलाफ तू यह क्या कर रहा है? सिपाहियो! देखते क्या हो, पकड लो इसे भी और तन्हाई की कोठरी मे कैद कर दो!

सिपाहियो ने रहमत के पैरो में बेडिया डाल उसे भी चौहान के बराबर वाली काल कोठरी मे कैद कर दिया।

२१

'ईद मुबारिक हो मिया यूसुफ।' मिया सफीकइलाही ने यूसुफ मिया को गले से लगाते हुए कहा।

'मुबारिक हो मिया सफीक। मुबारिक हो।' यूसुफ मिया ने दिल से दिल मिलाते हुए कहा।

सफीक— कहो मिया यूसुफ। अब कहाँ जश्न रहेगा?

यूसुफ— सफीक भाई, पहले तो चलो सिमई खा ले, फिर दरबार में चलेंगे। सुना है आज वहाँ पृथ्वीराज चौहान कोई कमाल दिखायेंगे।

सफीक— हाँ, आज तो सुलताने गज़नी की तरफ से ज़ोरदार महफिल है। सुना है बडी बडी हूरे नाचेगी। ईरान, काबुल, काश्मीर, अफगान और हिन्दुस्तान का बेशकीमती हुस्न गज़नी मे नाचेगा।

यूसुफ— हाँ, जिगरी। आज तो बडे जौहर गज़नी मे जन्नत की बहार देने। आज तो खुशी का दिन है, खूब पियो और पिलाओ। और क्योंकि यह साल दिल्ली की जीत का साल है, इसलिये दिल का चमन फूलों से महकने दो। हाथ मे सुराही, बगल मे हुस्न और सामने माशूको की महफिल जमने दो।

सफीक— तुम्हे तो बिना पिये ही और बिना हुस्न के ही नशा हो रहा है।

यूसुफ— ज़रा अपनी अदा तो देखिये सफीक साहब! हज़ारो हुस्न और हज़ारो शराब शक्ल पर सवार हैं। यह तहमद, यह मलमल का कुर्ता, यह जर्क-बर्क अचकन, यह चमकती हुई टोपी, यह सुर्मा, यह तेल, यह इत्र, यह मुंह मे पान, यह गले मे चमेली के गुलों का हार! कौनसी ऐसी बहार है जो तुममें नही है, कौनसा ऐसा हुस्न है जो तुम्हारी शक्ल मे नही, कौनसी ऐसी शराब है जो तुम्हारी आँखो से नही बरस रही!

सफीक— बस, बस, मिया यूसुफ बस! कही दुनिया भर की सारी शायरी यही खत्म न कर देना। कुछ दुनिया के और शायरो के लिये भी बाकी रहने दो!

यूसुफ— क्या कमाल हासिल है हुस्न को कि जिसने मुझे शायर बना दिया।

सफीक— बस यूसुफ! बस, कही पागल न हो जाना।

यूसुफ— तुम्हारे हुस्न की हर अदा निराली है, दीवाना बना दिया।

सफीक— जियो, मेरी जान जियो! ज़िन्दादिली इसी का नाम है। लेकिन यह तो बताओ, वे सिमई कहां हैं?

यूसुफ— फिक्र क्यो करते हो जानेमन! ईद का दिन है, जो चाहो खाओ, जो चाहो पियो! जन्नत के दर्वाज़े तुम्हारे लिये खुले हुए हैं, बहिश्त तुम्हे बुला रहा है, साकी तुम्हे आवाज़ दे रहा है, प्याला तुम्हारे ओठो की तरफ उठा आ रहा है।

सफीक— अब यह जवानी जमा-खर्च ही करते रहोगे या कोई दावन-बावन का हिसाब-किताब भी है।

यूसुफ— जो उम्मीद मे रस है, वह पाने मे कहाँ है सफीक ! दुनिया पीती है प्यालो मे, वातो की पीते हैं हम ।

सफीक— जनाव को तो दस वोतल की चढी हुई है, अव चलिये भी कही !

यूसुफ — चलो, जहाँ जी चाहे चलो ! आज अपना है, जी भर हँसो ! पता नही कल यह जिन्दगी रहे या न रहे, इसलिये आज खूब ईद मनने दो। मरने के वाद की जन्नत किसने देखी है !

सफीक— अरे मिया, किसकी जन्नत और कैसी जन्नत ! जो कुछ जन्नत है वह इसी दुनिया मे है। यही हूरे हैं, यही शराव है, और यही मेरे जिगरी यार मिया यूसुफ हैं।

युसुफ— सच कहते हो भाई जान ! मजा तो तव था कि जव सुलताने गजनी आज के दिन सडको पर शराव की प्याउए लगवा देते ।

सफीक— मिया ! हमे वादशाह वनने दो, फिर यही लो, हर रास्ते पर शराव की प्याउ लगवा दूंगा ।

यूसुफ— वडी वडी सल्तनते तुम जैसे शौकीनो ने ही तो लुटाई हैं। लो अव जशन मे चलो भी !

और फिर इसी प्रकार मसालेदार वाते छोकते हुए दोनो जशने सल्तनत मे चल पडे। चारो ओर से भीड आज दरवारे आम मे जा रही थी। गजनियो की निराली अदा देखने लायक थी। हर वालक, वूढा और जवान चिकना चुपडा और चमकता हुआ चला जा रहा था। इनमे से कौन ऐसा था जो अपने को वादशाह नही समझता था !

दरवारे आम मे ईद और जशने जीत की मजलिस जमनी शुरू हो गई। वजीरो और ओहदेदारो से दरवार मे रौनक आने लगी। ऊंचे

ऊँचे गद्देदार मूढ़ो पर जर्क वर्क पोशाकों वाले दरबारी रौनक अफरोज होने लगे।

दरबार भरने पर वज़ीरे आज़म ने नज़ाकत से कहा— 'आप लोग तसल्ली से अपनी अपनी जगह पर बैठें। अभी थोड़ी देर में शहंशाहे गज़नी रौनक अफ़रोज़ होने वाले हैं। उनकी तबियत जरा अलील हो गई थी, इसलिये देर हो गई है, अब आने ही वाले हैं। और फिर दिल्ली के राजा पृथ्वीराज चौहान को जिसे हमारे सुलतान कैद कर लाये हैं आपकी खुशी के लिये आपके सामने पेश किया जायेगा। सुना है पृथ्वीराज को आवाज़ पर तीर का निशाना लगाने का कमाल हासिल है। आज वह आपको बाजीगर की तरह अपना कमाल दिखायेगा। इतने हमारे मालिक आये हम उस कैदी को बुलवाते हैं।'

कहते हुए वज़ीरे आजम ने हुकुम दिया कि पृथ्वीराज चौहान को हाज़िर किया जाये।

हुकुम सुनते ही मुसल्ला पुलिस जेल पर पहुंची और चौहान को काल कोठरी से बाहर निकाल लोहे से इस तरह जकड़ दिया जैसे तारों से लाठी कस दी जाती है।

हथकड़ियों और बेड़ियों से बांध चौहान को लेकर जब मुसल्ला चलने लगे तो बराबर की काल कोठरी में कैद रहमत ने हिचकी भरते हुए कहा— या खुदा! क्या तुझमें ताकत नहीं रही जो तेरे बन्दों की यह दुर्दशा हो रही है? बादशाह राजा के साथ इखलाकी कैदी जैसा सलूक कर रहा है और तू चुप बैठा है!

और इधर चौहान ने आलिंगन के लिये उठी हुई भुजाओं से टटोलते हुए कहा— कहाँ हो दोस्त रहमत! आओ, जाने से पहले एक बार सीने से तो लग जाओ! पता नहीं फिर मिलना हो या न हो!

रहमत— मैं भी तुम्हारी तरह मजबूर हूँ दोस्त! जी चाहता है कि कैदखाने के ये सीकचे तोड कर तुम्हारी हथकडियो और बेडियो के टुकडे टुकडे कर डालूं! दिल करता है कि गजनी के सारे जुल्म मिटा डालूं! पर लाचार हूँ। खुदा ने मुझे इतनी ताकत नही बख्शी।

पृथ्वीराज— ईश्वर ने तुम्हे प्रेम की दौलत दी है। यह वह शक्ति है जिसके सामने हर नियामत तुच्छ है। मुझे जितना दुख दिल्ली छोडते हुए था उतना ही दुख अपने दोस्त रहमत को तन्हाई मे अकेला छोडते हुए है। तुम्हे मेरे ही कारण कारागृह की ये कठोर यन्त्रणाये सहनी पड रही हैं।

रहमत — इन्सानियत के फर्ज को दुख न कहो राजा साहब! मुझे दुख मे ही सुख लगता है।

पृथ्वीराज— बाहर की आँखो मे तुम्हे देख नही सकता रहमत! पर दिल की आँखो से तुम्हारा साफ दिल देख रहा हूँ, जो गगाजल की तरह निर्मल है, जो आबेजमजम की तरह पाक है, जिसमे दुश्मनी और गुनाहो की बदबू का नाम नही है।

दैत्यो की दुनिया मे फरिश्तो की ये बाते हो ही रही थी कि पुलिस ने चौहान को धक्का देते हुए कहा— 'चल, अन्धे चल!'

चौहान ने मन ही मन मे कहा, 'सच है, अन्धा न होता तो आज यह दिन ही क्यो देखना पडता!'

सोचते हुए पश्चाताप करते प्रायश्चित्त के लिये चौहान बँधे हुए बूढे शेर की तरह मुसल्ला पुलिस के साथ चल पडे।

जैसे ही वे दरबार के समीप पहुँचे वैसे ही दर्शको के शोर से गज़नी गूँज उठी। दर्शकगण उचक उचक कर चौहान को देखते और ठहाका मार कर ऐसे हँसते जैसे गीदड दहाड रहे हो।

पर जैसे सरकस मे शेर पिंजरे मे पडा पडा लाचार रहता है, वैसे ही चौहान भी विवश थे। जिसकी दहाड से गजनी की नीव की ईंट तक दहल जाती थी, समय के फेर से आज उसी पर गजनी के मच्छर भी हँस रहे हैं। वाह रे ईश्वर! तेरी गति भी बडी ही विचित्र है।

सीकचो के बीच की राह से चौहान को वहाँ लाया गया जहाँ चारो ओर लोहे के तवे जडे हुए थे। यही वह स्थान है जहाँ पृथ्वीराज चौहान अपना शब्दवेधी बाण का कौशल दिखाने वाले हैं।

चारो ओर मोटे मोटे लोहे के सीकचे गडे हुए हैं। सीकचो से बाहर करीब दो दो गज़ की दूरी पर बल्लियाँ गडी हुई हैं। इन बल्लियो के पीछे दर्शकगण बैठे हैं।

सीकचो के पास ही दूसरी दिशा मे बहुत ऊँचे पर हीरे मोतियो का एक सिंहासन है। यह सिंहासन शहशाहे गजनी के लिये सजाया गया है। इस सिंहासन के चारो ओर लोहे के बहुत ही मजबूत तवे जडे हुए हैं। शहाबुद्दीन गोरी पर तवो का पहरा इस तरह है कि जैसे उनके सारे शरीर ने लोहे का कवच पहन रखा हो। सिर्फ उनका चेहरा ही सबको दिखाई दे सकता है। मानो सुलताने गजनी अपनी बडी शान मे सिकुडे जा रहे हो।

उनके बराबर मे ही दूसरी ओर वज़ीर और दरबारी सजे बजे बैठे हैं। इन दरबारियो की निराली अदा पर आज सारी गजनी न्योछावर हुई जा रही है। कोई अचकन मे है तो कोई ज़री की जाकट मे, कोई तहमद में है तो कोई पजामे मे, कोई सलमे सितारो की टोपी लगाये है तो कोई गोटे टप्पे में चमक रहा है।

ईद की इस निराली छवि में कहकहे लग ही रहे थे कि वज़ीरे-गजनी ने उठकर कहा— 'मावदौलत बादशाह सलामत के हुकुम से

आज दिल्ली का राजा पृथ्वीराज चौहान जो आपके सामने गजनी का कैदी है, जशने ईद के सुनहरी मौके पर आवाज पर तीर का निशाना लगाने का कमाल दिखायेगा। अगर चौहान से सही निशाना नहीं लगा तो वह हार मान कर हमारे बादशाह की गुलामी कबूल कर लेगा, और अपनी बीवी को सुलताने गजनी को दे देगा। पर इसके लिये जरा फकीर साहब की इन्तजार है। बरदाई साहब आये कि कमाल दिखाने का हुकुम हुआ।'

'लो वे फकीर साहब आ गये!' भीड मे शोर गूंज उठा। और बरदाई जादू सा करते हुए कटघरे में दिखाई देने लगे।

बरदाई ने आते ही कहा— 'अब आप चौहान का कमाल देखेंगे। बादशाह सलामत बेत से कोई भी लोहे का तवा बजायेंगे और चौहान उसका निशाना लगा देंगे। सुलताने गजनी के हुकुम से चौहान के हाथ मे तीर कमान दी जाये।'

बरदाई के कहते ही फौजी अफसर ने एक मजबूत धनुष बाण ला दिया। पृथ्वीराज ने शक्तिरूपा माँ दुर्गा का स्मरण कर धनुष पर तीर चढाया और चलाने के लिये प्रत्यंचा तानी।

पर चौहान की चुटकी से प्रत्यंचा खिंचते ही धनुष के दो टुकड़े हो गये। पृथ्वीराज का इस दशा मे भी यह प्रचण्ड बल देख दरबार मे सन्नाटा छा गया। गोरी का अन्दर ही अन्दर कलेजा काँपने लगा।

चौहान के हाथों मे दूसरा धनुष ला कर दिया गया, वह भी प्रत्यंचा तनते ही टूट गया। इसी तरह चौहान ने चार धनुष तोड डाले।

तब सुलताने गजनी ने गर्ज कर कहा— 'जान पड़ता है चौहान

को धनुष तोडने का ही कमाल हासिल है, आवाज पर निशाना लगाना उसके बस का नही, तभी तो बार बार धनुष तोड देता है।"

उत्तर मे चौहान बहुत ही नम्रता से बोले— 'बच्चो के खेलने के धनुष बाण से शब्दवेधी निशाना नही लगता। यदि मेरा धनुष बाण मुझे दे दिया जाये तो मैं शर्त के अनुसार निशाना लगाने को तैयार हू।'

सुलतान ने हुकुम दिया कि दिल्ली की जीत के समय हमे बहुत से हथियार भी हाथ लगे थे, उनमे से चौहान का धनुष लाया जाये।

गोरी की आज्ञानुसार धनुष खोज कर लाया गया। वजीरे गजनी ने मन ही मन मे कहा— 'जो अन्धा और इतना कमजोर होते हुए भी मजबूत से मजबूत धनुष को भी तोड सकता है, वह अपना धनुष हाथ मे आते ही क्या नही कर सकता! खुदा खैर ही करे!'

और फिर प्रत्यक्ष मे बोले— 'बार बार मौका लेकर चौहान अपनी हार को टलाना चाहता है। पहला धनुष टूटते ही चौहान शर्त हार चुका, फिर भी बार बार मौका दिया। अब और मौका देने की जरूरत नही।'

बरदाई सब कुछ समझ गये। वे तुरन्त ही गम्भीरता से मुस्कराते हुए कहने लगे— 'वजीरे आजम बजा फरमाते हैं, फिर भी एक और मौका देकर देख लिया जाये।'

सुलतान का हुकुम हो गया कि कमाल दिखाया जाये। चौहान ने शक्ति का स्मरण कर प्रत्यचा पर तीर चढाया, और बरदाई ने दुर्गा के रूप से सम्पूर्ण सिद्धि की प्रार्थना करते हुए कहा— 'पृथ्वीराज चौहान! तुम्हारे दादा अर्णोराज, तुम्हारे पिता सोमेश्वर और तुम्हारे नाना अनगपाल स्वर्ग मे बैठे आज तुम्हारी वीरता को निहार रहे हैं। आज न जैसा आर गन्धा गजनी के दरबार मे खडा है, और शहाबुद्दीन